सोवियत

मध्य-एसिया

राहुल सांकृत्यायन

प्रकाशक
युनिवर्सल प्रेस,
१६, शिवचरन लाल रोड,
प्रयाग

प्रथम संस्करण १६४८
मूल्य पाँच रुपये

मुद्रक
पं० जयराम भार्गव
युनिवर्सल प्रेस,
प्रयाग

प्राक्कथन

"सोवियत्-भूमि" मैंने द्वितीय सोवियत् यात्रा से लौटकर १९३८ में लिखी थी। तीसरी यात्रा से लौटकर मैंने सोवियत् की नई प्रगति और महान् विजय के संबन्ध में और सामग्री देकर "सोवियत्-भूमि" के द्वितीय संस्करण को तैयार करने का निश्चय किया। इसी समय मैंने सोचा, सोवियत् मध्य-एसिया पर पृथक् पुस्तक लिखने की आवश्यकता है। १९१७ की महाक्रान्ति से पूर्व सोवियत् मध्य-एसिया की आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक अवस्था वही थी, जो कि हमारे देश की सदियों से रही है। सोवियत् मध्य-एसिया राजनीतिक दृष्टि से ज़ारशाही दासता के जूये के नीचे कराह रहा था। सामाजिक तौर से वह बहुत ही पिछड़ा भूखंड था। धर्मान्धता और मिथ्या-विश्वासों का वहाँ अखंड साम्राज्य था। अविद्या का घना अंधकार वहाँ छाया हुआ था। स्त्रियाँ तो मानो मानव-जाति का अंग थी ही नहीं। पर्दा और निरक्षरता ही का अभिशाप उनपर नहीं था, बल्कि ब्याह के नाम पर उनका खुला क्रय-विक्रय होता था। और आर्थिक अवस्था के बारे में पूछना ही क्या है, जब कि वहाँ कृषि में सतयुग के हथियार काम में लाये जाते थे, और उद्योग-धंदों के नाम पर तो युरोपीय सेठों का शोषण था—मिलें कारखाने नाम-मात्र के दो-चार खुले थे। हाँ, हस्तशिल्प बुखारा, समरकंद जैसे नगरों में कहीं-कहीं सिसक रहा था।

इस पुस्तक को पढ़ते वक्त पाठकों को अपने सामने भारत के भारतीय किसानों-मजदूरों की गरीब-नंगी-भूखी मूर्त्तियाँ अवश्य सामने रखना चाहिये। सोवियत् क्रान्ति ने हमारी ही जैसी जनता पाई थी, और उसकी उसने काया-पलट कर दी। कज़ाक, किर्गिज, उज्बेक, तुर्कमान और ताजिक जनता के लिये कल की कालरात्रि अतीत की बात हो गई, आज वह विश्व की उन्नत जातियों में सम्मिलित हैं। सदियों के पिछड़े दौड़ में आज वह हमें पीछे छोड़ आगे बढ़

गये । अपने पेट का सवाल क्या, अब तो वह दूसरे देशों को अन्न दे रहे हैं। उनके पर्वतों, रेगिस्तानों, झीलों और खेतों में छिपी अपार संपत्ति आधुनिक यंत्रों और विज्ञान की सहायता तथा नर-नारियों के परिश्रम से ऊपर निकाली जा रही है, जिससे वहाँ के ग्राम और नगर धन-धान्य-सम्पन्न होते जा रहे हैं। वर्षों नहीं, महीनों नहीं, दिनों और घंटों में वहाँ युगों का काम हो रहा है।

इस पुस्तक को पढ़ते वक्त पाठक यदि अपने भारत की ओर समय-समय पर दृष्टिपात करते जायँगे, और अपने राष्ट्र के नवनिर्माण का संकल्प लेकर पुस्तक को हाथ से छोड़ेंगे, तभी मैं अपने श्रम को सफल समझूँगा।

प्रयाग
बापू-निर्वाण छठाँ दिन

राहुल सांकृत्यायन

सोवियत् मध्य-एसिया

विषय-सूची

मध्य-एसिया के प्रजातन्त्र

(१) कजाकस्तान

१. भूमि और निवासी	७
२. सोवियत-क्रान्ति के बाद	१०
३. अल्मा-अता	१६
४. बयाबान में वनस्पति	१६
५. कृषि	१६
६. कपास की खेती	२२
७. कलखोज	२४
८. सोवखोज	२५
९. पशुपालन	२५
१०. उद्योग-धंधा	२८
११. ताँबा	३०
१२. पच्चीस साल में उन्नति	३३
१३. शिक्षा, संस्कृति	३५
१४. साइन्स-अकदमी	३७
१५. फेस्सिनकोफ	४३
१६. साहित्य	४४
१७. जम्बुल	४६
१८. संगीत और नाटक	४७
१९. प्रकाशन	५३
२०. अल्मा-अता	५३
२१. नई योजना	५५
२२. जंबुल की दो कवितायें	५९

(२) किर्गिजिस्तान

१. इतिहास	६४
२. इस्सिक्-कुल	६८
३. आगेके संकल्प	७०
४. कृषि	७२
५. उद्योग-धंधा	७४
६. विटामिन के जंगल और कारखाने	७५
७. शिक्षा	७७
८. कला	७८
९. साहित्य	८०
१०. साइन्स-सम्बन्धी अनुसंधान	८६
११. फ्रुंजे	९०
१२. नवीन पंचवार्षिक योजना	९२

(३) उज्बेकिस्तान
१. भूगोल ६५
२. इतिहास ६६
३. कृषि १०५
४. रेगिस्तान से युद्ध १०५
५. पशुपालन ११०
६. ताशकंद १११
७. समरकन्द ११३
८. नहरें ११६
९. उद्योग-धंधा १२४
(१) खाद का कारखाना १२४
(२) लोह-फौलाद १२६
(३) गैस-पाइप १२६
(४) कपड़ा कारखाना १२६
(५) बिजली १२८
१०. पार्लामेंट के मेम्बर १२८
११. स्वास्थ्य १३२
(१) म्युनिस्पल घर १३४
(२) गर्म मुल्क के रोगों की चिकित्सा १३६
१२. शिक्षा १३६
(१) साइन्स-अकदमी १४०
(२) ताशकन्द युनिवर्सिटी १४४
(३) हस्तलिखित ग्रन्थ १४४
(४) इतिहास-अध्ययन १४८
(५) सोग्दीय हस्तलेख १५४
(६) शिक्षणालय और प्रकाशन १६१
१३. कला १६४
(१) नाट्यकला १६५
(२) लोककला १६६
(३) कलाकारिणी तमारा १७१
१४. कराकल्पक स्वायत्त-प्रजातन्त्र १७७
१५. नवीन पंचवार्षिक योजना १८१
(४) तुर्कमानिस्तान
१. भूगोल १८५
२. इतिहास १८६
३. कृषि १८८
४. रेलवे किनारे के प्रदेश १८६
५. कराकुम् रेगिस्तान १९३
६. उद्योग-धन्धा १९६
७. स्वास्थ्य १९८
(१) अर्चमान १९९
(२) फीरोजा १९९
(३) खैराबाद १९९
(४) उफ़ा १९९
(५) बैरम अली २००
८. शिक्षा २००
(१) साहित्य २००
(२) साहित्यकार २०१
९. कला २०९
१०. अश्काबाद २०९

११. नवीन पंचवार्षिक योजना — २१२

(४) ताजिकिस्तान

१. भूगोल — २१५

२. इतिहास — २१६

३. कृषि — २२३

४. यातायात — २२६

५. गर्नो-बदख्शाँ — २३०

६. उद्योग-धन्धा — २३३

७. नवीन पंचवार्षिक योजना — २३३

८. शिक्षा — २३६

९. सदरुद्दीन ऐनी — २३८

१०. जातियों का मेल — २४५

११. कला और कविता — २५०

१२. ऊपरी जरफशां — २५४

१३. स्तालिनाबाद — २६१

१४. लेनिनाबाद — २६३

१५. देश-प्रेम की कवितायें — २६९

राहुल सांकृत्यायन (बंबई सम्मेलन दिसम्बर, १६४७)

मध्य-एसियाके पाँच प्रजातन्त्र

सोवियत् मध्य-एसिया में आमतौर से उज्बेकिस्तान, किर्गिजिस्तान, तुर्कमानिस्तान और ताजिकिस्तान, यह चार प्रजातन्त्र ही लिये जाते हैं, किन्तु भाषा, संस्कृति और भौगोलिक एकाबद्धता की दृष्टि से कज़ाकस्तान को भी हमें इसी में शामिल करना होगा। पाँचों प्रजातन्त्रों का सम्मिलित क्षेत्रफल १५,३८,००० वर्गमील है और जनसंख्या युद्ध से पूर्व १,६६,५८,००० थी। यह पाँचों ही प्रजातन्त्र सोवियत् संघ के १६ प्रजातन्त्रों में से हैं, जिन्होंने स्वेच्छापूर्वक संघ-बद्ध होना स्वीकार किया है और जिन्हें हर वक्त संघ से अलग होने का अधिकार है। यहाँ के प्रधान निवासी इस्लाम धर्म को मानते हैं; यद्यपि कहीं-कहीं कुछ ईसाई और यहूदी भी मिलते हैं। जाति के विचार से कज़ाक, किर्गिज, उज़बेक और तुर्कमान तुर्कजाति से सम्बन्ध रखते हैं। किर्गिज और कज़ाक की भाषा एक-दूसरे के बहुत नजदीक है, और इन दोनों की भाषा उज़बक से भी अपेक्षाकृत नजदीक है। तुर्कमान भाषा पश्चिमी तुर्की भाषा से सम्बद्ध है, जिनमें कि आज़ुर्बायजानी और टर्की की तुर्क भी सम्मिलित है। ताजिक ईरानी जाति के हैं और उनकी भाषा भी फारसी की ही एक स्थानीय भाषा है, जिसमें सोवियत् क्रान्ति से पहले कोई साहित्य लिपिबद्ध नहीं हुआ था। ताजिक भाषा की गलचा वह स्थानीय भाषा है, जो ईरानी के पास रहते भी कितनी बातों में संस्कृत के नजदीक है।

सोवियत् मध्य-एसिया भारत की तरह ही पिछड़ा हुआ देश था। वहाँ

भी क्रान्ति से पहले अज्ञान, मूढविश्वास और धर्मान्धता का अखण्ड राज्य था। यद्यपि क्रान्ति को तीस ही साल हुए हैं, लेकिन इन तीस सालों में इन जातियों के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में भारी क्रान्ति हुई है। ६३६४ % निरक्षर जनता की जगह अब कुछ बूढ़ों बूढ़ियों को छोड़कर सारी ही जनता साक्षर है। मूढ विश्वास वहाँ परिहास की चीज बन गये हैं और अब कोई वहाँ हाथ जन्मकुण्डली दिखाने या टोना-मन्तर कराने के लिये जोतिसिया और ओझा सयानों के पीछे पीछे नहीं दौड़ता फिरता। और धर्मान्धता ? हाँ, धर्मान्धता की लाश भी फूँकी जा चुकी है —यद्यपि साँप की तरह उसने आसानी से प्राण नहीं छोड़ा।

मध्य-एसिया की यह जातियाँ भारतीयों से बहुत समानता रखती थीं। वह जारशाही निरंकुश शासन की भी सदियों शिकार रहीं। उस भूमि में समाजवाद, वैज्ञानिक खेती और उद्योगीकरण की इतनी भारी उन्नति हम भारतीयों के दिलों में भी आशा का सचार करती है। कोई जाति किसी दूसरी जाति की सम्पूर्णरूपेण नकल करके सफलता लाभ नहीं कर सकती। हम भी इसी नियम के साथ मध्य एसिया के प्रजातन्त्रों से बहुत सी बातें सीख सकते हैं।

धर्मान्धता के हटने का मतलब यह नहीं, कि वहाँ से धर्म उठ गया है। अब भी यह जातियाँ इस्लाम धर्म को मानती हैं। इस्लाम में रहने के समय जो कला और संस्कृति की सृष्टि हुई, अपने को उसका दायभागी समझती है। आज जैसा इस्लामिक धार्मिक संगठन मजबूत कभी नहीं था। सारे धर्म के कामों को सुचारुरूपेण चलाने, भावी धर्माचार्यों की शिक्षा देने, धार्मिक इमारतों के निर्माण और मरम्मत करने, धार्मिक पुस्तकों के लेखन व प्रकाशन करने के लिये जन-निर्वाचित धर्म-सभा है, जिसका प्रमुख शेखुल् इस्लाम सारे मध्य-एसिया में अत्यन्त सम्माननीय व्यक्ति है—जनता ही नहीं सरकार में भी उसका सम्मान किया जाता है। विद्या और आचरण में

२. ईगर और लोला सांकृत्यायन

४. प्रेसीडेंट अब्दिसमेत कज़ापयेफ़
कज़ाकस्तान

३. लेनिनग्राद विश्वविद्यालय के भारती विद्याध्यापक बैठे (बायें से)
सुलेकिन, राहुल, बरन्निकोफ़, दीना
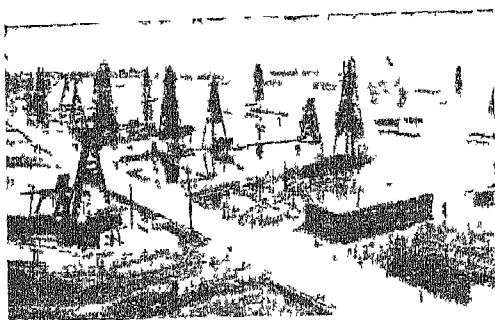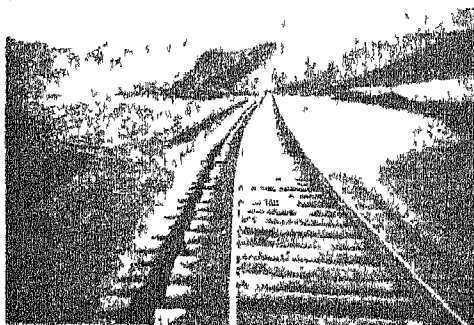
५. कजाकस्तान (पश्चिम)—एम्बा के तेल कूप (पृष्ठ ११)

६. कजाकस्तान—तुर्कसिब रेलवे (पृष्ठ ११)

७. कजाकस्तान—बलखाश के स्वास्थ्यालय में (पृष्ठ ११)

सबसे योग्य व्यक्ति ही उस स्थान के लिये चुना जाता है। शेखुल्-इस्लाम की कौंसिल में विद्वान् और धार्मिक व्यक्ति होते हैं।

यद्यपि सारा मध्य-एसिया हजार साल से इस्लाम-धर्म में दीक्षित हुआ। यह दीक्षा शान्तिमय तरीके से नहीं हुई, खासकर शासकों की तरफ से। धर्मप्रचार तो एक आड़ थी, जिनके नाम पर लोगों को लूट के लिये उत्तेजित कर देश-विजय में सहायक बनाया जाता रहा। मध्य-एसिया में—विशेषकर आधुनिक कजाकस्तान में घुमन्तू जातियाँ ही ज्यादा रहती रहीं, किन्तु हिन्दुकुश पर्वत माला से सिरदरिया की कछार तक का भूभाग अपनी सभ्यता की प्राचीनता और विकास में अपने भाइयों—भारतीयों से पीछे नहीं रहा। अरबों ने सदियों तक वक्षु, गंगा की इस समृद्ध भूमि को लूट और जनसंहार का अखाड़ा बनाया। ताजिकों के पूर्वज सुग्ध (सोग्द) बहुत वीर थे। उन्होंने अपनी स्वतंत्रता के लिए अपने खून को पानी की तरह बहाया, किन्तु सुसंगठित विदेशी लुटेरों से अपने को बचा न सके। अरबों के पहुँचने से पहले उत्तर से तुर्क आकर यहाँ के शासक बन चुके थे और धीरे-धीरे ये घुमन्तू विजेता सुग्ध की सभ्यता और संस्कृति में दीक्षित हो गये थे। यहाँ बहुत से बौद्धों के विहार और पारसियों के अग्नि-मन्दिर थे। फाहियान और युन्चांग ने अपनी यात्राओं में इसका उल्लेख किया है। बुखारा में एक बहुत बड़ा बौद्ध विहार था। यह विहार शब्द ही तुर्की उच्चारण के अनुसार बुखार और बुखारा बन गया। अरबों ने इन पुराने देवालयों का चिन्ह भी न रहने दिया। लेकिन सुग्ध-सभ्यता बिल्कुल लुप्त न होने पाई। इसका पूरा इतिहास हम अपनी दूसरी पुस्तक में लिख रहे हैं। इसलिए यहाँ अधिक कहने [illegible]वश्यकता नहीं है।

सुग्ध और तुर्क मुसल्मान हो गये। अब तो धर्मान्धता की जरूरत नहीं थी, क्योंकि उस भूमि में कोई "काफिर" नहीं रह गया था, लेकिन बात ऐसी नहीं हुई। अब धर्मान्धता ने मुसलिम सम्प्रदायों का पल्ला पकड़ा और सदियों तक शीयों को काफिर होने का फतवा दे बुखारा और खीवा के बजारों

में बेंचा जाता रहा। और भी छोटी-छोटी साम्प्रदायिक बातों को लेकर धार्मिक खून-खराबियाँ होती रहीं। हर एक धर्म-सम्प्रदाय अपने अनुयायियों को ही सच्चा मुसलमान मानता और दूसरों को हर तरह से दबाने की कोशिश करता। आज मध्य-एसिया में इन खूनी झगड़ों और पारस्परिक विद्वेष का नाम भी नहीं रह गया। वहाँ के मुसल्मान बहुत उदार विचार रखते हैं। धर्म ने भी अपना क्षेत्र धार्मिक क्षेत्र तक सीमित रखा है, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में वह दखल नहीं देता, भारत की तरह राष्ट्रीयता में टांग अड़ा उसे छिन्न-भिन्न करने की कोशिश नहीं करता। किर्गिज, कज़ाक, उज्बेक, तुर्कमान और ताजिक अपनी-अपनी भाषा, इतिहास, कला और संस्कृति में पक्के राष्ट्रीय हैं। वस्तुतः राष्ट्रीयता उनके लिये मुख्य चीज है, धर्म वैयक्तिक विश्वास है, जिसे मानने के लिये हर एक व्यक्ति स्वतंत्र है। सरकार किसी के विश्वास और पूजा में हस्तक्षेप नहीं करती, और धर्म ने भी कार्यरूप में उसे विश्वास दिला दिया है कि वह सरकार के आर्थिक, सामाजिक और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के साथ समाजवाद को इस्लाम का शत्रु नहीं मानता, बल्कि उसे ही सर्वश्रेष्ठ जन-कल्याण का प्रोग्राम मानता है। उसे सरकारी खजाने में एक भी पैसा पाने की न आशा है और न उसकी जरूरत ही है। धर्म-भक्त स्वयं वैयक्तिक रूप से दान दे देते हैं, जो कि उसके व्यय के लिये पर्याप्त है।

सारे इस्लामिक काल में स्त्रियों की दशा दिन-प्रतिदिन गिरती गयी और वह एक तरह से क्रीत दासियाँ बन गईं। उनको कोई अधिकार न था। पुरुषों की आज्ञा मानना, उनके कठोर नियंत्रण और दण्ड को चुपचाप सहना यही उनके लिये सर्वोत्कृष्ट कर्त्तव्य था। कुछ भी खाता-पीता परिवार होने पर शरीर से स्त्रियों को घर की चहारदिवारी में बन्द कर दिया जाता। बाहर निकलने पर फरंजा (बुर्का) से सारे शरीर को ढाँककर बोराबन्द होना पड़ता। उनके लिये साक्षर और शिक्षित होने का क्या सवाल हो सकता था शिक्षा तो भारी अनिष्ट का कारण समझी जाती थी।

लेकिन यह १६१७ के पहले की बात है। आगे भी एक ही दिनों स्त्रियाँ मुक्त नहीं हो गईं। उन्हें इसके लिये काफी संघर्ष करना पड़ा। दूसरे समय यह संघर्ष सफल नहीं हो सकता था। लेकिन अब तो सोवियत् क्रान्ति की छत्र-छाया उसके ऊपर थी। बड़े-बड़े शोषकों और उत्पीड़कों का देश से उच्छेद हो गया था। धर्मान्धता अन्तिम श्वास तोड़ चुकी थी। फिर स्त्रियों में स्वतन्त्रता की लहर को कौन रोक सकता था। फरंजा गया। स्त्रियों की परतंत्रता विदा हो गई। उन्हें पुरुषों के समान अधिकार मिला। बहु-पत्नी-विवाह निषिद्ध और कानून से दण्डनीय कर दिया गया। आजकल मध्य-एसिया की नारी मुक्त है। तरुण-पीढ़ी बूढ़ी दादियों से भी उस काले युग की कहानियों को आश्चर्य के साथ सुनती है। कुछ ही समय के बाद इन कहानियों के वास्तविक होने पर भी उन्हें सन्देह होने लगेगा। आज वहाँ की नारियाँ हजारों की तादाद में इंजीनियर, डाक्टर, अध्यापक का काम कर रही हैं। वहाँ का रंग-मंच बहुत विकसित है और ताशकन्द की "नवाई रंगशाला" की तरह विशाल और भव्य नाट्यशालायें बनी हैं। आज से १५-१६ साल पहले रंग-मंच पर आनेवाली प्रथम कलाकार तरुणी की छाती में छुरा भोंका गया था और कोई पिता या भाई अपनी बेटी-बहन को रंग-मंच पर आकर अभिनय, नृत्य और गान करते देख नहीं सकता था। आज यह अभिमान की चीज है। तमारा खानम् अपने नृत्य-कला-द्वारा सारी जनता के प्रेम और आदर का पात्र है। सारा उज्बेकिस्तान उसके गीतों को सुनने के लिये लालायित रहता है। हलीमा नासिरोवा अपने श्रेष्ठ नृत्य के लिये जन-सम्मानित है। मध्य-एसिया की नारी आज कलखोजों और जिला सोवियतों की प्रधान है, प्रजातन्त्र की मंत्री है और कितनी ही सारे सोवियत् की महापार्लियामेंट की मेम्बर हैं।

हमारे लिए अब यह ईर्ष्या की चीज नहीं है। हमारा स्वतन्त्र देश अब उन सारी बुराइयों को हटाकर आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सभी क्षेत्रों में

समृद्ध और उन्नत होने की क्षमता रखता है। यहाँ पाठकों के सामने हम मध्य-एसिया के जीवन की थोड़ी सी झलक रखना चाहते हैं। हमें आशा है कि कश्मीर की सीमा से सात मील पर शुरू होनेवाले नवीन मध्य-एसिया के प्रजातन्त्रों और उनकी नवीन जनता हमारे लिये स्वप्न-लोक की चीज नहीं रहेगी। अधिकाधिक भारतीय वहाँ जाकर उनके जीवन को आँखों से देखेंगे और प्रेरणा प्राप्त करेंगे।

१

कज़ाकस्तान प्रजातन्त्र

क्षेत्रफल	१०,५६,०००
जनसंख्या	६१,४६,०००

राजधानी अल्माअता, जनसंख्या २,३०,०००

भूमि और निवासी—

मध्य-एसिया की सबसे बड़ी दो नदियों में एक सिर दरिया उत्तर, पश्चिम में वोल्गा, पूर्व में चीनी तुर्किस्तान और उत्तर में सिबेरिया में घुसा यह विशाल देश है। यह मध्य-एसिया में क्षेत्रफल में सबसे बड़ा प्रजातंत्र है अर्थात् कुल १५,३४००० वर्गमील में ३/४ क्षेत्रफल कजाकस्तान का है। भूमि का स्वरूप चित्र-विचित्र है। पूर्व दक्षिण में हिमालय की तरह सदा हिमाच्छादित शिखरवाले कितने ही पहाड़ हैं, जिनमें मीलों लम्बी हिमानियाँ हैं। इन्हीं से चू, तलस और सिर दरिया जैसी बड़ी नदियाँ निकलती हैं। दूसरी तरफ सूखी मरुभूमि है। एक जगह कजाकस्तान के इन हिमालयों में भी भारी वर्षा होती है, तो दूसरी तरफ वर्षा और पानी का पूरा अभाव है। हरे-भरे पहाड़ और बहते निर्झर एक जगह और दूसरी जगह धूप से संतप्त और नमकवाली दलदलें हैं। प्रजातन्त्र का ६०%—३८,५०,००,००० एकड़ जमीन में पहाड़ और बयाबानी चारागाहें हैं। ५ करोड़ एकड़ भूमि खेती के लिये उपयुक्त है।

कज़ाकस्तान के पहाड़ों और अधित्यकाओं में अपार खनिज-सम्पत्ति भरी हुई है—१ खरब टन कोयला, १ अरब टन से अधिक तेल, सोने, सीसे, रांगे, तांबे, निकल (गिलट), क्रोमाइट और फ़ास्फोराइट की अपार निधि,

साथ ही लोह और अल्मोनियम, टिन और दूसरी बहुमूल्य धातुओं का भी भारी खजाना इस भूमि के भीतर भरा हुआ है। खनिज-नमक और गृह-निर्माण-सामग्री का भण्डार तो अकूत है।

जारशाही जमाने में कजाकस्तान की खनिज-सम्पत्ति अछूती सी रह गयी थी, सिर्फ सीसे, ताँबे, कोयले की छोटी-छोटी खानें पुराने ढंग से चालू थीं, और पुराने ढंग से ताँबे, सीसे और सोने की खानें आज से ४ हजार वर्ष पहले भी चालू थीं। भारत और सारे पश्चिमी एसिया का सोने का सबसे बड़ा उद्गम-स्थान कजाकस्तान की यही खानें थीं। इस सुवर्ण-पथ के रुक जाने पर सोने का अकाल सा पड़ जाता था। इन खानों के सोने के बारे में कितनी ही दन्त-कथाएँ भी प्रसिद्ध थीं। भेड़ों के बराबर की चींटियाँ जमीन में से खोदकर स्वर्ण-कण को जमा करती हैं, इस कहानी को ग्रीक लेखकों ने वर्णित किया। ईसा-पूर्व दूसरी शताब्दी में प्रबल हूण जाति को चीनियों ने छिन्न-भिन्न करने में सफलता पाई। हूणों का एक भाग चीनियों के अधीन हो गया और दूसरे भाग (पश्चिमी शाखा) ने चीन के जुए को गर्दन पर रखने से इनकार कर दिया। संघर्ष से असफल हो उसे पश्चिम की ओर भागना पड़ा। इन्हीं हूणों ने दो सहस्राब्दियों से पहले शक घुमन्तुओं को अपनी ग्राम-भूमि छोड़ने के लिये मजबूर किया।

शकों के यहाँ रहने से यह प्रदेश शकद्वीप के नाम से प्रसिद्ध था। वस्तुतः घुमन्तू शकों की चारण-भूमि ईसा-पूर्व दूसरी शताब्दी तक पूर्व में गोबी की मरुभूमि से पश्चिम में कार्पेथीय पर्वतों तक थी और उस समय तक हम इस महाभूखण्ड को महाशकद्वीप कह सकते हैं। पूर्वी शकद्वीप में उस समय सोना-ताँबा निकालने का काम यही शक करते थे। शक यद्यपि १३० ईसा-पूर्व में इस भूमि को करीब-करीब छोड़ने के लिये मजबूर हुए, किन्तु इससे पहले ही उनके स्वर्ण-खनियोंवाले प्रदेश पर पूरब से हूणों का प्रहार होने लगा था और १७५ ईसा-पूर्व के कुछ पहले ही स्वर्ण-वाणिज्य का प्रवाह

दक्षिण से मोड़कर चीन की तरफ फेर दिया गया था। इससे यवन-राज्य और भारत में सोने की कमी हो गई थी। ग्रीक-बाख्त्रिया (बाह्लीक) के यवन राजा यूथीदेमो ने १७५ ईसा-पूर्व के करीब सिर-दरिया के उत्तर सेना ले अभियान किया कि स्वर्णपथ को फिर मुक्त कर दें, किन्तु उसे इसमें सफलता नहीं हुई। यहाँ के रहनेवाले शकों के बारे में चीनी ने सुना था "वह लोग बहुत लम्बे होते हैं, उनके बाल लाल और आँखें नीली होती हैं।" लेकिन जैसा कि पहले कहा, हूण इस आदिम शकद्वीप में पहुँचे और शकों को भारी संख्या को सिर-दरिया से दक्षिण की तरफ भागना पड़ा। बस्तियों में बसे कुछ शक वहाँ रह गये थे, जो पीछे हूणों की सन्तान तुर्कों के प्रहार से अपनी भूमि छोड़ सिर-दरिया पार हो पाँचवीं सदी के मध्य में दक्षिण की ओर बढ़े। यह हूण नहीं शक थे, किन्तु पाँच सदियों तक हूणों के शासन में रहने तथा हूण-चीनी संस्कृति से प्रभावित होने के कारण लोगों ने इन्हें भी हूण नाम दे दिया, किन्तु हूणों की अपेक्षा नीली आँखों, लाल बालोंवाले की इन सन्तानों को अधिक श्वेत देखकर श्वेत-हूण कहा जाने लगा। वस्तुतः ये शक थे। बढ़ते-बढ़ते इनका राज्य ग्वालियर और सागर-दमोह तक फैल गया। तोरमान इन्हीं का राजा था, जिसके पुत्र मिहिरकुल ने ग्वालियर में सूर्य-मन्दिर बनवा अपना अभिलेख लिखवाया। वस्तुतः दूसरी शताब्दी ईसा-पूर्व से भारत में शक जातियों के आगमन का जो सिलसिला शुरू हुआ था, उसका अन्त तोरमान और उसके पुत्र मिहिरकुल के शासन-काल के साथ समाप्त हुआ।

शकों के हट जाने पर भी कज़ाकस्तान की ताँबे, सोने की खानों में पुराने ढंग से काम होता रहा। जारशाही जमाने में उनमें थोड़ा ही सुधार हुआ। यह भी एक स्मरणीय बात है कि ईसा की पाँचवीं सदी में अन्तिम बार शक जो अपने आदि शकद्वीप को छोड़ने के लिये मजबूर हुए, उसकी बारह शताब्दियों बाद फिर उन्हीं शकों की पश्चिमी शाखा की सन्तान रूसी

शकद्वीप पर अधिकार करते हैं।

रूसियों के आने के समय अब भी इस विशाल देश के लोग घुमन्तू चरवाहे थे। जाति से ये तुर्कवंशज थे, जिनमें मंगोलों का बहुत कम प्रभाव और रक्त था। अपने साहसिक आक्रमणों और लूटों के कारण अरबों में ये कजाक के नाम से प्रसिद्ध हुए, जो कि अब उनका राष्ट्रीय नाम बन गया है।

घुमन्तू कजाकों को जमीन की उर्वरता का उतना महत्व मालूम न था। जो थोडी-बहुत खेती भी करते थे, उन पर रूसी शासन के स्थापित होने के बाद प्रहार होना शुरू हुआ। बहुत से रूसी उक्रइनी किसानों ने जाकर जंगल और काली मिट्टीवाले उत्तर-पूर्वी प्रदेश में खेती शुरू की। कजाकों को उनके खेतों से वंचित किया गया। वह अपने पशुओं और तम्बुओं को लिये मरुभूमि और बयाबान में घूमने लगे और हर जाड़े में कजाकस्तान की निष्ठुर सर्दी और चारे की कमी से उनके हजारों पशु मर जाते थे।

कजाक जनता में २'३% आदमी ही लिख-पढ़ सकते थे।

सोवियत् क्रान्ति के बाद

क्रान्ति के बाद हजारों वर्षों से पिछड़े कजाकों ने बड़ी तेजी से प्रगति की। क्रान्ति ने उन्हें जारशाही सरकार के निरंकुश शासन से ही मुक्त नहीं किया, बल्कि उनकी भूमि को उनके हाथों में लौटा दिया। १९२० में कजाकों की भूमि पर कजाकस्तान स्वायत्त सोवियत् प्रजातन्त्र कायम हुआ। कजाक भाषा उनकी राष्ट्र-भाषा बनी। कजाक-भाषा के लिए एक लिपि दी गयी और अब तक लिखित साहित्य से वंचित-सी कजाक-भाषा ने सोवियत् की उन्नत साहित्यिक भाषाओं में अपना स्थान प्राप्त किया। निरक्षर जंबुल सिर्फ कजाकस्तान का राष्ट्रकवि ही नहीं बल्कि सोवियत् संघ के महान् कवियों में गिना गया।

१९३६ से कजाकस्तान स्वायत्त प्रजातन्त्र १६ संघ प्रजातन्त्रों में गिना

जाने लगा। अब उसे अपनी सेना, विदेशों से दौत्य-सम्बन्ध रखने का ही अधिकार नहीं है, बल्कि सोवियत् संघ में रहना न रहना यह भी उसकी इच्छा पर निर्भर है।

कज़ाकस्तान की ६१३ लाख जनसंख्या में ६०% कज़ाक हैं और बाकी में किर्गिज़, उज्बेक, कराकल्पक, तुंगन, उइगुर, रूसी तथा उक्रइनी भी हैं।

कज़ाक आज सोवियत्-संघ का सबसे बड़ा पशु-पालन का प्रदेश है। लोह-भिन्न धातुओं—ताँबा, सीसा आदि का भी सबसे बड़ा उद्‌गम-केन्द्र है, और कोयला उत्पादन करने में सोवियत् में इसका तीसरा स्थान है।

सीसा, राँगा, ताँबा, गिलट, सुर्मा, तुंगस्तेन और टिन तैयार करने के प्रकांड कारखाने तैयार हुए हैं। कोयले की खानों की—जो अधिकतर करागन्दा में अवस्थित हैं—उपज क्रान्तिपूर्व से सौ गुना बढ़ गई। कास्पियन के उत्तर-पूर्व (एम्बा) में बहुत से तैलक्षेत्र काम कर रहे हैं। फास्फोराइट से खनिज खाद तैयार की जाती है। मशीन बनाने के कई कारखाने हैं और बहुत से शहरों में बिजली पैदा करने के बड़े-बड़े कारखाने हैं। युद्ध के समय लोहमिश्रित धातुओं के निर्माण के लिये एक प्रकांड कारखाना बना है—कज़ाकस्तान में गोला-बारूद और हथियार बनाने के कई कारखाने हैं।

१९२७ में तुर्क-सिबेर रेलवे का निर्माण आरम्भ हुआ और १९३२ में खतम हुआ। यह एक बहुत लम्बी रेलवे है। १९२४ से १९३७ तक ६ अरब ३८ करोड़ ४१ लाख ४२ हजार रूबल पूँजी कज़ाकस्तान में लगाई गई। प्रथम पंचवार्षिक योजना में ७४ करोड़ ७० लाख रूबल पूँजी लगाई गई थी। इसी समय करागन्दा में कोयले का नया केन्द्र बनना आरम्भ हुआ और चिमकन्द में राँगे का कारखाना बना। बल्खाश का प्रकांड अ-लौह कारखाना तथा अल्ताई में मिश्रित धातुओं के कारखाने बने। एक करोड़ पशु कज़ाकस्तान के चरागाहों में चरते हैं और अब पहले की तरह

१०. कजाकस्तान —अल्मा अता मजूरों के वासगृह (पृष्ठ १६)
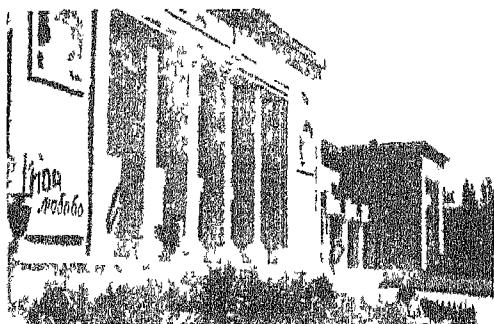
११. कजाकस्तान—अल्मा-अता सिनेमा "अलाताउ" (पृष्ठ १७)
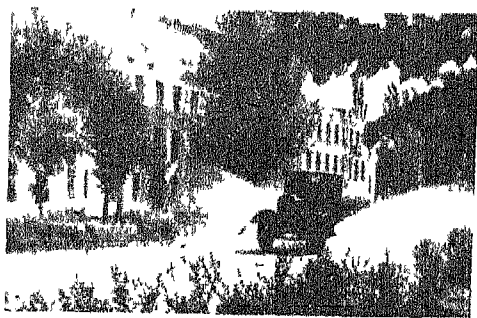
१२. कजाकस्तान—अल्मा-अता नगर में छिड़काव (पृष्ठ ५३)

नई सिबेरिया रेलवे—*ट्रान्स-साइबेरियन* रेलवे पर भार बहुत बढ़ गया है, और कितने ही सालों से एक दूसरी लाइनो बनाने का विचार चल रहा था। १९४६ से वह काम शुरू हो गया और **बशकीरिया, दक्षिणी ऊराल, उत्तरी क़ज़ाकस्तान** के बयाबान एवं **अल्ताई** तथा **गर्नयाशोरिया** होते वोल्गा-उपत्यका को **येनीसई** उपत्यका को मिलाने का काम आजकल जारी है। इस लाइन में पहले की भी कुछ शाखायें मिला ली जायेंगी। सारी लाइन ४००० किलोमीतर (करीब ३००० मील) होगी। इसके रास्ते में जंगल, दलदल, मैदान, पहाड़, नदियाँ, फिर वृक्षों का अनन्त बन आयेगा। पुरानी ट्रान्ससिबेरियन रेलवे का निर्माण १८९१ में शुरू हुआ और उसके पूरा होने में १५ साल लगे थे।

कुज़्बास और ऊराल की खानों और कारखानों के अभूतपूर्व विकास से पुरानी रेलवे लाइन पर भारी भार पड़ा है इसलिए इस नई रेलवे लाइन के बनाने की आवश्यकता पड़ी। १९४६ में ही बर्नौल को स्तालिन्स्क से मिलाने का काम पूरा हो गया। चतुर्थ पंचवार्षिक योजना का एक बड़ा काम चार हजार किलोमीतर इस रेलवे लाइन का पूरा करना है। पश्चिम से कज़ाकस्तान के दक्खिन होते तुर्क-सिबेर रेलवे ने कज़ाकस्तान के गले में माला की तरह रेलवे का एक हार डाल दिया है। अब उसके उत्तर से उसी हार की दूसरी कड़ी जाकर माला को पूरा कर देगी।

साढ़े दस लाख वर्गमील में ६१ लाख की बस्ती बहुत कम है, किन्तु कज़ाकस्तान की सारी भूमि अपार धातुओं से भरी है। इसलिये वहाँ रेलों का जबर्दस्त जाल बिछाना जरूरी था। **मास्को** से मध्य-एसिया आनेवाली रेलवे पर कज़ाकस्तान का **अक्त्यूबिन्स्क** का नगर पड़ता है। यहाँ से रेल **मुगाग्यार** की नंगी पहाड़ियों को पार करती है। यह पहाड़ियाँ दक्षिणी ऊराल का अंग हैं। फिर रेल **अरालसागर** के किनारे

पहुँचती है। रेगिस्तान के बीच में नीले जल की यह विशाल झील अब मछली नहीं, प्रचुर परिमाण में नमक भी देती है। मध्य-एसिया की बड़ी नदी सिरदरिया अराल में आकर गिरती है। किज्लउर्दा होते रेल सिरदरिया की उपत्यका में ऊपर की ओर बढ़ती है। यह तूरान का मैदान है। मैदान में जहाँ-तहाँ घास है। नदी के किनारे सरकन्डे के जंगल हैं। जहाँ-तहाँ दलदल और दूर बालू के टीले हैं। यह भूमि इतिहास के आरम्भ के पहले से ही घुमन्तुओं की विचरण-भूमि थी। इसी रास्ते आर्यों का काफिला मध्य-एसिया में दाखिल हुआ था। इसी रास्ते उनके बन्धु शक पश्चिम से पूरब होते गोबी तक पहुँच गये, फिर ईसा-पूर्व दूसरी सदी में हूणों के काफिले ने पूरब से पश्चिम की ओर यात्रा शुरू कर यूरोपाभिमुख प्रस्थान किया। लेकिन अब का यह रेलवे-काफिला पहले से बिलकुल ही भिन्न है। सिरदरिया (श्यामा नदी) के किनारे अब इस रेलवे लाइन ने और भी नई नई बस्तियाँ आबाद कर दी हैं। लेकिन अब भी विस्तृत भूमि खाली पड़ी है। स्टेशनों के पास हरियाली दिखलाई पड़ती है। जाड़ों में बरफ कम पड़ती है। यद्यपि सर्दी काफी होती है और जिस वक्त उत्तराखंड से हवा आती है तो टेम्परेचर और नीचे गिर जाता है। गर्मियों में डब्बे के भीतर गर्मी ४५° डिग्री सेन्टिग्रेड (१०८°–११०° डिग्री फॉर्नहाइट) तक चली जाती है। सिरदरिया के किनारे अब चावल की खेती जहाँ-तहाँ होने लगी है। यह खेती और भी बढ़ जायेगी, जब सिर दरिया से निकलनेवाली विशाल नहर तैयार हो जायेगी।

कज़ाकस्तान में दाखिल हो उत्तर-पूर्वाभिमुख तीन दिन तीन रात चलने के बाद हमारे सामने दक्खिन की पहाड़ियाँ आती हैं। त्यानूशान् की—जो कि हमारे हिमालय के पश्चिमी छोर की उत्तर की तरफ बढ़ी बाँह है—पश्चिमी बाँह यह पहाड़ियाँ हैं। एक रेल दक्खिन में ताशकन्द न पहुँचकर अरिसी जंक्शन से पूरब की ओर मुड़ जाती है। अब कुछ दूर तक पहाड़ के उत्तर-उत्तर उस पथ पर जाते हैं; जिस पर सातवीं सदी में युन्चांग ने यात्रा की

थी। चिमकन्द यूरोप तक में भी सीसे का भारी औद्योगिक केन्द्र है। और आगे जम्बुल नगर आता है। जम्बुल चीनी का बहुत बड़ा केन्द्र है। यह नाम यद्यपि हाल में मरे महान् कजाक कवि जम्बुल के नाम पर पड़ा है—नगर ही नहीं जिले का नाम भी जम्बुल है—लेकिन पहले भी यह नगर दूसरे नाम से प्रसिद्ध था, जिस वक्त युन्-चाङ यहाँ आया था। जम्बुल से पश्चिम-उत्तर करातउ खनिज खाद का इतना बड़ा केन्द्र है, कि सारे मध्य-एसिया को खनिज खाद्य दे सकता है। लुगोवोइ स्टेशन से एक शाख-लाइन किर्गिजिस्तान की राजधानी फ्रुन्जे नगरी को जाती है, और अरिसी से आरम्भ होनेवाली तुर्क-सिबेर लाइन सीधे चू नदी के तट पर पहुँचती है। चू नदी त्यानशान से निकलनेवाली बड़ी नदी है और शायद किसी वक्त सिर-दरिया से इसका संगम होता था, लेकिन अब घग्गर (प्राचीन शरावती या सरस्वती) की तरह यह रेगिस्तान में विनष्ट हो जाती है। किसी वक्त शक लोग इसके किनारे नम्दे के उन्हीं लम्बे बूटों को पहने अपने पशुओं को चराते-फिरते थे, जिन्हें हम शकराज कनिष्क की मथुरावाली प्रतिमा और अपने यहाँ की हजारों सूर्य-मूर्तियों के पैरों में देखते हैं। फिर ईसा-पूर्व पहली सदी में यहाँ हूणों ने अपना डेरा डाला और पाँचवीं, छठीं, सातवीं ईस्वी शताब्दी में हूणों के वंशज तुर्कों ने अपने नगर बसाये। उनकी राजधानी बलासगुन इसी के किनारे थी। मंगोलों के आक्रमण तक चू-उपत्यका समृद्ध नगरों और हरे-भरे गाँवों से सुशोभित थी। सात शताब्दियों के बाद चू का भाग्य फिर से जगा है। चू या सू तुर्की और मंगोल भाषा का शब्द है। तिब्बती भाषा में भी नदी और जल को छू कहते हैं। चू-उपत्यका छोड़कर आगे एस्पे स्टेशन है, जो अदूर भविष्य में बलखाश की रेल से मिलाया जाने वाला है और पक्की मोटर की सड़क तो आज भी इसे बलखाश से मिलाये हुए हैं। और पूरब जाने पर कजाकस्तान की राजधानी अल्मा-अता आती थी। अल्मा-अता का अर्थ है सेबों का बाप। और आज भी वह अच्छे सेबों के लिये मशहूर है।

तरस नदी से ही प्रसिद्ध सप्तसिन्धु (सेमिरेच्ये) प्रदेश शुरू होता है और अल्माअता से आगे तक चला जाता है। अतिप्राचीन काल में भी यह इसी नाम से प्रसिद्ध जान पड़ता है। अपनी अनेक नदियों के कारण यह देश हरा-भरा माना जाता रहा। अल्मा-अता से रेलवे लाइन उत्तर की ओर मुड़ती बल्खाश महासरोवर के किनारे बुर्लिउ-तोबे स्टेशन पर पहुँचती है। बल्खाश के इस छोर के साथ सप्तसिन्धु का अन्त होता है। आज सप्तसिन्धु अपने मेवों, मधु, गेहूँ और पिछले कुछ सालों से चीनीवाले चुकन्दर तथा तम्बाकू की उपज के लिये भी प्रसिद्ध है।

अल्मा-अता

राजधानी अल्मा-अता १६३६ की जनगणना के अनुसार २,३१,००० आबादी का शहर है। सोवियत् संघ के सबसे सुन्दर शहरों में इसकी गिनती होती है। पीछे की तरफ सदा हिमाच्छादित और नीचे की तरफ देवदारु वन-विभूषित पर्वत-शिखर है। स्वयं नगर सेबों के बागों से ढका सा मालूम देता है। बर्नी का वह छोटा सा कसबा और धूल उड़ती गलियाँ और सड़कें आज कहाँ हैं? अब उसने अपना पुराना नाम अल्माअता यदि फिर से धारण किया है, तो नवीनता में वह नवीनतम नगर है। सदियों से घुमन्तू जीवन बितानेवाले कजाक लोग अब नगरों और गाँवों में बस गये हैं। उनके घोड़ों और ऊँटों की यात्राओं जगह रेलों, मोटरों और विमानों ने ले लिया है। अल्मा-अता ऐसी जगह पर अवस्थित है, जहाँ भूकम्प आया करते हैं। इसलिये यहाँ की इमारतें उसका ख्याल करके बनाई गई हैं। इसकी चौड़ी और सीधी सड़कें अस्फाल्ट-बिछी हुई हैं, जिनके किनारे लम्बे-हरे वृक्ष लगे हुए हैं। रेलवे स्टेशन राज-प्रासाद सा मालूम होता है। फिर कजाक सरकार के विशाल सौधों के बारे में कहना ही क्या है। कजाकों की भूमि में सड़कों पर मोटर-लारी को छिड़काव करते हुए देख आश्चर्य होना ही चाहिये। आखिर ३० साल पहले इसकी क्या संभावना हो सकती थी। नगर के विशाल उद्यान में

१७. कजाकस्तान (दक्षिण) - मिरया तश्तियेवा. "अतत्" कलखोज के तम्बाकू के खेत में (पृष्ठ १८)

१६. कजाकस्तान कल्बाइ उस्पेवा, कराम के कलखोज में (पृष्ठ २२)

१८. कजाकस्तान (भूखा बयाबान)— किरोफ नहर के खनक कलखोजी ज० शाफरोफ़, स० सोल्मानोफ़ और अ० अनशोफ़ (पृष्ठ २०)

२०. कज़ाकस्तान (उत्तर)—अल्माअता जिले का "प्राचीप्रकाश" कलखोज (पृष्ठ २४)

२१. कज़ाकस्तान (दक्षिण)—ऊंट-पालन (पृष्ठ २५)

२२. कज़ाकस्तान (पश्चिम)—कलखोज "उयान" के घोड़े (पृष्ठ २८)

बयाबान में वनस्पति

कजाकस्तान की विस्तृत भूमि वृक्षहीन, निर्जन बयाबानों से भरी हुई है, किन्तु समाजवादी क्रान्ति ने प्रकृति के परिवर्तन का जो विशाल काम शुरू किया है, उसमें इस बयाबान को वनों से ढँकना एक है और १९६० तक के लिये इसके सम्बन्ध में एक बड़ा प्रोग्राम बनाया गया है। सोवियत् भूमि जंगलों और लकड़ियों की भारी खान है। दुनियाँ में और किसी देश को इतनी वन्य सम्पत्ति नहीं मिली, किन्तु तो भी कजाकस्तान के ऐसे कितने ही प्रदेश हैं, जहाँ लकड़ियों का बहुत अभाव है, तथा नये नगरों की आवश्यकता पूरी करने के लिये दूर-दूर से लकड़ी लानी पड़ती है। सोवियत् साइन्सवेत्ताओं ने इस कमी को पूरा करने के लिये १४ सालों का एक बड़ा प्रोग्राम बनाया है। इस प्रोग्राम के अनुसार ४५ करोड़ एकड़ भूमि में वृक्ष लगाये जायेंगे, जिनमें ७½ लाख एकड़ का काम वर्तमान पंचवार्षिक योजना में पूरा कर दिया जायेगा। इससे सिर्फ मकानों के लिये लकड़ी, ईंधन और औद्योगिक कच्चे माल ही नहीं मिलेंगे, बल्कि जमीन में अधिक तरावट रखने में अधिक सहायता मिलेगी, तथा मौसिम की सख्ती भी कम होगी। परीक्षा से यह भी मालूम हुआ है, कि ऐसे जंगलों से पास की भूमि में अनाज की उपज सवाई में ड्योढ़ा तक की जा सकती है और घास-चारा दूना तक। इसके लिये वृक्षों की रक्षक पाँतियाँ लगाई जा रही हैं।

साइन्सवेत्ताओं ने देश के भिन्न-भिन्न भागों में वन लगाने की जो योजना बनाई है, उसके अनुसार प्रति सौ हेक्तर (१ हेक्तर = २·४७ एकड़) २·५ हेक्तर में वृक्ष लगाये जायेंगे।

कृषि—कृषि का विकास सिर्फ उत्तर ही में नहीं—जहाँ कि कजाकस्तान की दो-तिहाई फसल पैदा होती है—बल्कि प्रजातन्त्र के दक्षिणी भाग, केन्द्र में अवस्थित बालुका भूमि के हरियाली के द्वीपों, और थ्यानशान-पर्वतमाला के किनारे-किनारे भी है। कई सौ मील की नहरें निकाली हैं गईं और नहरों

से सिंचित दक्षिण की भूमि में कपास, चावल, तेलहन, चीनीवाले चुकन्दर, तम्बाकू और रबरवाले पौधों की खेती हो रही है। युद्ध से पहले एक करोड़ ७० लाख एकड़ जमीन में खेती हो रही थी।

१६४६ की फसल पिछले साल से ६ सैकड़ा अधिक जमीन में बोई गई थी। १६५० तक वर्तमान पंचवार्षिक योजना के अनुसार १२ लाख एकड़ नयी जमीन खेत के रूप में परिणित हो जायगी। सिर्फ खेतों ही को बढ़ाया नहीं जा रहा है, बल्कि नहरों के जाल, आधुनिक खेती के ढंग और उच्च जाति के बीज के इस्तेमाल से फसल भी बढ़ाई जा रही है। उपज की वृद्धि १६५० तक अनाज के लिये ५०% और कपास के लिए ४७% नियत है। १६५० में अनाज की उपज १६४५ की अपेक्षा ८४% अधिक होगी। उस समय तक कजाकस्तान में एक करोड़ पशु हो जायँगे, पूरब से पच्छिम २,५०० किलोमीतर का यह विशाल प्रदेश खनिज सम्पत्ति ही के लिये नहीं बल्कि अनाज और पशु पैदा करने के लिए भी एक समृद्ध देश बनता जा रहा है। इसके ६,००० कल-खोजों (पंचायती खेतियाँ) ने घुमन्तू चरवाहों को नागरिक और सभ्य जीवन बिताने का अवसर दिया है। सरकार ने नहरों पर भी बहुत ध्यान दिया है और पिछले दस सालों में ३४ करोड़ ८० लाख रूबल नई नहरों पर खर्च हुए हैं। नहरें कजाकस्तान के कृषि-विकास में भारी काम कर रही हैं। विशाल-जलनिधियों और उनकी नहरों-द्वारा २५०००००० एकड़ की सिंचाई हो रही है, जो सारी खेती की जमीन का पंचमांश है। भूखा बयाबान ८०,००० वर्ग किलोमीतर में फैला हुआ है। इसमें १२२ किलोमीतर तक सिर-दरिया नहर का पानी लाया गया है। ५०,००० एकड़ जमीन को तो अभी ही किसानों ने बयाबान से मेवा-बागों, कपास और अनाज के खेतों में बदल दिया है। आबादी और बढ़ रही है।

वर्तमान पंचवार्षिक योजना ने और भी बड़ा प्रोग्राम बनाया है और भूखे बयाबान से हजारों एकड़ जमीन छीनी जा रही है। जंबुल जिले में पानी

देने के लिये तर्स (तनस) नदी पर एक विशाल जल-निधि बनाई जा रही है जहाँ, २२,००० वर्ग-किलोमीतर का कृत्रिम सरोवर बन जायेगा और उससे १,३,०००० हेकतर जमीन सींची जा सकेगी। योजना में तर्स नदी के नीचे आजकल मौजूद झील को ५० मील ऊपर हटाकर नयी जगह ही नहीं बनाया जा रहा है, बल्कि इसका भी ध्यान रखा गया है, कि वहाँ की बहुमूल्य मछलियों से भी यह झील वंचित न हो और हवाई जहाजों से मछली-बच्चों को ढो ढोकर नयी झील में ले जाने का इन्तिजाम हुआ है। इस झील से जहाँ नहरें निकाली जाएँगी, वहाँ पन-बिजली के स्टेशन बड़े भारी परिमाण में बिजली पैदा करेंगे, जिससे जंबुल और दूसरे शहरों के कारखानों तथा घरों को बिजली मिलेगी। कज़ाकस्तान में और भी कितनी ही जलनिधियाँ बनाई जा रही हैं। सरकार इस काम पर २० करोड़ रूबल खर्च करने जा रही है। नहरों के लिये एक बड़ा बाँध सिर दरिया पर क़िज़्ल-उर्दा में बन रहा है। यहाँ पर चावल की खेती को बढ़ाया जायगा।

सिवाय मध्य एसिया के चावल की फसल रूस के लिये अपरिचित सी थी, किन्तु अब वोल्गा और सुदुर-पूर्व में ही नहीं बल्कि कुर्स्क जिले यहाँ तक कि मास्को के पास भी चावल की फसल पैदा करने में सफलता मिली है। अकदमिक लिर्सेको के आविष्कार—बीज में संस्कार पैदाकर उसकी फसल को दो-तीन सप्ताह पहले तैयार कर लेना—ने भी काम किया है। यह अन्दाजा लगाया गया है, कि सोवियत् के भिन्न-भिन्न प्रदेशों में १० लाख हेक्तर ऐसी जमीन है जिसमें चावल की फसल हो सकती है। चावल की फसल के लिये पानी की बहुत आवश्यकता होती है। साइन्सवेत्ताओं का कहना है, कि २½ एकड़ के खेत के लिये २० से ५० हजार घनमीतर पानी की हर फसल में आवश्यकता होती है—पानी को एक खास समय तक रखने की जरूरत होती है। इसके लिये सोवियत् में ख़ास तरह की नहरें और पम्प करने के यंत्र लगाये गये हैं। कितने ही अनुसन्धान-कर्त्ता उत्तरी कज़ा-

कस्तान और दूसरे चावल के उपयोगी स्थानों में जाकर वहाँ की वैज्ञानिक जाँच-पड़ताल कर रहे हैं, मिट्टी के विशेषज्ञ मिट्टी का विश्लेषण कर रहे, जल-विशेषज्ञ नदियों और भूमि के भीतर के जल का हिसाब लगा रहे हैं, इंजीनियर और नकशा बनानेवाले नहरों के स्थान और निर्माण का लेखा तैयार कर रहे हैं।

सोवियत् के साइन्स-वेत्ताओं का ध्यान धान के बीजों की तरफ भी गया है। सोवियत् के धान-परीक्षा-स्टेशन के डिप्टी डायरेक्टर निकोलाय नाताल्यिन ने कहा है "सिर्फ भारत में एक हजार किस्म के धान होते हैं। बीजों का इतना भेद बिल्कुल स्वाभाविक है, क्योंकि धान के पौधे पर मिट्टी, मौसिम और दूसरी परिस्थितियों का बहुत प्रभाव पड़ता है। सात साल पहले सोवियत् भूमि में सौ प्रकार के धान मालूम थे, जब कि परीक्षा-स्टेशन और उसकी ७ शाखायें उत्तरी जिलों के लिये उपयोगी, नये प्रकार के धान के विकास करने के लिये कायम हुईं। अब धानों की जाति की संख्या काफ़ी बढ़ी है और तीन नये किस्म के बीज १९४४ के बाद पैदा किये गये हैं। ये बीज स्थायी तौर से प्रति ढाई एकड़ ६ टन फसल देंगे, जो कि मामूली फसल से दूना है!" अगले चार सालों में यानी वर्तमान पंचवार्षिक योजना के अन्तिम वर्ष तक सारी धान की खेती इन्हीं तीन प्रकार के धानों की होगी।

× × ×

कपास—कपास की खेती में भी कज़ाकस्तान हाथ बँटाने जा रहा है। १९४४ में यह कहने में भी हिचकिचाहट होती कि १ एकड़ में ४ टन कपास पैदा किया जा सकता है, लेकिन ताशकन्द यूनीवर्सिटी के कानून के विद्यार्थी अब्दुलमलिक की छोटी बहन ज़मीरा मोतालोवा ने यह काम करके दिखला दिया। तरुणी ज़मीरा सदा पत्रों को बड़े ध्यान से पढ़ती थी। खास कर, कपास और युद्ध-सम्बन्धी ख़बरों को वह बड़े मनोयोग से पढ़ा करती थी। ज़मीरा का ध्यान

कपास की ओर बहुत लगा हुआ था और वह उसके महत्त्व को अपने तथा अपने प्रजातन्त्र कजाकस्तान के लिये समझती थी। वह जानती थी कि कपास के कपड़े सिर्फ जनता के पहनने के लिये आवश्यक नहीं हैं, बल्कि युद्ध में गोला-बारूद और अस्पताल के लिये भी उनकी बहुत जरूरत है। जमीरा ने एक दिन अपने भाई से कहा "देखो, हमारे लोग कैसे काम कर रहे हैं। अपने देश को सारी दुनियाँ में अत्यन्त सुरक्षित, अत्यन्त धनी और अत्यन्त सुन्दर बनाने में सारी शक्ति लगा रहे हैं। कितने आनन्द की बात है, जब कि हम समझ रहे हों, कि हम सिर्फ अपने लिये ही नहीं काम कर रहे हैं बल्कि उन सबके लिये, जो हमारे साथ रहते हैं। देखो तो उन लड़कियों को! इसने चुकन्दर की फसल में रेकार्ड तोड़ा, इसने गेहूँ की फसल में..., फिर क्यों न हम कपास की उच्चतम उपज का एक नया रेकार्ड बनाएँ?"

जमीरा कल-खोज (पंचायती खेती) की सभा में गई और वहाँ बोली। मध्य एसिया के मुसलमान देश में एक स्त्री, सो भी अत्यन्त तरुणी, बूढ़ों के सामने बोलने का साहस करे, यह अनहोनी बात थी, लेकिन यह ३० साल पहले था, अब सब संभव है और जिसे कुछ को छोड़कर सभी पसन्द करते हैं। कपास की तरह सफेद दाढ़ीवाले बूढ़े अपनी दाढ़ियों पर हाथ फेरते एक दूसरे की तरफ मुस्करा कर चुप रह गये। किन्तु जमीरा ने बहुत लम्बा-चौड़ा व्याख्यान नहीं दिया था। उसने इतना ही कहा, कि देश को कपास की बहुत जरूरत है और मैं प्रति एकड़ ४ टन कपास पैदा करूँगी। कल-खोज ने उसे ऐसा करने की अनुमति दी।

जमीरा ने लड़कियों में से चुनकर अपने मन की टोली बनाई। उसने उनके सामने कानून बनाकर रखा—हम सूर्योदय से सूर्यास्त तक काम करेंगी और फसल का काम जब तेजी पर होगा, तो यहीं खेत में तम्बुओं में सोयेंगी। उन्होंने खूब मिहनत से काम किया। उनको सोते, जागते हर वक्त एक ही ध्यान था—कैसे १७ एकड़ के चक में ४२ टन कपास पैदा करें।

लड़कियाँ एक-एक पौधे से परिचित थीं। वह दिन में कई बार अपनी अंगुलियों से प्रत्येक पौधे को छूतीं। पौधे उन्हें अपने बच्चे-से मालूम होते थे। वह उनमें खाद डालतीं, पानी डालतीं। मर्द धूप से बचने के लिए तूत के वृक्षों की छाया में बैठे देखते रहते, और ज़मीरा तथा उसकी साथिनें कपास के पौधों की एक पाँती से दूसरी पाँती में काम करती घूमती रहतीं। ज़मीरा के पौधे बहुत हरे-भरे उगे। फसल अच्छी हुई। तौलने पर मालूम हुआ कि प्रति एकड़ २½ टन हुआ। ज़मीरा ने १½ टन की कमी समझी, लेकिन दूसरे साल ज़मीरा ने और कोशिश की। ज़मीरा जोतते वक्त ट्रेक्टर के पीछे-पीछे चल रही थी और जरा भी हराई में कम गहराई देखती तो ड्राइवर पर चिल्ला उठती। अबकी साल खनिज-खाद भी काफी थी, उन्होंने खेत को तोशक की तरह मुलायम करके खाद डाला और बीज को बोया। इस साल कपास प्रति एकड़ ३.६ टन हुई। कज़ाकस्तान के लिये यह बहुत बड़ी चीज थी, लेकिन ज़मीरा इससे सन्तुष्ट होनेवाली नहीं थी।

यद्यपि अब ज़मीरा सारे देश में प्रसिद्ध हो चुकी थी। अखबारों में उसके फोटो छपे थे, उस पर लेख लिखे गये थे। हजारों चिट्ठियाँ उसके पास आ रही थीं, जिनमें पूछा जाता कि कैसे तुमने ऐसा किया।

तीसरे साल सूखा का साल था। जमीन और भी कड़ी थी, किन्तु ज़मीरा और उसकी साथिनों ने दिलोजान से काम किया और अबकी बार ४ टन से अधिक कपास प्रति एकड़ (प्रति हेक्तर १०.१ टन) पैदा किया। १७ वर्ष की ज़मीरा मोतालोवा ने सोवियत् के नागरिकों के लिये सबसे बड़े सम्मान "समाजवादी श्रमवीर" को प्राप्त किया। ज़मीरा अब प्रति हेक्तर १२ टन कपास की औसत पूरा करने की कोशिश कर रही है।

कल-खोज—कज़ाकों का वह घुमन्तू अर्द्धसभ्य जीवन, वह पितृसत्ताक सामन्तवादी कज़ाकों का समाज, जिसमें साधारण कज़ाक जन अपने बायों और कुलकों एवं रूसी प्लांटरों के नीचे दबे-पिसे जा रहे थे। देश की सबसे

उर्वर कृषि उपयोगी भूमि को रूसी प्लांटरों ने अपने हाथ में कर लिया था और कज़ाकों की जिन्दगी बहुत ही दरिद्रता की जिन्दगी थी। १९४० में कज़ाकस्तान में ७,२०७ कल-खोज (पंचायती खेती) थे, जिनमें सारे किसानों की ९८.९ जनता—५,९५,००० परिवार सम्मिलित थे, इनके पास सारी खेती की जमीन का ९९.९% था। जोताई के लिये ३१५ मशीन-ट्रेक्टर-स्टेशन थे, जिनमें १०,५१० ट्रेक्टर, और कम्बाइन काम करते थे। मशीन-ट्रेक्टर स्टेशनों में काम करनेवालों की संख्या १९३९ में ३९,११८ थी, जब कि १९३३ में वह सिर्फ ७,९९४ थी।

सोव-खोज—१९३९ में कज़ाकस्तान में १९२ सोव-खोज (सरकारी खेती) थे, जिनमें ९७,००० कमकर और ४,७११ कृषि- विशेषज्ञ, इंजीनियर और टेक्नीशियन काम करते थे। सोव-खोज के खेतों में ट्रेक्टर, कम्बाइन और दूसरी नयी से नयी मशीनें काम करती हैं। १९४० में सोव-खोजों ने ७,६४,३०० हेक्तर में खेती की। सारे प्रजातन्त्र के २०.८% घोड़े, १७.७% ढोर २१.३% भेड़-बकरियाँ और १५.२% सूअरें सोव-खोजों के पास थीं।

खेती की उन्नति में नहरों ने बहुत काम किया है, इसे हम बतला चुके हैं। अलमा-अता जिले की करातल, दक्षिणी कज़ाकस्तान के शाउलदेर, बयलूदी, सइराक-सू, तथा जम्बुल जिले की नहरों के बनने पर खेती की बड़ी उन्नति हुई। जब फर्गाना के कल-खोजियों के नहर बनाने की खबर कज़ाकस्तान पहुँची, तो यहाँ भी किसान पिल पड़े और उन्होंने उराल-कुसमुस्क, तलस-असिन्, कुर-केलेम, बुरुन-चाइनोल्स्क की नहरें बनायीं।

पशुपालन—कज़ाकस्तान की विस्तृत चारागाहें सदा पशु-पालन के लिए आदर्श समझी जाती थीं। शकों का यह शकद्वीप चरागाहों की भूमि थी। हूणों और तुर्कों ने भी चरागाहों के तौर पर इसका इस्तेमाल किया। चिंगिज खान के वंशज चगताई और दूसरे उर्दू भी कज़ाकस्तान के चरागाहों से ही अधिक आकृष्ट हुए थे। यह सदा घुमन्तुओं का प्रदेश रहा। इन घुमन्तुओं

का आहार गाय, घोड़े, भेड़ के मांस और दूध, उनकी पोशाक इन्हीं का चमड़ा और उनके मकान और परिधान उन्हीं के बालों के तंबू थे। कजाकस्तान के घोड़े बहुत अच्छी जाति के हुआ करते थे। आज ही नहीं ईसा-पूर्व तीसरी सदी में अल्ताइ-पर्वत-माला में मिली एक शक सरदार की समाधि में स्वामी के साथ बहुत से घोड़े भी दफना दिये गये थे, जो कि बरफ के अन्दर जम जाने से २३०० वर्ष बाद भी सुरक्षित अवस्था में मिले। इन घोड़ों को देखने से मालूम होता है, कि उस समय भी अच्छी जाति के घोड़े पैदा होते थे। सोवियत्-काल में और भी अच्छी जाति के घोड़े, गायें और भेड़-बकारियाँ पैदा की गयीं। प्रजातंत्र की सारी कृषि-उपयोगी भूमि का ¾ चरागाह है, इसके पहाड़ों, मैदानों और बयाबानों में लाखों पशु चरते रहते हैं। कजाकस्तान सच-मुच ही सोवियत् की दूध-मांस की भूमि है। युद्ध के समय कजाकस्तान ने सेना को भारी तादाद में घोड़े और भारी परिमाण में मांस दिया, ऊपर से ५½ लाख जानवर जर्मन-ध्वस्त इलाकों को फिर से बसाने के लिये दिया। तो भी यहाँ के पशुओं की संख्या युद्ध के समय काफी बढ़ी। आज कजाकस्तान में भिन्न-भिन्न किस्म के पशुओं के पालने के भिन्न-भिन्न स्थान नियत किये गये हैं। उत्तर-पूर्वी प्रदेश में दूध देनेवाले पशुओं की बहुतायत है। भेड़ें, ऊँट और घोड़े दक्षिण तथा पश्चिम के प्रदेशों में अधिक पाले जाते हैं। भेड़ पालना कजाकस्तान में बड़े पैमाने पर होता है, और सारे पशुओं की ७० (संख्या भेड़ें हैं, जिसे १९५० तक दूना किया जा रहा है। उस वक्त भेड़ पालने में कजाक-स्तान का स्थान रूसी प्रजातन्त्र के बाद दूसरा होगा। अच्छी जाति की भेड़ों की पैदाइश में यहाँ बड़ी सफलता पाई गयी है। १९५० ठीक ढोरों की संख्या ड्योढ़ी हो जायेगी। पशुओं की चरागाहों की तरफ खास तौर से ध्यान दिया गया है। जानवरों के पीने के लिये खोदे गये कुओं की संख्या १९५० तक १२,००० हो जायेगी।

कजाक पशुपाल पहले भी अपने पशुओं के गल्ले को लेकर चरागाहों

में चराने के लिये ले जाते और गर्मियों में घूम-फिरकर जाड़ों में कोई सुरक्षित जगह रहने के लिये ढूँढ़ते थे। वहाँ न जाड़े के तूफान और बरफ से रक्षा के लिये प्रबन्ध रहता और न चारे का, जिसमें कभी-कभी घुमन्तुओं के लाखों पशु भूख और तूफान से मर जाते, घुमन्तुओं के लिये अकाल पड़ जाता। यह समय था जब कि घुमन्तूदल दल टिड्डी की तरह अपने दक्षिण के ग्राम-नगरवासियों के ऊपर टूट पड़ता। दक्षिण के नागरिक लोग अच्छे अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित जरूर थे, इसलिये घुमन्तू सहसा उन पर आक्रमण करने का साहस नहीं कर सकते थे। कितनी ही बार वह वर्षों से छूटी हड्डियों को पीस कर खाते, लेकिन उससे कितने दिनों काम चलता, और अंत में वह ठीक टिड्डीदल की तरह अपने पड़ोसियों पर टूट पड़ते। दूसरों का मारना-काटना उनके लिये गाजर-मूली से अधिक नहीं था, और अपनी मौत को भी वे तिनके के बराबर समझते थे। इन्हीं मानव टिड्डियों से रक्षा करने के लिये चीन ने बड़ी दीवार बनवाई। पारसीक सम्राट कोरोश और दारयोश ने भी सिरदरिया के तट और काकेशश में बड़ी दीवारें और किलेबन्दियाँ कीं, लेकिन जब तक मंगोलिया से शकद्वीप (काज़कस्तान) तक टिड्डियों की जन्मभूमि बनी रही, तब तक किन्हीं दीवारों ने उनका रास्ता रोकने में सफलता नहीं पायी। हिन्दुस्तान में टिड्डियों की बाढ़ रोकने के लिये हमारे विशेषज्ञों और हवाई जहाजों को ईरान और अरब तक धावा मारना पड़ता है। तो भी कितनी ही बार ये टिड्डियाँ विहार-बंगाल तक पहुँचती हैं और करोड़ों एकड़ की फसल को बरबाद कर देती है। ईसा की १७ वीं सदी तक कज़ाकस्तान की मानव-टिड्डियाँ इतनी ही प्रबल रहीं। रूस के हाथ में चले जाने पर उनका बल कुछ कम जरूर हुआ, किन्तु उनका टिड्डी-जीवन १९१७ तक कायम रहा। वह मानव-टिड्डियाँ अर्थात् कज़ाक अब सभ्य नागरिक बन गये हैं। इसका श्रेय सोवियत्-शासन को है।

अब कज़ाक पशुपालों को पहले की तरह जाड़ों में चारे

क (पृष्ठ २९)

और सर्दी से भीषण अकाल का मुँह देखने की जरूरत नहीं। उनकी भारी चरागाहें जानी-सुनी हैं। पानी के लिये वहाँ पर हजारों कुएँ बने हुए हैं। चरागाहों में जहाँ पशुपालों के तम्बू होते है, वह तम्बुओं का नगर सा बस जाता है। वहाँ कितने ही तम्बू जानवरों और पशुओं के अस्पताल तथा मोक्टरों के लिये होते हैं। कितने तम्बुओं में लड़के-लड़कियाँ पढ़ती हैं। उनके साथ समाचार लेने-देने के रेडियो-यंत्र होते हैं, तथा सिनेमा भी देखने को मिलते हैं।

१९४६ में जाड़ों के आरम्भ में अब पशुओं को चरागाहों से हटाकर जाड़े के निवासस्थानों में लाना था। ८५,००,००० भेड़-बकरियाँ और ५,००,००० घोड़े और ऊँट यह यात्रा कर रहे थे। उन्हें ६०० किलोमीतर चल-कर अपने जाड़े के निवासों में पहुँचना था, जहाँ पहले ही से जाड़ा भर के लिये चारा जमा कर रखा गया था, पुराने कुओं की मरम्मत कर दी गयी थी और कितने नये कूओं को बना दिया गया था। पशु-पालों के रहने के लिये मकान ही नहीं तैयार थे, बल्कि बर्फानी तूफानों से पशुओं को बचाने के लिये रक्षास्थान भी बना लिये गये थे। इन स्थानों पर घास सुरक्षित थी; किन्तु बरफ की मोटी तह पड़ जाने पर जानवरों के लिये खुर से खोदकर उसका चरना संभव न होता। ऐसे समय के लिये ७,००,००० टन चारा जमा कर लिया गया था। १५, ००, ००० भेड़ों के रहने के स्थान और ५,००० नये या पुराने कुँए पानी देने के लिये तैयार थे। इतना ही नहीं, विमानों के उतरने के लिये अड्डे भी तैयार कर लिये गये थे, जिसमें कि आसानी से पशुपालों के लिये भोजन-वस्त्र, चिट्ठी-पत्री और अखबार लाये जा सकें। सारे रास्ते में रेडियोद्वारा पशुओं की गति-विधि के समाचार पहुँचाने का इन्तिजाम था।

पहली जनवरी १९४० को २०,१६१ पालन-पशु स्थान थे। प्रत्येक १२,००० हा क्लोज पर २८ पशुपालन-स्थान पड़ते थे।

कजाक पशुपालन-धंधा—कजाकस्तान के विशाल उद्योग-धन्धे के बारे में
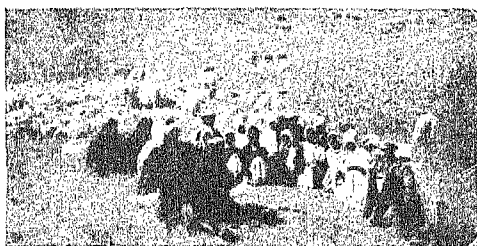
२३. कज़ाकस्तान (दक्षिण)—कलखोज "बोलशेविक" के मेषपाल
(११,००० भेड़ोंवाले) (पृष्ठ २८)
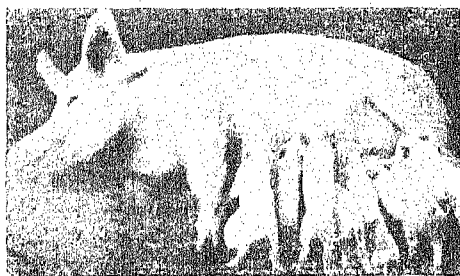
२४. कज़ाकस्तान (मार्तुक्स)—कलखोज "वोल्गा" की सूअर (पृष्ठ २८)

२५. कज़ाकस्तान—करागंदा के कोयला खनक (पृष्ठ २६)

२६. कजाकस्तान—करागंदा के घर (पृष्ठ २६)

२७. कजाकस्तान—बल्खाश. मजदूरों के वासगृह (पृष्ठ २६)
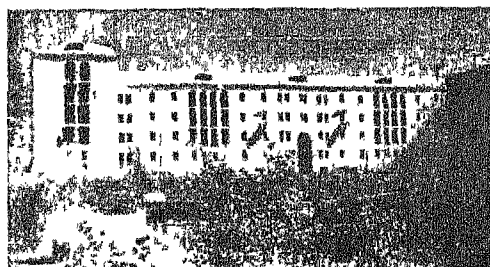
२८. कजाकस्तान (दक्खिण)—पार्लामेंट-सदस्या ग्राम-अध्यापिका हाजरा युल्दाशेवा (पृष्ठ ३५)

कुछ कह आये हैं, लेकिन यहाँ कुछ और विस्तार से से कहने की जरूरत है।

करागंदा की कोक-वाले कोयले की खानें सोवियत् का एक बड़ा कोयला-क्षेत्र है, किन्तु कजाकस्तान की खनिज-सम्पत्ति अपार है। १९४६ में जो भूगर्भ-शास्त्रियों का अभियान कजाकस्तान में गया था, उसने अक्मोलिन्स्क-कर्ताली की रेलवे लाइन के पास सेमी-ओज़ेरनी (सप्त-सरोवर) एक नई कोयले की खान का पता लगाया। अनुसन्धान-कर्त्ताओं ने २८ मीतर (६० हाथ से अधिक) नीचे २·३ मीतर मोटी कोयले की तह का पता लगाया। पाँच और जगहों में कोयले का पता लगा है। करागंदा के पास सरन में १९४६ में एक नयी खान का काम शुरू हुआ। कई चन्दवक काटे जा रहे थे और साथ ही वास्तु शास्त्री और घर बनानेवाले ३०,००० बस्ती का नगर एक बनाने में लगे थे। नया कोयला-क्षेत्र ७ नवम्बर १९४६ से शुरू हुआ। उसकी क्षमता प्रतिवर्ष ६ लाख टन है।

१९४७ में १२ वर्गमील का एक लोह-पाषाण-क्षेत्र मालूम हुआ, जो उत्तरी कजाकस्तान में है। यहाँ इतनी बड़ी लोह-निधि जमा है, जिसके सामने मग्नितोगोर्स्क के मग्नित्‌नयागिरि की लोह-निधि भी नगण्य हो जाती है। सोवियत् साइन्स-अकदमी के उपप्रधान अकदमिक इवान बर्दिन के नेतृत्व में अध्ययन के लिये एक कमीशन बनाया गया है। कमीशन १४००० मीतर स्थूल की खोदाई करके २२,००० तरह के नमूने जमा करनेवाला है। यह लोह-क्षेत्र अयात नदी की उपत्यका में है।

कज़ाकस्तान में नयी पंचवार्षिक योजना के अनुसार एक नया लोह-फौलाद कारखाना काम करने लगा है। सोवियत् मध्य-एसिया में पहला लोह-फौलाद कारखाना उज्बेकिस्तान में १९४४ में बनाया गया, और दो साल बाद कजाकस्तान भी उससे पीछे नहीं रहा। इस कारखाने में सभी विभाग हैं, रोल करने का विभाग १६,००० वर्गमीतर में है, दूसरा विभाग पतली चद्दरों

के बनाने का है। पुराने कजाक पशुपालों के १ हजार पुत्रों ने मग्निनोगोर्स्क के कारखानों में जाकर विद्या सीखी और अब वह अपने तेमिरताउ (तैमुर-गिरि) के इस लोह-फोलाद कारखाने को दूसरे मग्निनोगोर्स्क का रूप दे रहे हैं।

१९४६ में तलगर में एक बड़ी बनियान-फैक्टरी तैयार की गई।

कजाकस्तान के उद्योग-धन्धे के बढ़ाने की योजना में पावलोदर के जिले को भी एक औद्योगिक-क्षेत्र बनना है। यह जिला कजाकस्तान के उत्तर-पूर्व भाग में इर्तिश नदी के मध्यभाग में अवस्थित है। भूमि चौरस सी और मिट्टी उर्वर, काली, क्षेत्रफल में सारे यूनान के बराबर फैली हुई है। कृषि और पशुपालन दोनों की ही उन्नति यहाँ बहुत हुई है और पिछले १० वर्षों में हजारों कजाक-परिवार घुमन्तू जीवन को छोड़कर यहाँ आबाद हो गए हैं।

पहिले इस जिले में कुछ नमक की खानों और डेरी के कारखानों के अतिरिक्त कोई उद्योग-धन्धा नहीं था। युद्ध ने कुछ उसमें परिवर्तन किया, किन्तु अब पंचवार्षिक योजना उसमें और वेग से परिवर्तन कर रही है। १० साल पहले (१९३६) एकीबस्तुज के कोयला-क्षेत्र में ६० करोड़ टन कोयले का अनुमान लगाया गया था, किन्तु युद्ध के समय की खोजों से पता लगा कि वहाँ ४० अरब टन कोयला है। उधर कारागंदा की कोयला-निधि ५० अरब टन कूती गई है। यहाँ कोयला के बारे में दूसरा कारागंदा होने जा रहा है। १९४० के पूर्वार्द्ध में ही १ लाख टन कोयला निकाला जा चुका था।

सेमिजबुग में कोरन्दम की खानें निकली हैं। यह स्थान जिले के दक्षिणान्त में है। मोलिब्देनम, ताँबा, चाँदी, सोना की खानों का पता युद्ध के समय में लगा और उनमें अब काम भी हो रहा है।

ताँबा—प्रोफेसर व्लादीमिर वान्यूकोफ को १९४६ में स्तालिन पारितोषिक मिला। उन्होंने कजाकस्तान के ताँबे के पिघलाने के तरीके के बारे में एक जबर्दस्त आविष्कार किया। वान्यूकोफ १८८० में पैदा हुए थे।

२० वर्ष से इस इञ्जीनियर साइन्सवेत्ता का कजाकस्तान की ताम्र-निधि से परिचय है। तब से अनगिनत बार वह कजाकस्तान में अपनी खोज के लिए गए हैं। उन्होंने ताँबे के पिघलाने का जो नया तरीका निकाला है, उसके बारे में उन्होंने कहा "कभी कभी मैं खुद सोचता हूँ, कि इसे ढूँढने में इतना समय क्यों लगा।"

प्रोफेसर वान्यूकोफ अपने युनिवर्सिटी के दिनों से ही अलोह धातुओं के अध्ययन में लगे हुए हैं। अपनी खोजों के सिलसिले में वह सारे देश में घूमे और कई बार उन्होंने अमरीका और युरोप के धातु के कारखानों को भी देखा। पहली बार जब वह कजाकस्तान गये, उसी समय वह कजाकस्तान के ताम्र पहाड़ों के निरन्तर अध्ययन में लग गए। सोवियत् भूमि का दो-तिहाई ताँबा कजाकस्तान में है। किन्तु इस ताम्रपाषाण को पिघलाकर ताँबा बनाने में कई कठिनाइयाँ थीं। यहाँ के ताम्रपाषाण में गन्धक थोड़ी सिलिका अधिक होती है। सिलिका पिघलाने में बहुत बाधक है और इसके लिए भारी परिमाण में गन्धकीय पाइराइट और लोह-फलक्सों की आवश्यकता होती थी। इसका अर्थ था, बाहर से रेलों पर ढोकर बहुत परिमाण में उन चीजों को लाना और उसको फिर ताम्रपाषाण के साथ भट्ठे को जरूरत से अधिक भरना। साथ ही इस प्रक्रिया में ताँबे का कितना हिस्सा हाथ न लगकर बेकार जाता था। इसलिये कजाकस्तान के ताम्रपाषाण को पिघलाने की प्रक्रिया में एक नये ढंग की आवश्यकता थी। वान्यूकोफ ने कजाक ताम्रपाषाण को कई बार स्वयं पिघलाया और अपनी जन्मभूमि उराल के ताम्रपाषाण से तुलना की, लेकिन रहस्य का पता न लग सका।

वान्यूकोफ ने खनिज अकदमी—वर्तमान अलौह धातु इन्स्टीट्यूट-में कजाकस्तान के ताम्रपाषाण को मँगाया और अपने छात्रों के साथ परीक्षण पर परीक्षण शुरू कर दिया। उनके सामने एक ही समस्या थी—कैसे पाइराइट के उपयोग को हटाया जाय? इसके लिये पाषाण में गंधक के अंश की

कमी का कोई दूसरा रास्ता निकालना जरूरी था। प्रोफेसर वान्यूकोफ के दिमाग में हर वक्त कजाकस्तान का ताम्रपाषाण ही घूमा करता था। एक बार वह नाट्यशाला में बैठे नाटक देख रहे थे, उसी समय उन्हें मालूम हुआ कि रहस्य का पता लग गया। वह पटाक्षेप की समाप्ति की प्रतीक्षा किये बिना ही वहाँ से उठे और प्रयोगशाला में पहुँचे। सारी रात परीक्षण करते रहे। लेकिन दूसरे दिन मालूम हुआ, कि वह गलत रास्ते पर थे। फिर भी उनका परीक्षण चलता रहा। अमेरिका के टेक्नोलोजी मेसचसेट इन्सीट्यूट और तोम्स्क इन्स्टीट्यूट से सीखे हुए अपने सारे तरीकों का इस्तेमाल किया, परन्तु समस्या हल न हुई। अपने सैकड़ों तजर्बों के बाद जब हल मालूम हुआ, तो पहले तो सरलता के कारण उनका उस पर विश्वास न हुआ, परन्तु जब विश्लेषण किया, तो बात सच्ची मालूम हुई। रहस्य यही था, कि गन्धक की कमी को पूरा करने के लिए बड़ी हल्की मात्रा में कुछ धातुएँ डालनी थीं; जिनमें एक मंगानिज भी थी। अब भारी परिमाण में पाइराइट की जरूरत नहीं थी, और वहाँ उपस्थित गंधक की अल्पमात्रा पर्याप्त थी।

प्रोफेसर वन्यूकोफ विजयी हुए। उन्होंने अपने आविष्कार की सूचना साइन्स अकदमी को दी। फिर वह अपने सहकर्मियों के साथ बलखाश के ताम्रपिघालक में पहुँचे। वहाँ के कर्मी वान्यूकोफ का ढंग देखकर बहुत संतुष्ट हुए। अब ताँबा सरलता और तेजी से पिघलाया जाने लगा। ताँबे का बेकार निकल जाना भी लेशमात्र रह गया। पुराने ढंग से ताम्रपाषाण में अवस्थित-ताँबे का नब्बे सैकड़ा निकाला जा सकता था और वान्यूकोफ के अधिक सीधे और सस्ते ढंग के अनुसार ९९.५ सैकड़ा निकलने लगा।

युद्ध से पहले ही कजाकस्तान के ताम्रपिघालकों में वान्यूकोफ का यह ढंग व्यवहृत होने लगा। बलखाश और करसकपाइ के पिघालक अब बढ़ाए जा रहे हैं। जब वह पूरी क्षमता से काम करने लगेंगे, तो प्रतिवर्ष दस हजार टन ताँबा अधिक निकाला जा सकेगा। पास में मंगानिज की खान होने और

अधिक कार्यक्षमता के कारण एक साल में जो बचत हुई, उससे एक नया ताम्रपिघालक कारखाना खोला जा सकता है।

प्रोफेसर वान्यूकोफ ने इस विषय पर जो पुस्तक लिखी, उस पर उन्हें "स्तालिन पुरस्कार" मिला। यह उनकी १२०'वीं कृति है। पहली पुस्तक उन्होंने ४२ साल पहले ग्रेजुएट होते समय लिखी थी।

इन बयालीस सालों में प्रोफेसर वान्यूकोफ ने हजार से अधिक इंजिनियर शिक्षित किये, जिनमें ६५ उनकी ही तरह अपने कामों के लिये संमानित हो चुके हैं। प्रोफेसर वान्यूकोफ फिर १९४६ में कजाकस्तान जाने वाले थे, सिर्फ अपने आविष्कार के प्रयोगों की सफलता देखने ही के लिये नहीं, बल्कि एक और नई समस्याका हल ढूँढ़ने—कैसे अक्सित ताम्रपाषाण से एक ही साथ ताँबा और सोना दोनों अलग किया जा सकता है।

१२. पच्चीस साल में उन्नति

१९४५ में काजकस्तान ने अपनी पच्चीसवीं जयन्ती मनायी। कजाकस्तान के महामंत्री न० उनदासिनोफ ने उसवक्त अपने देश की उन्नति की चर्चा करते जो कहा था उसका आशय यह है :

चौथाई सदी बीती जब कि कजाक जानता ने रूसी जनता की सहायता से अपना राज्य कायम किया। तब से काजाकों ने भारी प्रगति की है। घुमन्तू पशुपालकों और सामन्तवादी पितृसत्ताक समाज के देश से कजाकस्तान बड़े पैमाने के उद्योग और मशीनवाली कृषि के समुन्नत प्रजातंत्र में परिणत हो गया। बड़े से बड़ा स्वप्नदर्शी भी इन परिवर्त्तनों की उम्मीद नहीं कर सकता था, जो कि प्रजातंत्र में पिछले पच्चीस सालों में हुए।

सोवियत-शासन से पहले कजाक जनता का सारा जीवन किसी तरह पेट भर लेने का निरन्तर संघर्षपूर्ण एक नीरस जी बना था। देश की सम्पत्ति और पशु मुट्ठी भर अर्धसामन्ती बायों के हाथ में थे। ये बाय प्राचीनता के पुजारी थे, और हरतरह से प्रजापर अपना अक्षुण अधिकार रखते थे। इनके क्रूर

शोषण के मारे कजाकों की दशा बड़ा ही दयनीय थी और मृत्यु-संख्या जाति के विनाश होने की सूचना दे रही थी। उस वक्त सिर्फ दो सैकड़ा कजाक लिख पढ़ सकते थे।

सोवियत-शासन के बाद आर्थिक सांस्कृतिक क्षेत्रों में तेजी से उन्नति होने लगी। इसका परिणाम यह हुआ, कि पिछड़ी कृषिवाला कजाकस्तान उद्योग प्रधान देश हो गया। १९२० में राष्ट्रीय आय का ६·३ प्रतिशत उद्योग से था। वह पच्चीसवीं वर्ष गाँठ के समय दो-तिहाई हो गया। कोयले की उपज १९४४ में १९१३ की अपेक्षा १२५ गुनी हो गई।

मुख्य औद्योगिक केन्द्र हैं चिमकन्द और लेनिनोगोर्स्क के सीसे के कारखाने, बलखाश, इर्तिश् और कर्सकपाइ के ताँबे के कारखाने, तेकेली का बहु-धातुक कारखाना, अवत्यूबिन्स्क का रसायनिक कारखाना, सेमीप्लातिन्स्क के मांस तैयार करने और गुर्येफ के मछली तैयार करने के कारखाने हैं।

द्वितीय विश्व-युद्ध में उद्योग-धंधा बहुत तेजी से बढ़ा। पहलेपहल-प्रजातंत्र में लोह-फौलाद का कारखाना खुला। युद्ध-उद्योग के कई कारखाने बने। उस्त-कामेनोगोर्स्क के राँगे के कारखाने का पहला भाग करीब-करीब तैयार हो चुका। गुर्येफ में एक बड़ा तैल-संशोधन कारखाना खुला, और अगस्त १९४६ में उसका पहला भाग काम करने लगा। जम्बुल में एक रसायन कारखाना खुला, जो कि नगर से नातिदूर अवस्थित विशाल फास्फोराइट निधि को इस्तेमाल कर रहा है। एक बड़ा खनिज खाद का कारखाना भी बन रहा है। यह कारखाना-कजकस्तान, मध्य-एसिया और पश्चिमी सिबेरिया की खाद की आवश्यकतायें पूरी करेगा। अक्मोलिन्स्क में खेती की मशीनरी बनाने का विशाल कारखाना है। रेलवे की कई लाइनें बनी हैं और नदी का यातायात १९१७ की अपेक्षा दुगुना हो गया है। तार, टेलीफोन और रेडियो में भी बड़ी उन्नति हुई है। १९२८ की अपेक्षा तार की लाइन चार गुना अधिक हुई।

कृषि अब बिल्कुल नये आधार पर स्थापित हुई है। पुराने हलों और हथियारों का स्थान आधुनिक मशीनों ने ले लिया है। ३६३ मशीन-ट्रैक्टर-स्टेशन और ३०० मशीन ट्रैक्टर-मरम्मत-खाने, १६ मरम्मत के प्लान्ट काम कर रहे हैं। २१००, ट्रैक्टर, १०,००० जोतक और कृषि की दूसरी बहुसंख्यक मशीनें काम कर रही हैं। प्रजातन्त्र में ६८२३ कल-खोज और २५० सोव-खोज हैं। औद्योगिक फसल की खास तौर पर तरक्की हुई है—१९१३ की अपेक्षा कपास की पैदावार तिगुनी हो गयी है। चीनी वाले चुकन्दर का पहले कोई नाम तक न जानता था, वह इस साल ५०,००० एकड़ में बोया गया।

कज़ाकस्तान के ७९ सैकड़ा पशु कल-खोज या सोव-खोज के हैं—जिनमें कल-खोज के १ करोड़ १५ लाख। १९३४ में जहाँ प्रति कल-खोज १६६ पशु थे, वहाँ दस साल बाद वह १७०० सौ हो गये। औद्योगिक और कृषि-सम्बन्धी उन्नति का प्रभाव जनता के जीवन पर पड़ा है। जहाँ क्रान्ति के पहले के कज़ाकों का लकड़ी के ढाँचे पर कपड़े से ढँका घुमन्तू घर होता था, वहाँ अब आधुनिक ढंग की इमारतें हैं। कल-खोजी किसान आज समृद्ध और सन्तुष्ट हैं।

१ ३. शिक्षा, संस्कृति, साहित्य

पिछले पच्चीस सालों में सांस्कृतिक क्षेत्र में भी लम्बा डेग बढ़ाया गया है। प्रारम्भिक शिक्षा सार्वजनिक और अनिवार्य है। सब जगह स्कूलों और शिक्षालयों का ताँता बिछा हुआ है। पुराने कज़ाकस्तान में एक भी हाई-स्कूल या उच्च शिक्षालय न था; अब २२ कालेज ८७ हाई और टेकनिकल स्कूल हैं। कज़ाकस्तान के पास आज अपनी युनिवर्सिटी है, संगीत कंजर्वेटरी सिनेमा-स्टूडियो है, ओपेरा और नाटकों की कई रंगशालायें हैं। साइन्स-सम्बन्धी अनुसन्धान की ५० से अधिक संस्थायें हैं, जिन्होंने प्रजातन्त्र की प्राकृतिक सम्पत्ति को ढूँढ़ निकालने में बड़ा ही स्तुत्य कार्य किया है। १०

साल पहले यहाँ सोवियत्-संघ की साइन्स-अकदमी की शाखा खुली थी, अब वह बढ़कर एक महत्व पूर्ण साइन्स-केन्द्र बन "कज़ाक साइन्स-अकदमी" में परिवर्त्तित हो गई है।

प्रजातंत्र की पुनरुज्जीवित जनता ने मूल्यवान साहित्य तैयार किया है। कजाक लेखकों की पुस्तकों के अतिरिक्त रूसी और विश्वलेखकों के ग्रन्थों के अनुवाद हुए हैं। इसी तरह अपने नाटकों के अतिरिक्त रूसी और यूरोप के नाटककारों की कृतियाँ भी कजाक भाषा में आज मौजूद हैं। पुराने कज़ाक गाँवों ने शयाद ही कभी डाक्टर को देखा हो। अब १६१३ की अपेक्षा १४ गुना डाक्टर हो गये हैं। १ मेडिकल कालेज और कितने ही मेडिकल स्कूल हैं, जिनमें डाक्टर और नर्स तैयार किये जाते हैं। मातृमुक्ति-युद्ध (१६४१-४५) में कजाकों ने दूसरे प्रजातंत्रों की तरह खुलकर भाग लिया। ५७,००० से अधिक कजाक सैनिकों को वीरता के सम्मान प्राप्त हुए। ३३० ने तो वीरता की उच्चतम उपाधि "सोवियत-संघ-वीर" प्राप्त की। सारे युद्ध-काल में प्रजातंत्र के साइन्सवेत्ता कच्चे माल के नये स्रोतों की गवेषणा में लगे रहे। जनता ने खेतों और गोलाबरूद के कारखानों में अनथक काम किया। प्रजातंत्र ने दूसरे प्रजातंत्रों के लाखों शरणार्थी परिवारों को आश्रय दिया।

× × ×

१६४० में कज़ाकस्तान में २६२५ इंजिनियर और ६३७ अर्थ-शास्त्री थे। सिर्फ कालेजों के स्नातक ८७६० थे उस साल कजाकस्तान के कालेजों और टेकनिकम् में ६२४६ विशेषज्ञ तैयार हुये। १६१७ में ६१-२ सैकड़ा कज़ाक जनता निरक्षर थी और १६३६ में ७६.३ प्रतिशत शिक्षित हो गई। स्कूलों की संख्या निम्न प्रकार थी—

२६. कज़ाकस्तान (मध्य)—"जंबुल" स्कूल के विद्यार्थी (पृष्ठ ३६)

३०. कज़ाकस्तान—अल्माअता के पास, बच्चो का मुष्टियुद्ध (पृष्ठ ३६)
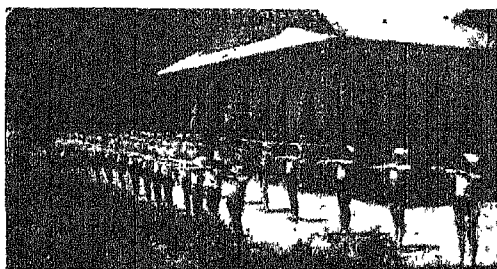
१. कज़ाकस्तान—अल्माअता के समीप, कैंप में बच्चों का व्यायाम (पृष्ठ ३६)
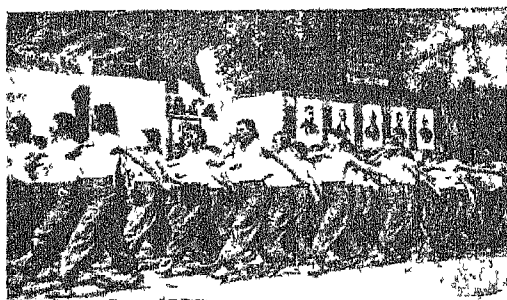
३२. कज़ाकस्तान—कज़ाक तरुणियाँ सैनिक मार्च कर रही हैं (पृष्ठ ३६)

३३. कज़ाकस्तान—कम्सोमोल-तरुणी अकजालोवा सैनिकशिक्षा ले रही है (पृष्ठ ३६)
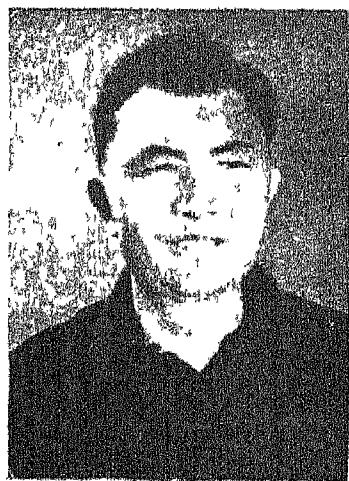
३४. कज़ाकस्तान—कनिश् सत्पयेफ, प्रेसीडेंट साइंस-अकदमी (पृष्ठ ४२)

स्कूल	सन			१६४० में १६१४ की अपेक्षा प्रतिशत वृद्धि
	१६१४	१६२२	१६४०	
प्रारम्भिक स्कूल	१६५८	१३२६	६१११	३१२·१
मिडिल स्कूल	४१	.१	१६६१	४०५
हाई स्कूल	१२		५८३	४८६

१६३६-४० में कजाकस्तान के स्कूलों में ११ लाख ७२ हजार बच्चे पढ़ते थे, यह १६१४ की अपेक्षा १०८ गुना होता है, मिडिल-स्कूलों में ४,१२,००० यानी १६१४ से ८० गुना अधिक। हाई-स्कूल में ३,५८,६०६ पढ़ते थे, यानी १६१४से ८६·७ गुना अधिक। १६४० में कजाकस्तान के सात टेकनिकल-कालेजों में २६,६२१ विद्यार्थी पढ़ते थे, जब कि १६१४ में उनकी संख्या १२० थी, और इसमें भी बहुत अधिक संख्या रूसी विद्यार्थियों की थी। १६२७ में पहला ट्रेनिंग कालेज खुला। आजकल उनमें ८,४३२ विद्यार्थी पढ़ रहे हैं।

१६३६ में ११०४ सिनेमाघर थे, जिनमें ७१६ गाँवों में थे, इनके सिवा ३८ थियेटर भी थे।

१४. साइन्स-अकदमी

१६४५ में कजाकस्तान की पचीसवीं वर्ष-गाँठ के समय कजाक शाखा-अकदमी स्वतंत्र "साइन्स अकदमी" के रूप में परिणत कर दी गई। कजाकस्तान में पहलेपहल अकदमी की शाखा १६३२ में स्थापित हुई। इसका उद्देश्य था, सारे अनुसन्धान-प्रतिष्ठानों के कार्यों को एकताबद्ध करना, और उनका प्रमुख साइन्स-वेत्ताओं के साथ सम्पर्क स्थापित कराना। १६६८ तक शाखा-अकदमी के भूगर्भ, खनिज, धातु-रसायन, विद्युत्शक्ति, ज्योतिशास्त्र, फिजिक्स, प्राणिशास्त्र, वैद्यक, और नाना मानवीय विज्ञानों की शाखाओं में १५००अनुसन्धानकर्ता काम कर रहे थे। कजाकस्तान के साइन्सवेत्ताओं ने प्रजातंत्र की विशाल प्राकृतिक सम्पत्ति की गवेषणा में विशेषकर के भाग लिया। कजाक जाति के इतिहास,

साहित्य, संस्कृति के अध्ययन का भी काम आगे बढ़ा। साइन्स का कोई क्षेत्र न था, जिसमें काम न किया गया हो। भूगर्भ-शास्त्रियों ने ताँबे, सीसे, गिलट, मोलिब्देनम्, तुङ्स्तन् और दूसरी धातुओं का पता लगाया, लोहे और मेंगानीज़ को ढूँढ़ निकाला, जिससे प्रजातंत्र में लोह-फौलाद-कारखाना बन सका। कज़ाक रसायन-शास्त्रियों ने अपने लोह-फौलाद कारखाने के लिये स्थानीय कच्चे माल से अगिया-ईंट तैयार की। उन्होंने स्थानीय फास्फोराइट से फास्फेट खाद बनाने का तरीका निकाला। बनस्पति-शास्त्रियों ने कई उपयोगी जंगली वृक्ष और पौधे ढूँढ़ निकाले; इनमें १५४ औषधि, १२५ तेल, २३५ आहार और चारा, और ४० किस्म के रबर वाले पौधे थे।

कज़ाकस्तान के २७ लाख वर्ग-किलोमीतर क्षेत्रफल में बहुत अधिक भाग धातु-सम्पत्ति से समृद्ध होते हुए भी रेगिस्तान है। शाखा-अकदमी के उपाध्यक्ष उ. उस्पानोफ और उनके साथियों ने इस मृत बयाबान को हरे-भरे कमकर-निवासों और मेवा-बागों तथा खेतों में परिवर्तित करने का निश्चय किया। मध्य-कज़ाकस्तान की आबोहवा दोनों अति में है—गर्मियों की जलती धूप तथा सूखी हवा किसी वनस्पति को जीवित रहने नहीं देती और दूसरी ओर वही काम जाड़े की हद दर्जे की सर्दी और तूफान कर डालते हैं। वैज्ञानिक अपने प्रयोगों में सफल हुए हैं। उन्होंने इस भूमि में आलू, खीरा, टोमाटो, चुकन्दर, तर्बूज़ा, सेब तथा कितनी तरह के शोभादायक वृक्षों और झाड़ियों को उगाया है।

पशु-पालन के बारे में भी उन्होंने बहुत किया है। ऊँचे पहाड़ों के ऊपर विस्तृत चरागाहें हैं, लेकिन वहाँ सर्दी इतनी अधिक है, कि मैदानी भेड़ें उसे बर्दाश्त नहीं कर सकतीं। इन पूर्वी पहाड़ों में बड़े नरम और सुन्दर ऊन वाली जंगली भेड़ें रहती हैं। साइन्स-वेत्ताओं ने मैदानी मादा भेड़ों का इन जंगली भेड़ों से संकरण कराया। अब अलताई की दस हज़ार फुट ऊँची इन चरागाहों में कज़ाक मेषपालक लाखों भेड़ें चरा रहे हैं।

कज़ाक जाति की भाषा और साहित्य के सम्बन्ध में भी वैज्ञानिकों ने बहुत काम किया है। लोक-कथा और लोक-गीत का बहुत बड़ा संकलन करने के अतिरिक्त विद्वानों ने हाई-स्कूलों और कालेजों के लिये कज़ाक-भाषा में पाठ्य पुस्तकें तैयार कीं! पुरातत्त्वज्ञों की खोजों ने कज़ाकस्तान के पुराने इतिहास पर पर्याप्त प्रकाश डाला है।

युद्ध के समय साइन्स का कार्य रुका नहीं था। प्रतिभाशाली कज़ाक भूगर्भ-शास्त्री कानिश सत्पयेफ़ के अधिनायकत्व में अनुसन्धान का कार्य जोर से जारी रहा। धातु-सम्बन्धी बहुत सी निधियों का उद्घाटन किया गया।

१६४६ में सोवियत्-संघ की साइन्स-अकदमी के उपाध्यक्ष तथा प्रसिद्ध धातु-शास्त्री इवान बर्दिन उड़कर अल्मा-अता पहुँचे। पहली जून को कज़ाकस्तान की स्वतन्त्र साइन्स-अकदमी का उद्घाटन होने वाला था। अपनी इस यात्रा का वर्णन लिदिया बाख ने एक लेख में किया है।

अल्मा-अता—बड़ी सुन्दर नगरी है—श्वेत सौध, चौड़े राजपथ, बहुत से चौरस्ते और नगरोद्यान। राजपथों के किनारे लम्बे छायादार वृक्ष जिनमें अधिकतर सफेद के हैं। सड़कों के किनारे से छोटी नहरें बहती हैं। मकानों की चारों ओर बाग लगे हुए हैं। वसन्त में देर तक पानी बरसता रहा, इसलिये वृक्षों और घासों में गहरी हरियाली थी। हम लोगों को नगर से पर्वत की ओर जाने वाली एक उपत्यका के विश्रामगृह में ठहराया गया। अपने बंगले से मैं हिमाच्छादित तुंग गिरिशृंखला को देख सकती थी। घर की चारों ओर बाग थे। वायु स्निग्ध और शुद्ध था। पास के पहाड़ों पर घूमने में आनन्द आता था। प्राकृतिक दृश्य स्विटज़लैन्ड सा मालूम देता था, जहाँ कि मैंने अपना बाल्य बिताया था।

पुराने मित्रों से मिलने और नये मित्र बनाने के लिये यह एक मनोरम स्थान था। खाते समय अतिथि और गृहपति मिलते। उस वक्त एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन सा हो जाता। कितनी ही सोवियत्-जातियों के साइन्सवेत्ता वहाँ

सहृदयता-पूर्वक एक दूसरे से मिलते। कज़ाक लोग अपना स्वतन्त्र राष्ट्रीय-अनुसन्धान-केन्द्र संगठित कर रहे थे। उसी के लिये बधाई देने मास्को, लेनिनग्राद्, सिबेरिया, ताजिकिस्तान, तुर्कमानिस्तान, उज्बेकिस्तान, किर्गिजिस्तान यहाँ तक कि मंगोलिया तक के साइन्सवेत्ता आये हुए थे। कभी-कभी बात कुछ-कुछ साइन्स की बहस सी भी होने लगती थी। यह देखकर सचमुच प्रसन्नता होती थी। रूसी वैज्ञानिक अपने भूतपूर्व कज़ाक शिष्यों के साथ साइन्स-सम्बन्धी बात करते, उन्हें कज़ाक प्रजातन्त्र की पंचवर्षिक योजना पूर्ण करने के बारे में बन्धुतापूर्ण परामर्श दे रहे थे। अकदमिक लीना स्तेर्न सदा अपनी दो कज़ाक छात्राओं के साथ रहतीं। दोनों ही उस समय अनुसन्धान का काम करने-वाली छात्रायें थीं, और लीना की शरीर-शास्त्रीय-प्रयोगशाला में काम करती थी, जब कि युद्धकाल में मास्को से उठाकर वह अल्मा-अता लाई गई थी। लीना की भूतपूर्व छात्रा नेईला बजानोवा प्रथम कज़ाक स्त्री है, जो कि कज़ाक साइन्स अकदमी की उप-अकदमिक निर्वाचित हुई है। वह सोवियत्-संघ की महापालिया मेन्ट की मेम्बर भी है।

सोवियत् साइन्स-अकदमी के साहित्य-भाषातत्व विभाग के अध्यक्ष एवं "सोवियत् श्रम-वीर" अकदमिक इवान मेश्चानिनोफ़ सदा तरुण कज़ाक भाषा-शास्त्रियों के साथ घूमते दिखाई देते। उन्होंने इन तरुणों के साथ कज़ाक-भाषा का कोश तथा व्याकरण निर्माण किया है। कितने ही भाषा और साहित्य-तत्वज्ञ कज़ाक अकदमी के मेम्बर निर्वाचित हुए हैं। अल्कइ मर्गुलान, येसुंखान बेक्माखानोफ़, बेक्सुलेमानोफ़ और खदीजा हैदरोवा सदा प्रसिद्ध इतिहासज्ञा उपअकदमिका अन्ना पंक्रातोवा को घेरे रहते। खदीजा एक कृष्ण-लोचना अभिरामा तरुणी है। वह मास्को में अनुसन्धान-छात्रा थी, और अब कज़ाक अकदमी के इतिहास-इंस्टीट्युट की डिप्टी-डाइरेक्टर है। उन्होंने कज़ाक इतिहास के नये संस्करण के बारे में बार्तालाप किया। इस ग्रन्थ को सबने मिलकर लिखा था। पंक्रोतोवा ने सम्पादन किया था, जब कि उसका

प्रथम संस्करण १६४३ में निकला था। यह अ-रूसी प्रजातन्त्र का प्रथम इतिहास है, और प्राचीनतम समय से द्वितीय विश्वयुद्ध के अन्त तक के बारे में लिखा गया है। इसकी मूल-सामग्री कजाक, चीन, फारसी, अरबी और रूसी भाषाओं से ली गई है। इसका वह अंश बहुत ही दिलचस्प है, जहाँ बतलाया गया है, कि कैसे घुमन्तू कजाक सोवियत् शासन के अधीन रूसी लोगों की सहायता से चौथाई सदी के अन्दर पूँजीवाद की सीढ़ी को लाँघकर एक उद्योग-प्रधान जाति बन समाजवाद तक पहुँच गये।

प्राणिशास्त्री और पशु-उत्पादक कजाक प्रो० मिखाइल ज़ावदोव्स्की के आस-पास जमा रहते थे। प्रो० ज़ावदोव्स्की ने ऐसे हार्मोन (जीवन-रस) के सेरम का आविष्कार किया है, जिसके प्रयोग से भेंड के दो तीन से अधिक बच्चे पैदा होते हैं। इसका कजाकस्तान के १० लाख से अधिक भेड़ों पर प्रयोग किया गया है और इससे भेड़ों की संख्या बहुत बढ़ी है।

धातु-शास्त्री मुख्यतः अकदमिक बर्दिन और भूगर्भशास्त्री अकदमिक जावरित्स्की तथा प्रोफेसर-द्वय नाल्युकिन् और कस्सिन् से बात करते रहते। इन प्रसिद्ध भूगर्भ-शास्त्रियों का कजाकस्तान की भूगर्भीय-निधि के उद्घाटन में बहुत हाथ रहा है और उन्होंने बहुत से कजाक भूगर्भ-शास्त्रियों को पढ़ाया भी है।

भूगर्भ-शास्त्र का कजाकस्तान में बहुत मान है। कजाकस्तान है भी तो हर तरह की धातु-सम्पत्ति से अत्यन्त समृद्ध। प्रजातन्त्र के पास सोवियत् के कोरंदम का ६६%, नमक का ६१%, अनादियम का ७४%, क्रोमियम का ७१%, बोरेक्स का ६६%, चाँदी और कदामियम् का ६७%, सीसे का ५८%, जिंक (जस्ता) का ५३%, और ताँबे का ५१%, है। यह आँकड़े कजाक साईंस-अकदमी के धातु-म्युजिम के प्रदर्शन से लिये गये हैं। यह बहुत ही अच्छा म्युजियम है और यहाँ ही धातुओं के नवीनतम नमूने रखे हुए हैं। जेज़कज़्गान और कुनरद से लाये भिन्न भिन्न प्रकार के ताम्र-पाषाण बहुत महत्वपूर्ण हैं। इनमें से अधिकांश के ऊपर 'सत्पयेफ द्वारा प्राप्त' लिखा हुआ है।

कनिश् सत्पयेफ़ एक गेहुँए रंग का लम्बा ४७ वर्ष का आदमी है। उसकी आँखें चमकीली काली, गाल की हड्डियाँ उभड़ी, और शिष्टाचार बहुत रुचिपूर्ण होता है। २० साल पहले उसने तोम्स्क के पोलि-टेकनिकल कालेज में अपना अध्ययन समाप्त किया और फिर अपने जन्म-स्थान मध्य-कजाकस्तान की भूगर्भीय जाँच-पड़ताल में लग गया। उस समय इस बालुका-भूमि का बाहरी दुनियाँ से उसका कोई सम्बन्ध न था। वहाँ वैज्ञानिक काम करना बहुत मुश्किल था। यह स्मरण रखना चाहिये, कि तुर्क-सिबेरियन रेलवे तीन वर्ष बाद १९३० में खुली, इसलिये इस भूमिका बाहर के इलाकों से सम्बन्ध करने के लिये नजदीक में कोई साधन नहीं था। सत्पयेफ ने इसकी कोई परवाह नहीं की। सारी कठनाइयों और तकलीफों को झेलते उसने जेज़कज्गन की अतुल ताम्र-संपत्ति का पता लगा सर्वे करके सोवियत् उद्योग-धन्धे को प्रदान किया।

कानश सत्पयेफ़ प्रमुख कजाक साइन्स-वेत्ताओं में है। वह सोवियत्-संघ की साइन्स-अकदमी का सहायक-मेम्बर (उप-अकदमिक) है। कई वर्षों से वह सोवियत् अकदमी की अल्मा-अता-शाखा का प्रधान और भूगर्भ-शास्त्र इंस्टीट्यूट का डायरेक्टर है। वह सोवियत् महापार्लियामेंट का मेम्बर है और उसका स्थान प्रजातन्त्र के बड़े राजनीतिक नेताओं में भी है। उसकी बीबी रूसी और स्वयं भी भूगर्भशास्त्र-निष्णाता है। उनकी दो सुन्दर लड़कियाँ हैं।

२ जून को सत्पयेफ कजाक साइन्स-अकदमी का अध्यक्ष चुना गया।

नवीन अकदमी का प्रथम अधिवेशन अल्मा-अता के विशाल ओपरा-थियेटर में हुआ। मञ्च गुलाब और दूसरे सुन्दर फूलों से अलंकृत था। प्रतिष्ठित मेहमान वहाँ बैठे थे। सामने शाल में स्थानीय अधिकारी, कारखानों, शिक्षा-संस्थाओं, कल-खोजों आदि के प्रतिनिधि बैठे थे। प्रजातन्त्र के महामन्त्री उन्दासिनोफ ने अपने उद्घाटन-भाषण में इस बात पर जोर दिया, कि राष्ट्रीय

साइन्स-अकदमी का प्रारम्भ कजाक जनता के सांस्कृतिक जीवन में भारी महत्व रखता है।

कनिश सत्पयेप ने कजाकस्तान की साइन्स-सम्बन्धी मुख्य मुख्य समस्याओं के बारे में कहते हुए जोर दिया, कि नवीन अकदमी को पंचवार्षिक योजना पूर्ण करने में प्रजातन्त्र को मदद करनी होगी।

कई वैज्ञानिक निबन्ध रूसी और कजाक वैज्ञानिकों ने पढ़े। अकदमिक वर्दिन ने वर्तमान पंचवार्षिक योजना के समय सोवियत् लोह-फौलाद-उद्योग के विकास में कजाकस्तान के कर्तव्य और दायित्व के बारे में कहा। प्रो० निकोलाय कस्सिन् ने उन मौलिक भौगोलिक समस्याओं के बारे में कहा, जिनके बारे में कि अकदमी को अगले पांच वर्षों में काम करना है। अकदमी के नये मेम्बर कजाक प्रो० अविकेन वेक्तुरोफ् ने प्रजातन्त्र में रसायनिक उद्योग के विकास की योजना के बारे में बहस की। पंचवार्षिक-योजना में कराताउ (कृष्णागिरि) के फौस्फोराइत निधि को लेकर फोस्फट बनाने के लिये एक बड़ा कारखाना खोला जायगा, जिससे मध्य-एसिया के सारे प्रजातन्त्रों को खाद दी जायगी।

अकदमिक वासिली फेस्सेनकोफ सोवियत् के प्रमुख ज्योतिष-फिजिक्स-वेत्ता और कजाक साइंस-अकदमी के ज्योतिष-इस्टीट्यूट के डायरेक्टर ने अल्मा-अता में हुए इस विषय के अनुसन्धानों के बारे में बताया। अकदमी पहाड़ पर एक वेधशाला बनाने जा रही है।

अल्मा-अता के नाटन-थियेटर ने 'अबका' बाँधना' नामक नाटक को खेला। इसे अकदमी के एक सदस्य मुख्तार अउयेजोफ् ने लिखा है। सभी मेहमानों ने लोक-कथा के आधार पर लिखे कजाक ओपेरा (पद्यमय-नाटक) 'किज़ जिवेक्' को बहुत पसन्द किया।

अधिवेशन के अन्त में लोक-गायक या 'अकिन' बाइबातुर मुकाशेफ्

ने एक गीत मेहमानों के सम्मान में गाया। गाने के साथ उसने एकतारा जैसे वाद्य-यंत्र डोम्ब्रा बजाया।

× × ×

ज्योतिप-फिजिक्स-वेधशाला अल्मा-अता के पहाड़ पर १६४५ के अंत में बननी शुरू हो गई। वेधशाला का स्थान समुद्र-तल से १५०० मीतर (५ हजार फीट) ऊपर चुना गया है। इसके सारे मकान १० एकड़ में होंगे, जिसमें एक बड़ी वेधशाला, कितनी ही वेधशालिकाएँ, एक प्रयोगशाला तथा कर्मचारियों और अनुसन्धान-कर्ताओं के रहने के लिए कई मकान रहेंगे। सबसे बड़ी इमारत प्रयोगशाला की होगी। इसमें एक बड़ा गोल व्याख्या-नागार होगा, जिसकी छत गोल गुम्बज जैसी होगी, पुस्तकालय, अध्ययन-भवन तथा दूसरी कितनी इमारतें होंगी।

मुख्यशाला-जहाँ कि ज्योतिप-सम्बन्धी यन्त्र रहेंगे, उसके ऊपर हटाने लायक लोहे की छत रहेगी, जिसमें कि निरभ्र अकाश के समय तारों का अवलोकन किया जा सके। चूंकि यहाँ भूकम्प की सम्भावना रहती है, इसलिए मकानों के बनाने में कंप-प्रतिरोध का खास तौर से ध्यान रक्खा जायगा।

१६. साहित्य—अबय कुननूबयेफ़ कजाक लिखित-साहित्य का संस्थापक और कवि था। वह १८४५ में पैदा हुआ और १६०४ में मरा। अबय ऊँचे दर्जे का कवि और लेखक ही नहीं था, बल्कि वह बहुत ही प्रगतिशील विचारों का था। कजाक-साहित्य का आरम्भ १८६० के आस-पास उसी से होता है। अबय ने रूसी भाषा और साहित्य को पढ़ा था, लेकिन उसने पढ़कर उसे अपने तक सीमित रखना पसन्द नहीं किया। उसने लोक-साहित्य के गुण को भी समझा।

उस समय कजाक रूस की अधीनता में थे और साथ ही उनमें आपस में बड़ी फूट थी। जनता बहुत गरीब और निर्बल थी। कबीलों के सरदार एक कबीले का दूसरे कबीले से लड़ाया करते थे। घूसखोर जारशाही अफसर

धनियों (बायों) के हर अपराध पर पर्दा डालने के लिये तैयार थे। अपने पशु-पाल, मेष-पाल लोगों के लिये अबय का दिल तड़पता था।

प्रसिद्ध कज़ाक लेखक मुख्तार औइज़ोफ़् ने 'अबय' के नाम से एक अच्छा उपन्यास लिखा है, जिसका रूसी में भी अनुवाद हुआ है। मुख्तार ने कई साल अबय और उसके समय के सम्बन्ध में सामग्री जमा करने में लगाये। कज़ाक-जीवन को उसने बहुत नजदीक से देखा है। उसने अपने उपन्यास के प्रथम खण्ड में उस समय के कज़ाक कबीलों का बहुत सजीव चित्र खींचा है। वह ग्राम्य-जीवन· कज़ाक-परिवार के रीति-रिवाज, उत्सव, दुःख और सुख को बड़े वास्तविक रूप में दिखलाता है। कज़ाक-मैदान और रेगिस्तान के सौन्दर्य का चित्रण उसने जो किया है, वह पाठकों की स्मृति से चिरकाल तक बिलीन न होगा। मुख्तार इस वक्त उपन्यास का दूसरा खण्ड लिखने में लगा है। अबय की ज्ञान-पिपासा और स्वतन्त्र प्रवृत्ति उसे सेमीप्ला-तिन्स्क नगर में ले गई। वहाँ कुछ रूसी उसके मित्र बने। वह रूसी स्कूल में दाखिल हुआ और उसने रूसी साहित्य का परिचय प्राप्त किया, फिर उसने अपनी भाषा में कविता शुरू की। शीघ्र ही उसका नाम कज़ाकस्तान के एक कोने से दूसरे कोने तक फैल गया।

× × ×

युद्ध के समय बहुत से रूसी विद्वानों की तरह प्रसिद्ध भाषा-तत्वज्ञ और प्राचीन रूसी साहित्य के ऊपर अनेक ग्रन्थों के प्रणेता अकदमिक ओर्लोफ़् ने अपना समय उत्तरी कज़ाकस्तान में बिताया। अकदमिक ने स्वयं लिखा है—'मैं कज़ाक-भाषा पढ़ी और कज़ाक-वीर-गाथाओं की मौलिकता से बहुत आकृष्ट हुआ। मैंने उन्हें रूसी साहित्य के विद्यार्थी की दृष्टि से उपस्थित करने का विचार किया...उनके लोक-गीतों के परीक्षण से मालूम हुआ, कि कज़ाक-गाथाएँ सीधे-सादे रेगिस्तानी लोगों के खिलवाड़ जैसी नहीं हैं, वह वस्तुतः कलापूर्ण कृतियाँ हैं।' अकदमिक ओर्लोफ़् ने जिन गाथाओं का संग्रह किया है,

यह सिर्फ कज़ाकों में ही नहीं, बल्कि किर्गिज, कराकल्पक और उज़बेक जैसी दूसरी मध्य एसिया की जातियों में भी बहुत प्रिय हैं।

× × ×

१७. *जम्बुल*—१९४६ में जम्बुल के जीवन की शताब्दी मनाने की तैयारी की जा रही थी, लेकिन महाकवि एक साल पहले ही ९९ साल की उम्र में अपने बंधुओं को छोड़कर चल बसा। जम्बुल की कविताओं का बृहत्-संग्रह अपनी ही भाषा में नहीं हुआ है, बल्कि सोवियत् की विभिन्न ३२ भाषाओं में उसके अनुवाद छपे हैं। कई कविताएँ तो सोवियत् के बाहर की भाषाओं में भी अनुवादित हुई हैं। सिर्फ रूसी भाषा में उसके २० संग्रह प्रकाशित हुए हैं। १९४६ में जम्बुल की कविताओं के संग्रह का संस्करण २ लाख ३० हज़ार का निकला। जम्बुल अनपढ़ कवि था और १८४६ में पैदा हुआ था। सोवियत्-क्रांति से पहले भी वह कविताएँ करता था। डोम्ब्रा हाथ में ले घोड़े पर चढ़ घूम-घूमकर अपने बनाये गीतों को सुनाया करता था। उसकी कविताएँ बहुत जन-प्रिय थीं, किंतु उस वक्त कज़ाक भाषा का कोई सम्मान नहीं था और न किसी ने उन्हें लिखकर सुरक्षित रखने की कोशिश की। क्रांति के बाद कज़ाक भाषा के साथ जम्बुल की कविता का भी सौभाग्य-सितारा चमका और वह पत्रों में धड़ाधड़ छपने लगीं। जम्बुल नई जनता का महान कवि बन गया। उसकी कविताओं के रूसी में अनुवाद हुए और विद्वानों ने उसकी कद्र की। धीरे-धीरे जम्बुल की ख्याति सारे सोवियत्-संघ में हो गई और वह सारे संघ का मान्य कवि बन गया—हाँ, वही गँवार अनपढ़ भाट-कवि। जम्बुल की दृष्टि को भी क्रांति ने बहुत विशाल बना दिया। उसे अपने देश से अनुपम प्रेम था। बूढ़े कवि का लड़का जब जर्मनों के खिलाफ लड़ने के लिये चला, तो डोम्ब्रा हाथ में ले उसने एक कविता गाई। सोवियत् के बहुत से पत्रों ने भिन्न-भिन्न भाषाओं में उसके अनुवाद छापे और उससे बहुत प्रेरणा मिली। जम्बुल का पुत्र लाल-सेना का मेजर युद्ध में मारा गया। कज़ाकस्तान के कुछ बड़े-बड़े नेता इस दुखद

२५ कजाकस्तान—जबुल के अनुवादक कवि पावेल कुज्नेत्सोप (पृष्ठ ४६)

३६ कजाकस्तान—"सोवियत्-जनकलाकारिणी" कुल्यश बइसे तावा (पृष्ठ ५०)

३७. कजाकस्तान—"सोवियत्-जनकलाकार" मनरबेक एर्जानोप (पृष्ठ ५०)

३८. कजाकस्तान—नाट्यकार अल्जपर अबिशेप (पृष्ठ ५०)
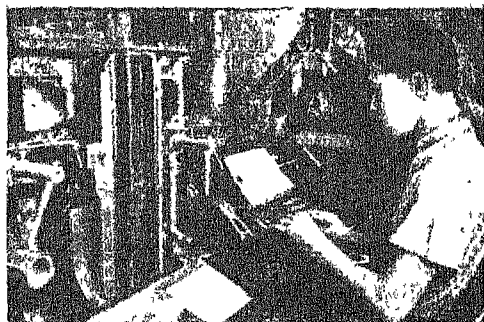
३९. कज़ाकस्तान—अल्मा-अता, लिनोटाइप प्रेस (पृष्ठ ५०)
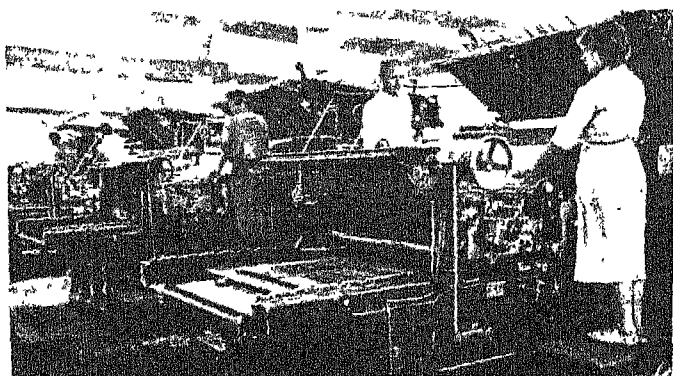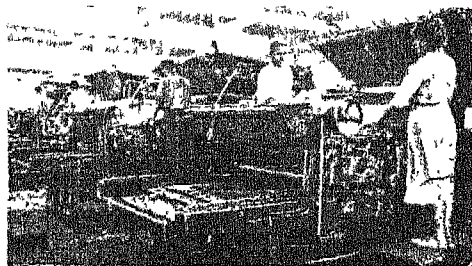
४०. कज़ाकस्तान—अल्मा-अता पुस्तक छापने का प्रेस (पृष्ठ ५०)

४१. कज़ाकस्तान—अल्मा-अता पुस्तक छापने का प्रेस (पृष्ठ ५०)

समाचार को सुनाने के लिये जम्बुल के पास गये। उन्हें कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था, कि कैसे इस क्रूर समाचार को वृद्ध के सामने रक्खें, किंतु रखना तो था ही। जम्बुल ने सुना। उसने डोम्ब्रा मँगवाया और लेकर फिर एक कविता गाई। उसमें पुत्र के उत्सर्ग की प्रशंसा, मातृभूमि के प्रेम के साथ अनंत उत्साह भरा था। यह था जम्बुल, जिसने जीते-जी अपने जीवन ही में बड़े-से-बड़ा संमान प्राप्त किया। तरस तट का औद्योगिक नगर उसके नाम पर जम्बुल बन गया और वह जिला भी आज जम्बुल के नाम ही से पुकारा जाता है।

१८. संगीत और नाटक—१६०० में भी कोई कज़ाक यह सोचने का साहस नहीं कर सकता था, कि ३५-४० साल बाद ही उसका अपना प्रजातंत्र होगा, जिसमें अपना राष्ट्रीय रंगमंच होगा, जहाँ कज़ाकों के अभ्यस्त जीवन का अभिनय होगा। लेकिन आज राजधानी अल्मा-अता में एक विशाल नाट्यशाला खड़ी है। चारों तरफ दीर्घकाय सफेदे के वृक्ष हैं, जिनके पीछे हिमाच्छादित अलाताउ-शिखर दिखाई पड़ता है। इस ओपेरा (पद्य-नाटक) और बैलेत् (मूक-नाट्य) थियेटर में राष्ट्रीय वीरों के रूप अंकित किये जाते हैं। अंकन करनेवाले अभिनेता, गायक और नर्तक कज़ाक नर-नारी हैं, और अभिनय की भाषा भी कज़ाक है। एक पुराने कज़ाक वीर के चरित्र को लेकर इसी तरह 'एर-तर्गुन' का ओपेरा लिखा गया है। दूसरा प्रेम का ओपेरा 'किज़-ज़िबेक' है। एक और ओपेरा 'अमन-गेल्दी' १६१६ में कज़ाक विद्रोह के बारे में है। शताब्दियों से ज़ारशाही सरकार के अत्याचारों से पीड़ित जनता ने १६१६ में आजादी की जंग छेड़ी, लेकिन ज़ार की सेना ने उसे खूनी हाथों से दबा दिया। इसी समय की घटनाओं को आधार बनाकर यह ओपेरा लिखा गया है। ओपेरा का गीतिकार मूकन तूलेबयेफ है, जिसे उसके काम में प्रसिद्ध रूसी संगीतकार य-ब्रुसिलोव्स्की ने सहायता की।

प्रसिद्ध क़ज़ाक़ कवि 'अबय' के नाम से भी एक अच्छा ओपेरा लिखा है। ओपेरा-बैलेत् थियेटर के साथ भी 'अबय' का नाम जुड़ा है। इसके

संगीतकार अहमद जुबानोफ़ तथा लतीफ हमीदी के संगीत बहुत पसंद किये गये।

ओपेरा अपने को सिर्फ जातीय कृतियों तक ही सीमित नहीं रखता। इसमें आजुर्बाइजान, गुर्जी, रूसी और इतालियन ओपेरा भी खेले गये हैं। "यूगिनी ओनेगिन" नामक चेकोस्की के ओपेरा का जैसा अच्छा अभिनय यहाँ किया गया, उसकी रूसी दर्शकों ने भी बड़ी प्रशंसा की। १६४६ में अल्मा-अता में राष्ट्रीय संगीत विद्यालय खोला गया। इस संगीतालय में पच्छिमी संगीत और वाद्य के साथ क़ज़ाक़ संगीत और वाद्ययंत्रों को मुख्य स्थान दिया गया। इसके सत्तर प्रतिशत छात्र कजाक़ हैं। अल्मा-अता रेडियो भी जातीय संगीत के प्रचार में खास हिस्सा ले रहा है। क़ज़ाक़ कथानक में एक बहुत ही मर्मस्पर्शी करुणाकथा "येनलिक् और केबेक" की है। यह उस समय की कथा है, जब कजाक लोग न नगर से परिचित थे न शिक्षा से। कबीलों की प्रथाओं का उस वक्त अखंड राज था। लोक-गायक अपने तम्बू के फर्श पर बैठकर डोम्ब्रा हाथ में लिये गाथा शुरू करता था।

इसी कथा को लेकर बीस साल पहले क़ज़ाक़ नाट्य थियेटर ने अपना आरंभ किया था। बीस कजाक नाट्य-प्रेमियों ने मिलकर उस समय इस थियेटर का आरंभ किया था। अभिनय उनका व्यवसाय नहीं था, लेकिन कजाक-जातीय रंगमंचके प्रति उनकी अपार आस्था और प्रेम था। स० कोजमकुलोफ़ फौजदारी का वकील था। उसने अपना पेशा छोड़कर अभिनेता बनना स्वीकार किया। क० कुअनिस्पयेफ़ कभी खेत-मजूर, फिर चरवाहा, फिर कहानीकथक और अंत में रंगमंचपर पहुँचा। अ० कसउवयेफ अपने लोकगीतों के लिये पहले ही प्रसिद्ध हो चुका था, वह भी रंगमंचपर खिंचकर आया। बीच में यह भी कह देना जरूरी है, कि १६२७ में पेरिसमें उसे गान-संगीत का पुरस्कार मिला था। अपनी धुनके इन दीवानों को शून्य से काम शुरू करना पड़ा, क्योंकि उन दिनों क़ज़ाक़ संस्कृति बहुत ही निम्न तलपर थी। नाट्यकला वह जानते

ही न थे। पूरी निरक्षर क़ज़ाक जनता ने अपने अतीत को कहानियों, गीतों और वीरगाथाओं के रूप में सुरक्षित रखा था। क़ज़ाक लोकगाथायें अत्यन्त सुन्दर हैं। धुन के दीवानों ने उन्हीं को लेकर नाटक का रूप दिया। साहित्य का तरुण विद्यार्थी मुख्तार अउयेजोफ़ ने "येनलिक और केबेक" के प्रेमाख्यान को अपने रूपक का विषय बनाया। यहीं आरम्भ हुआ क़ज़ाकों के प्रथम जातीय नाटक का।

विहुला की करुण गाथा जिस तरह सुननेवालों को द्रवित और मुग्धकर उन पर अपना स्थायी प्रभाव छोड़ती है, उसी तरह येनलिक और केबेक की प्रेमकथा क़ज़ाकों के हृदय को खींचती थी। शताब्दियों तक सुनते-सुनते उसके कई संस्करण प्रचलित हो गये थे। येनलिक को अपना कबीला छोड़कर बाहर प्रेम करने का कोई अधिकार नहीं था। कबीले के वृद्धों ने प्रेम करने के लिए दोनों को प्राण-दंड दिया, सोवियत् शासन द्वारा मुक्त आधुनिक क़ज़ाक दर्शक मंडली के हृदय में वह पुराना पक्षपात नहीं है। उसने जब तरुण केबेक को कबीलों में पारस्परिक खूनी युद्ध न होने देने के लिए तथा अपने प्रेम के लिए बलि होते देखा, तो उसे बहुत रोष और साथ ही तरुण-युगल के प्रति अभिमान हो आया। केबेक ने जब माँग की कि उसे और येनलिक को एक ही कब्र में दफनाया जाय और बाप-माँ के अपराध के लिये बच्चे को दण्ड न दिया जाय, उस वक्त हाल में चारो ओर से दर्शक जनता ने उसके समर्थन में आवाज निकाली।

इसी तरह की कबीलेशाही क्रूर रूढ़ियों के विरुद्ध जनता ने उस समय भी विरोध प्रदर्शन न किया, जब कि मुस्रेपोफ का लोक-कथा के आधार पर लिखा "कोज़ी कोरपेश और बायन-स्लू" नाटक खेला गया। बायन का प्रेमी कोज़ी एक धनी कोदर के हाथों मारा जाता है। बायन को उसके प्रेमी के हत्यारे के हाथों में देना चाहते हैं, किन्तु वह हत्यारे को मार कर अपना अन्त कर लेती है।

धीरे-धीरे क़जाक नाट्यकारों ने अपने नाटकों में खानों और जारशाही अफसरों के अत्याचारों और उनके प्रतिकार में किये जानेवाले विद्रोहों को अपने रूपक का आधार बनाया। मुख्तार ने १६१६ के विद्रोह को लेकर "रात की प्रतिध्वनि" नाटक लिखा। नाट्यकारों और अभिनेताओं ने तेजी से आगे बढ़ना आरम्भ किया—इसमें राष्ट्रीय संस्कृति का विकास और राष्ट्रीय चेतना भी सहायक हुई। हम "अमन गेल्दी" में एक सर्वांगपूर्ण वीर-चरित्र को चित्रित होते देखते हैं। अमन गेल्दी का पार्ट लेनेवाला एलेऊ बाय ऊमुरज़ाकोफ की इसी से बड़ी प्रसिद्धि हुई।

क़जाक नाटक-थियेटर का प्रभाव अपनी सीमाओं तक ही सीमित नहीं है। क़जाक ओपेरा, बेलेत-थियेटर को मास्को के नाट्य-महोत्सव में "लेनिन पदक" से सम्मानित किया गया था। क़जाकस्तान में २० साल पहले कोई नाट्य-परम्परा नहीं थी, लेकिन प्रजातन्त्र की बीसवीं जयन्ती के समय उसके नगरों और कल-खोजों में ३८ नाट्यशालायें हैं, जिनमें ५५ मौलिक और ३५ अनुवादित नाटक खेले गये। उसके ६ नाट्य-स्कूलों में ६८२ लड़के-लड़कियाँ अभिनय की शिक्षा पाती थीं।

× × ×

शिक्षा के साथ-साथ कज़ाक जनता में पुस्तकें पढ़ने की रुचि का बढ़ना स्वभाविक ही है। अबाय ने यद्यपि ८० साल पहले कज़ाक-साहित्य का श्रीगणेश किया, किन्तु तब न साहित्य आगे बढ़ पाया और न पढ़नेवाले ही। सोवियत्-शासन ने यह जरूरी समझा कि सारी जनता शिक्षित हो। उसने शिक्षा का माध्यम मातृभाषा को बनाकर बालकों-बूढ़ों सबके लिए पढ़ना आसान कर दिया, साथ ही अरबी की अवैज्ञानिक लिपि को सार्वजनिक शिक्षा के लिए बाधक समझा। उसे हटाकर रोमन को अपनाया जो १६४० तक रही। अनुभव ने बताया कि सारे सोवियत्-संघ के काम के लिए रूसी लिपि का ज्ञान आवश्यक है। रोमन लिपि को रक्खे रहने से व्यर्थ ही दो-दो तरह के साइन-
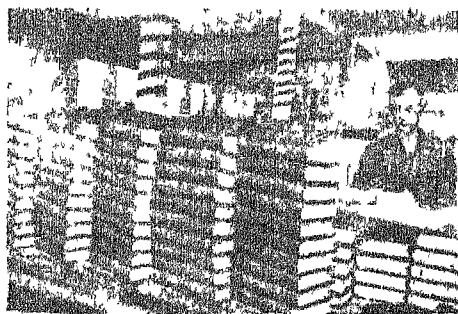
४२. कजाकस्तान—अल्मा-अता, तैयार पुस्तकें (पृष्ठ ५०)

४३. कजाकस्तान—अल्माअता मांस कारखाना (पृष्ठ ५३)
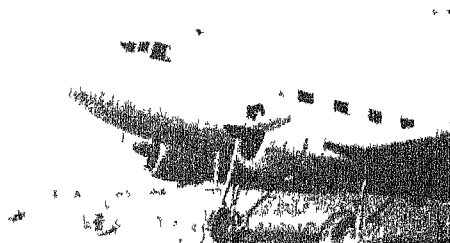
४४. कजाकस्तान—अल्मा-अता, यात्राविमान (पृष्ठ ५३)

४५. प्रेसीडेंट मालदागजी तोकायेफ
किर्गिजिस्तान (पृष्ठ ६४)
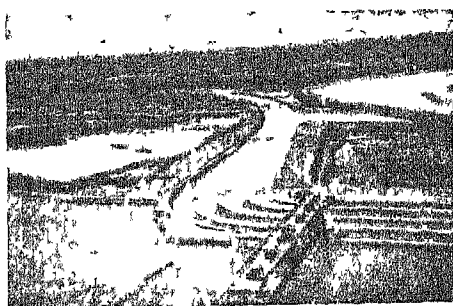
४६. किर्गिजस्तान—चुमिश् की
नहर (पृष्ठ ५३)

४७. किर्गिजिस्तान—फ्रुंजे-ओश की पहाड़ी सड़क (पृष्ठ ७४)

बोर्डों, टाइपराइटरों, छापाखानों को रखे काम को दूना करना होगा। १६४० में रोमन लिपि हटा दी गई और तब से रूसी लिपि ही क़ज़ाक भाषा ने अपनाई। छापा, टाईपराइटर सब चीजों में अब कज़ाक भाषा रूसी की तरह ही सर्वांगपूर्ण है। यह भी याद रखना चाहिए, कि रूसी लिपि में रोमन से करीब डेढ़ गुना अधिक अक्षर हैं, इसीलिए वह अधिक शुद्ध उच्चारणपूर्वक लिखी जा सकती है।

साक्षरता, लिपि और मुद्रणयन्त्रों के सुभीते के साथ लोगों की आमदनी बढ़ जाने से कजाकस्तान में पुस्तकालयों और प्रकाशनों की बड़ी वृद्धि हुई है। १६३६ में वहाँ ३,३०४ सार्वजनिक पुस्तकालय, ५२३७ क्लबघर और २५ म्यूजियम थे। १६१३ में सिर्फ २ म्यूजियम और १४६ मामूली-से पुस्तकालय थे, जो भी यूरोपियनों के लिए ही।

क़ज़ाकस्तान में क़ज़ाकों के अतिरिक्त और भी जातियाँ बसती हैं, जिनमें **उइगुर** और **तुंगन** खास महत्त्व रखती हैं—संख्या के ख्याल से नहीं, बल्कि संस्कृति के ख्याल से। **तुंगन** चीनी तुर्किस्तान के मुसलमान हुए चीनी या मुस्लिम माताओं की चीनी सन्तान हैं। चीनी तुर्किस्तान में अत्याचार पीड़ित हो वह हजारों की तादाद में आ क़ज़ाकस्तान में बस गये हैं। जहाँ सोवियत् नीति के अनुसार अपनी भाषा और संस्कृति के विकास के लिए उन्हें पूरा अवसर प्राप्त है। तुंगन संगीत और नाटक मण्डली बहुत उन्नत है।

उइगुर बहुत पुरानी जाति है। इसका सम्बन्ध हूण और तद्वंश तुर्क जाति से निकट का है। हूणों में भी बुद्ध धर्म पहुँचा था, इसके सबूत कम ही मिलते हैं। तुर्कों पर बौद्ध-धर्म का प्रभाव बहुत अधिक पड़ा था, किन्तु साथ ही बहुत से तुर्क ईसाई और मानी के धर्म को भी मानते थे। इन तीनों धर्मों का पारस्परिक सम्बन्ध बहुत सहृदयतापूर्ण था। जब इस्लाम के जहादी मध्य-एसिया में पहुँचकर अपनी ध्वंस-लीला मचाने लगे, तो इन तीनों धर्मों

के अनुयायियों ने उन अत्याचारों को सहा ही नहीं, बल्कि पूर्वी चीनी तुर्किस्तान से कितने ही बौद्ध भिक्षु भागकर लदाख में भगे, तो साथ ही उनके बन्धु ईसाई (नेस्तोरीय) भी आये। तुर्कों के समय में ही उइगुर जाति जोर पकड़ने लगी पीछे सातवीं से बारहवीं सदी तक तो सांस्कृतिक और आर्थिक दृष्टि से नहीं, बल्कि राजनीतिक दृष्टि से भी वह बहुत सबल थी। चिंगिज़ खान को बड़ा बनने के लिए पहले उइगुरों को ही दबाना पड़ा और फिर मंगोल साम्राज्य में उइगुरों की सहायता अनिवार्य हो गई। उस समय उइगुर सिरियो की लिपि का व्यवहार करते थे। मंगोलों ने उसी लिपि को अपनाया। शिक्षा और संस्कृति तथा व्यापार में भी उइगुर बहुत आगे बढ़े हुए थे। वही मंगोलों के शिक्षक बने। चीन हो या मध्य-एसिया, ईरान हो या रसिया—सभी जगह के मंगोल खानों के दरबार में दीवानी के बड़े-बड़े पदों पर उइगुर प्रतिष्ठित थे। लेखक या कायस्थ का काम अधिकतर भिक्षु या गृहस्थ उइगुरों के हाथों में था। भिक्षु शब्द उइगुर उच्चारण में बख्शी हो जाता है। मंगोल दरबारों में यह शब्द उइगुर लेखक भिक्षुओं के लिए इस्तेमाल होता रहा और पीछे बख्शी लेखक का पर्यायवाचक बन गया। मंगोलों से यह शब्द तैमूरियों के दरबार में आया, जहाँ से बाबर ने इसको हिन्दुस्तान में पहुँचा दिया।

चीनी तुर्किस्तान की बालुका-भूमि में बहुत से बौद्ध ग्रन्थ उइगुर भाषा में मिले हैं, जिससे ज्ञात होता है, कि किसी समय उइगुर-साहित्य काफी समृद्ध था, लेकिन शताब्दियों तक इस जाति पर—जो सभ्यता और नागरिक जीवन से अभ्यस्त हो अधिक शान्तिप्रिय हो चुकी थी—बड़े जुल्म ढाये गये। इस्लाम धर्म स्वीकार कर लेने पर भी उसे त्राण नहीं मिल सका और धीरे-धीरे वह नाशोन्मुख हो रही थी। सोवियत् क्रान्ति ने जातियों को अभयदान दे पुनः उज्जीवित होने का अवसर दिया, इससे उइगुर जाति ने भी फायदा उठाया। क़ज़ाकस्तान में जो उइगुर बसते हैं, उनके बच्चे अपनी भाषा में शिक्षा पाते हैं। इस पुरातन और संस्कृत जाति ने अपना जातीय नाट्यमंच

स्थापित किया है और संख्या कम होने पर भी इस रंगमंच ने काफी ख्याति प्राप्त की है।

१६. प्रकाशन

१६३६ में ३२२ समाचारपत्र निकलते थे, उनकी ग्राहक संख्या ६,४५,००० थी। इसके अतिरिक्त २८ मासिक त्रैमासिक थे। इसी साल क़ज़ाकस्तान में ६२६ पुस्तकों की ८३३६००० प्रतियाँ छापी गईं। जारशाही जमाने में १६१३ में सिर्फ १३ पुस्तकों की ४,००० प्रतियाँ छापी गई थीं।

२०. *अल्माअता* क़ज़ाकस्तान की राजधानी सनातन-हिमाच्छादित शिखर-वाले अलाताउ पर्वतमाला के सानु पर बसा हुआ है। अल्मा-अता का शब्दार्थ है, सेबों का पिता, जो यहाँ के स्वादिष्ट सेबों के लिए बिलकुल उचित है। उपनगर नहीं, शहर के कोने-कोने में सेबों के बगीचे हैं। इन बगीचों और चौड़ी सड़कों के किनारे लगी वृक्ष-पंक्तियों से सारा नगर हरा-भरा मालूम होता है और पहाड़ से देखने पर यह बगीचों का शहर जान पड़ता है।

१६वीं सदी के युद्धों में अल्मा-अता का पुराना नगर ध्वस्त हो गया था। वहीं पर १८८५ में रूसियों ने एक नगर बसाया, जिसका नाम उन्होंने बेर्नी रखा। क्रान्ति से पहले नगर एक दरिद्र कस्बा सा मालूम होता था। सड़कें कच्ची थीं और मकान भी कच्ची ईंट के बने थे। गर्मियों में धूल उड़कर सब जगह छा जाती थी। वसन्त और शरद में वर्षा हो जाने पर कीचड़ से गुजरना मुश्किल हो जाता था। १६१७ में शहर में ३५,००० लोग रहते थे। बिजली का पता न था। रात को अँधेरा-घुप छा जाता था। सारे शहर में रूसियों के लिए दो स्कूल थे। बेर्नी रूस से बहुत दूर एक कोने में बसी हुई थी, उससे रेल का कोई सम्बन्ध न था। सबसे नजदीक का स्टेशन १,००० किलोमीतर या ६०० मील दूर पड़ता था।

शहर में दस्तकारी के काम करने वाले ५७२ मजदूर थे, जो १८ लाख रूबल की चीजें साल में बनाया करते थे।

१६२६ में वेर्नी ने फिर अपना पुराना नाम अल्मा-अता धारण कर लिया और क़ज़ाकस्तान की राजधानी बन गया। तुर्क-सिबेर रेलवे अल्मा-अता से होकर बनाई गई और सिबेरिया को मध्य-एसिया से फौलादी रेखा द्वारा जोड़ दिया गया। शहर की जन-संख्या बड़ी तेजी से बढ़ने लगी और १० साल बाद १६३६ में वह २ लाख ३० हजार हो गई। लड़ाई के वक्त जन-संख्या और बढ़ी।

कारखानों के बढ़ने से नगर की समृद्धि बढ़ी और उसके साथ उसने नया रूप धारण किया। गन्दी-कच्ची सड़कों की जगह चौड़ी अस्फाल्ट बिछी स्वच्छ सड़कें तैयार हो गईं। यातायात के लिए ट्राम और बिजली से चलने वाली बसें आ गईं। घर घर में पानी के नल और बिजली लग गई। पाखाना बहाने के लिए सिवेरेज की भूगर्भीय नालियाँ तैयार हुईं। हजारों नये-नये विशाल प्रासाद तैयार हो गये, जिसमें क़ज़ाक ओपेरा-बैलेत थियेटर की सुन्दर इमारत ख़ासतौर से स्मरणीय है।

१०-१५ साल के अन्दर अल्मा-अता एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण आर्थिक केन्द्र बन गया। चारों ओर कारखाने-ही-कारखाने दीखने लगे, जिनमें कृषि के कच्चे माल से चीजें तैयार होने लगीं। १६४१ में अल्मा-अता के कारखानों में १५,००० मजदूर काम कर रहे थे और वह २० करोड़ रूबल का माल तैयार करते थे, यानी १६१७ की अपेक्षा ११५ गुना।

मातृ-मुक्ति-युद्ध के आरम्भ के बाद यहाँ कई नये कारखाने स्थापित हुए, जिनमें मशीन-निर्माण, बनियान, फलों के कारखाने मुख्य थे। सोवियत फिल्म-उद्योग का भी अल्माअता एक महात्त्वपूर्ण केन्द्र बन गया है। बढ़ते हुए नगर की बिजली की आवश्यकता के लिए चार और पन-बिजली स्टेशन तैयार हो रहे हैं।

अल्मा-अता क़ज़ाक़ जनता का शिक्षा-केन्द्र बन रहा है। यहाँ १ युनिवर्सिटी और ८ कालेज हैं, जिनमें २ ट्रेनिंग-कालेज, १ खान तथा

धातु कालेज, १ मेडिकलकालेज २ कृषिकालेज, १ ला कालेज और १ समाचार पत्र कालेज हैं। इनके अतिरिक्त १६ टेकनिकल और दूसरे स्कूल हैं। स्कूलों में ४० हजार बच्चे पढ़ते हैं। कालेजों और युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों की संख्या १० हजार है। नगर में क़ज़ाक साइन्स-अकदमी की २५ अनुसन्धानशालाएँ काम कर रही हैं, जिनमें प्राकृतिक सम्पत्ति और सांस्कृतिक-स्रोत-सम्बन्धी खोजों का काम होता है।

नगर में प्राणी और वनस्पति-उद्यान हैं, एक ज्योतिष सम्बन्धी बेधशाला है। क़ज़ाक, रूसी और उइग़ुर ओपेराबैलेत थियेटर, नाटक-थियेटर, सेम्फोनी संगीतशाला, एक बड़ा सार्वजनिक पुस्तकालय और एक प्रादेशिक संग्रहालय (म्यूज़ियम) है। कितने ही दैनिक और मासिक-पत्र क़ज़ाक और रूसी भाषा में निकलते हैं। क़ज़ाक राजधानी की समृद्धि और अभिवृद्धि क़ज़ाकस्तान की समृद्धि और अभिवृद्धि की द्योतक है।

२१. नई योजना

क़ज़ाकस्तान की औद्योगिक उपज के मुख्य अंशों की योजना १९५० में निम्न प्रकार पूर्ण होगी :—

फौलाद	(टन)	७२,०००
कोयला	"	१,६४,००,०००
पेट्रोल	"	१२,००,००००
बिजली	(हज़ार किलोवाट)	१८,१०,०००
सुपर-फास्फेट (खाद)	(टन)	२,८०,०००
सूती कपड़ा	(मीटर)	१,६१,००,०००
ऊनी कपड़ा	"	२८,८०,०००
जूता	(जोड़ा)	६८,००,०००
मोजा	"	१,४४,००,०००
खाद्य-तेल	(टन)	६७,५००

मांस	”	१,००,०००
मक्खन	”	१६,०००
दानेदार चीनी	”	७१,०००

१६४६-५० की पंचवार्षिक योजना में क़जाकस्तान के लिए ८ अरब ८० करोड़ रूबल पूँजी लगाना निश्चित किया गया, जिसमें ७३ करोड़ ७० लाख रूबल प्रजातन्त्र की अधीनता के कामों में लगेंगे।

करागन्दा कोयला-क्षेत्र में ६५ लाख टन की क्षमतावाली १७ कोयला खानें काम करने लगेंगी। अक्त्याबिन्स्क क्षेत्र में २ लाख ७० हजार टन क्षमतावाली चार कोयला खानें और एकबास्तुज क्षेत्र में ६ लाख टन की क्षमतावाली खुले काट की एक कोयला-खान काम करेगी। बिजली-उत्पादन की क्षमता में ३ लाख ६८ हजार किलोवाट की वृद्धि होगी, इसमें १ लाख ४ हजार किलोवाट पनबिजली स्टेशन के होंगे। प्रजातन्त्र की अधीनता में चार लाख टन की क्षमतावाली कोयला-खानें काम करने लगेंगी।

कज़ाक-फौलाद-मिल का बनना पूरा हो जायेगा और एक नये लोहा फौलाद-कारखाने का निर्माण आरंभ हो जायगा।

१६४० की तुलना से १६५० में ताँबे की उपज २·६ गुना, सीसे की उपज १·३ गुना अधिक होगी। राँगा और एलेक्ट्रोलिटिक ताँबे का उत्पादन शुरू होगा। चेजकज़गन क्षेत्र से ताँबा अधिक मात्रा में निकलने लगेगा। चिमकन्द काँच-कारखाने के लिए कच्चा माल बढ़ जायगा।

५ लाख ३० हजार टन की क्षमतावाला सीमेन्ट-कारखाना और करातार की धातु-पाषाण की खानें काम करने लगेंगी, सुपर-फोस्फेट के मौजूदा कारखानों की उपज बढ़ाई जायगी और एक नया कारखाना खोला जायगा।

प्रजातंत्र में मक्खन-विश्लेषक और दुग्धपात्र के उत्पादन का प्रबन्ध किया जायगा। कृषि-मशीन-कारखाना, सेमीप्लातिन्स्क की चमड़ा फैक्टरी और अल्माअता की कपड़ा-मिल पूरी क्षमता से काम करें, इसका प्रबन्ध किया

जायगा। मांस पैक करने और बरफ करने के ८ कारखाने, मक्खन की २०० फैक्टरियाँ, दूध की टिनबन्दी के २ कारखाने बनाकर चालू किये जायेंगे।

क़ज़ाकस्तान संघ-सोवियत् की अधीनता में चलनेवाले कारखानों की उपज १९५० में १ अरब ३० करोड़ रूबल हो जायगी। स्थानीय अधीनतावाले राजकीय उद्योग तथा औद्योगिक सहयोग-समितियों की ३७ करोड़ रूबल भी पूर्वोक्त रकम में शामिल है।

अतासूई और करकरालिन्स्क क्षेत्रों में १० करोड़ टन लोह पाषण देनेवाले येज़कज्गन, इर्जं, बोश्चेकुल क्षेत्रों में ८ लाख १३ हजार टन ताँबा देनेवाले औद्योगिक स्रोत तैयार कर लिए जायेंगे। करातउ क्षेत्र में सीसा, मोलिब्देनम्, तुंगस्तेन, ट्रायोक्साइड, बराइट और फांस्फोराइट औद्योगिक स्रोत तथा बोरेट और जिप्सम् की खानें उत्पादन के लिए तैयार होंगी। साढ़े तीन करोड़ टन की क्षमतावाली कोयला-खानें ५९ स्थानों में चन्दवक कटाई के लिए तैयार होंगी, इसमें करागन्दा क्षेत्र की २ करोड़ ३९ लाख टन कोकवाले कोयले की खान भी शामिल है। औद्योगिक पेट्रोलके स्रोतों को १०८० ट्यूबवेल के स्थानोंद्वारा बढ़ाया जायगा। सोडा उद्योग के लिए कच्चे माल की उपज का एक नया क्षेत्र तैयार किया जायगा।

७२ लाख ८६ हजार हेक्टरों में खेती की जायगी, इसमें ६० लाख २ हजार हेक्तर कल-खोजों के होंगे। ५३ लाख ३६ हजार हेक्तर में अनाज बोया जायगा, इसमें ४६ लाख ८१ हजार हेक्तर कलखोजी भूमि रहेगी। ३ लाख ४० हजार हेक्तर में औद्योगिक फसलें बोई जायेंगी, इसमें ३ लाख १६ हजार हेक्तर कलखोज के होंगे। २ लाख ८० हजार हेक्तर में तरबूजा, आलू और दूसरी तरकारियाँ पैदा की जायँगी, इसमें १ लाख ५ हजार हेक्तर भूमि कलखोज की होगी। १३ लाख ३० हजार हेक्तर में घास-चारे की फसल उपजाई जायगी, जिसमें ९ लाख हेक्तर जमीन कलखोजी होगी। कपास बोने के खेत ८५ हजार ४ सौ हेक्तर हो जायेंगे। ऊंचे दर्जे के तम्बाकू की खेती भी की जायगी।

१६५० तक पशुओं की संख्या निम्न प्रकार तय की गई है—

घोड़े	१५,१६,०००	जिनमें	११,६१,०००	कलखोजों के
ढोर	४४,००,०००	,,	२३,००,०००	,,
भेड़-बकरियाँ	१,६०,५०,०००	,,	१,५०,००,०००	,,
सूअर	३,६२,०००	,,	२,०२,०००	,,

जल संरक्षण और भी विकसित किया जायगा। सिंचाई के उपयुक्त क्षेत्रों में नहरों की व्यवस्था बढ़ाई जायगी। जिस इलाके में घुमन्तू चराई होती है, वहाँ पानी पहुँचाने का प्रबन्ध होगा। **करागन्दा** और **येज़कज़गन** के कारखानों और बस्तियों के लिए प्रर्याप्त जल का इन्तजाम किया जायगा।

सिर्-दरिया पर नहर के साथ **किज़िल-उर्दा** का बाँध शुरू होगा। दो लाख हेक्तर जमीन सींचने के लिये और नहरें बनाई जायेंगी। जल का उपयोग अधिक मितव्ययिता से हो, इसका प्रबन्ध किया जायगा।

प्रजातंत्र के उत्तरी और बयाबानी इलाके में कलखोजों की सिंचाई वाली भूमि के निमित्त खतरे के समय उपयोग के लिए बड़े पैमाने पर छोटी नहरें तैयार की जायेंगी, साथ ही निर्जल प्रदेशों की सिंचाई के लिए छोटी छोटी जल नलियाँ बनाई जायेंगी। रेलवे की यातायात-व्यवस्था को काफी विस्तृत किया जायगा।

क़ज़ाक प्रजातंत्र के शहरों में राज्यस्वामिक घरों के लिए १६५० तक २१ लाख ७० हजार वर्ग-मीतर फर्श वासस्थान के रहने के लिए मौजूद होंगे, जिनमें ४५ हजार वर्ग-मीतर स्थानीय सोवियतों द्वारा तैयार किये जायेंगे।

सांस्कृतिक विकास और स्वास्थ्य-रक्षा के सम्बन्ध में मुख्य करणीय निम्न प्रकार हैं—स्कूलों की संख्या ७,६८५; छात्रों की संख्या ११,३०,०००; अस्पतालों में चारपाइयों की संख्या ३४,०००।

२२ जम्बुल की दो कविताएँ

यहाँ जनकवि जम्बुल की दो कविताएँ दी जाती है, जिनमें पहली सोवियत्-संघ की प्रशंसा में है—

हे मेरे देश ! मेरे विजयी ।
सारी दुनिया में तू अद्वितीय ॥
प्रहसित, प्रफुल्लित, प्रकाशित ।
कीर्ति, वीरता तुझसे तरंगित ॥
सुखमय, सुन्दर, मनोहर स्वप्न सा ।
पूरित अभिलाषाओं जैसा ॥
मन के भीतर सदा रहा ।
सिर से पैर तक प्रसन्न, समुज्ज्वल ॥
जहाँ भी मैं दृष्टि डालता ।
गुलाब-लाला प्रफुल्लित देखता ॥
सभी जगह कल-खोज की खेतियाँ ।
ईरान की सुन्दर कालीन जैसी ॥
सदा आनन्द उमड़ता ।
जहाँ करूँ दृष्टि आकाश में ॥
श्वेत पक्षधर गरुड दीखता ।
देश में दूर तीव्र उड़ता ॥
दर्पण सी स्वच्छ तरंगे ।
वन में नदियाँ बह रही हैं ॥
सर्वत्र मिलें घरघरातीं ।
रेलें चलती हैं हरहरातीं ॥
अन्न सोना से भरी हैं निधियाँ ।
गिनती जिनकी न हो सकती ॥

पशु और ढोर बहुत सुखी ।
अगनित भेड़ें हैं वन पर्वतों में ।
हम प्रिय देश के सदा ।
महागिरिसम हैं रक्षक ॥
अपनी सम्पत्ति की रक्षा मे ।
जागरुक, साहसी बीर हम हैं ॥
शान्ति के हम पक्षपाती हैं ।
किन्तु देश-रक्षाके लिए तैयार हैं ॥
यहाँ साल के बारहो मास ।
मधुकी नदियां सी बहुत बालियाँ हैं ॥
स्तालिनी नियम को हम मानते हैं ।
सौभाग्य और समृद्धि है हमारे पास ॥
हमबहुत परिवार हैं,किन्तु एक विचार ।
जीवन हमारा शिव सुन्दर है ॥
सभी बातों में अग्रणी ।
नमूना हम दुनिया में हैं ॥
तुन्द्रा से ले पामीर पर्वत तक ।
सुन्दर ध्वनि गूँज रही है ॥
सभी गानों में प्रसिद्धि है ।
स्तालिन नेता महान् ॥
प्रसिद्धि तेरी हो, ऐ सोवियत् ।
हे संसार के प्रसिद्ध उपवन ॥

महान् स्तालिन का कानून

मेरे गीत ! औलों[1] की सैर कर ।
सुनो मेरी बात ऐ वन जंगल ॥
जीवन में बहुतेरे कानून देखे ।
उनके नीचे दब दबके झुका मैं ।
उन कानूनों से आँसू मेरे बहे ॥
उनके घाव के दाग मुँह पर प्रगट हुए ॥
वह धर्म के कानून, अल्लाह के कानून ।
और मनहूस निकोला के कानून ॥
जिन्होंने औलों से बच्चों को छीना ।
लड़कियों का पशुओं की तरह सौदा किया ॥
जनता के जीवन को असह्य कर दिया ।
औलों को एकदम बरबाद कर दिया ॥
उन कानूनों से बाय मोटे हुए ।
जो गरीबों की पीठ पर भार हुए ॥
उन कानूनों से आदमी भुक्खड़ बना ।
सिर पैर से नंगा मरणोन्मुख हुआ ॥
मेरे गीत ! औलों की सैर कर ।
सुनो जम्बुल की बात ऐ वन जंगल ॥
छोटा रास्ता बड़ा राह बना ।
दुखियों की आँखों से समुद्र पैदा हुआ ॥
भीतर फौलाद सा कड़ा पत्थर आया ।
मानवपुत्र को ज्ञान वाणी दी ॥

---

[1] क़ज़ाक गाँव, जो अधिकतर तम्बुओं के बने हुआ करते थे ।

सुन्दर जीवन और स्वस्थ संतान दी।
उनसे विश्व का सौभाग्य चमका ॥
उनसे कलखोज में नवसंगीत पहुँचा।
हृदयों को सदा स्वर प्रदान किया ॥
आ हे दुंबुरा! इस क्षण स्वर दे।
कलखोजों के खेमे में स्वर दे स्वर दे ॥
मेरे गीत ओलों की सैर कर।
सुनो आकिन[1] की बात ऐ वन जंगल ॥
सुनो कस्लिक, कस्कीलिन, कराकुल।
नए गीतों को गाता बूढ़ा जम्बुल ॥
सुनो कानून महा सोवियत् का।
कि जैसा न कभी दुनिया ने देखा ॥
नये कानून का गीत गाता हूँ।
जिससे मरु वन फल फूल से भरता ॥
यह कानून मेरे हृदय को भरता है।
तरुणोद्यान के फूल खिलाता है ॥
यह कानून दिली सेवा करता है।
मेहनतकारों के भाग्य की शान है ॥
कैसा कानून जो जवानों के लिए।
नामी बहादुर जवानों के लिए ॥
शानदार रास्ता खोलता है।
वह दृढ़ पग रखते चले जा रहे हैं ॥
यह कानून जिसने कि इस शुभ समय में।

1 लोक-कवि

क़ज़ाकस्तान प्रजातन्त्र

कुलश की प्रसिद्धि कर दी सब जगह ॥
यह कानून कि आँखों से ।
मेरी प्रसन्न संताने स्कूल जा रही हैं ॥
सभी लाल राजधानी में गाते हैं ।
सोवियत समग्र एक दिल हो ॥
जिस कानून ने बराबर किया ।
सभी प्रजातन्त्रों को बिरादर किया ॥
जनता मेरी, जंबुल गा रहा है ।
गा रहा है और झूम रहा है ॥
ऐसे महा कानून को गा रहा है ।
जनता की पारस्परिक मित्रता को गा रहा है ॥
इस चमन के आब और रंग को गा रहा है ।
जिससे सारा वतन प्रफुल्लित है ॥
ऐ साथ गानेवाले भाइयो ! गाओ ।
विजयी गान को एक आवाज में ॥
कृपा विक्रम भरे नेता के प्रेम से ।
करोड़ों दिल हुए गर्म जोशीले ॥
हमारे साथ हमारा स्तालिन सहृदय है ।
धीर, ज्ञानी प्रिय सुहृद है ॥

२

किर्गिज़िस्तान प्रजातन्त्र

क्षेत्रफल	७८,००० वर्गमील
जनसंख्या	१९,००,०००
राजधानी फ्रुंजे, जनसंख्या	१,००,०००

१. इतिहास

किर्गिज़ लोगों का निवास पामीर और थ्यानूशान के पहाड़ों में है। यह पहाड़ हिमालय के ही पच्छिमी बढ़ाव हैं। किर्गिज़ अपने तम्बुओं और ऊँट-भेड़ों को लिये ऊँची पठारों में विचरा करते थे। मध्य-एसिया की जातियों में शिक्षा और संस्कृति में यह सबसे पिछड़े हुए थे। जहादियों से जान बचाने के लिये इन्होंने इस्लाम कबूल कर लिया सही, मगर अपने बहुत सारे रीति-रिवाजों को नहीं छोड़ा। घुड़सवारी किर्गिज़ स्त्रियों में भी देखी जाती है। पर्दे को उन्होंने कभी नहीं कबूल किया। सभ्य बस्तियों से दूर उत्तुंग पर्वतों के ये मुक्त अधिवासी रहे।

किर्गिज़िस्तान नाम इनके देश को सोवियत् क्रान्ति ने दिया। यह प्रजातन्त्र सोवियत् के सीमान्त पर चीनी तुर्किस्तान से लगा हुआ पश्चिम की तरफ है। मध्य-एसिया की बड़ी-बड़ी नदियाँ सभी यहाँ से निकलती हैं। आमू दरिया सिर दरिया, चू और तलस किर्गिज के हिमाच्छादित पर्वतों से निकलती हैं और गंगा, ब्रह्मपुत्र तथा सिन्ध की तरह इन्हीं पहाड़ी हिमानियों से जल प्राप्त करती हैं। किर्गिज़िस्तान की भूमि ७१६ मीतर (२½ हजार फीट) से ७,१२७ मीतर (२२-२३ हजार फीट) तक ऊँची है। ऊँचाई के अनुसार

जहाँ हर तरह की आबोहवा है और कहीं-कहीं वह सर्दी में सिबेरिया के उत्तरी भागों से होड़ लगाता है, तो साथ ही जहाँ-तहाँ जंगल, घास और बालू की भूमि भी मिलती है।

किर्गिज़ लोग तुर्क जाति के हैं। इनका सबसे पहले पता ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी में चीनी पुस्तकों से लगता है। वहाँ उन्हें कि-लि-कि-जि के नाम से याद किया गया है। उस समय ये लोग मंगोलिया के पश्चिम में रहा करते थे। अब भी इनके कुछ सम्बन्धी वहाँ रह गये हैं। मंगोलों के समय (१३वीं से १५वीं सदी) में ये दक्षिण की तरफ बढ़े, और बीच के प्रदेशों को पार कर १६वीं सदी में वर्तमान स्थान में पहुँचे। यहीं आकर इन्होंने इस्लाम-धर्म स्वीकार किया। त्यान्‌शान् और पामीर के पहाड़ इनके घुमन्तू जीवन के बड़े अनुकूल सिद्ध हुए। कड़ी सर्दी के कारण इन स्थानों पर जाने के लिये दूसरे लोग उतने इच्छुक नहीं थे, तो भी पड़ोसी—समरकन्द और खोतन—के राज्यों ने जब तब इनके शान्त जीवन को भंग करने की कोशिश की। किर्गिज़ों को जहाँ अपने प्राकृतिक धर्म से इस्लाम धर्म के अधिक संस्कृत और सभ्य होने से उसकी तरफ झुकना पड़ा, वहाँ साथ ही उनके लिए आत्म-रक्षा का भी सवाल था। काफ़िर को गुलाम बनाकर बेचने का हर मुसलमान को अधिकार था, इसलिये पड़ोसी डाकू इन्हें पकड़कर बेच देते थे। इस्लाम स्वीकार करने पर इससे उनकी रक्षा होती थी।

१८वीं सदी के आरम्भ में पीतर महान् ने बहुत कोशिश की, कि किसी तरह हिन्दुस्तान पहुँचे। औरंगजेब का शासन खतम हो गया था और सारे भारत में मनमाने राज्य क़ायम हो रहे थे। विदेशी शक्तियाँ षड्यन्त्र कर रही थीं, किन्तु अभी किसी ने राज्यशक्ति लेने में सफलता न पाई थी। यह समय था, जब कि पीतर भी भारत पहुँचने के लिए हाथ-पैर मार रहा था। बुख़गोल्‌स्क और बेकोविच् के अभियान इसीलिए मध्य-एसिया की तरफ भेजे गये, जिसमें बेकोविच् को खीवा बुखारा होके आना था, और बुख़गोल्‌स्क

को यारकन्द-काशगर के रास्ते। लेकिन अभी यात्रा-साधन सुलभ नहीं थे और स्थल-मार्ग समुद्र-मार्ग से कहीं अधिक कठिन था। इस समय क़ज़ाकस्तान का सारा पूर्वी भाग और इली-उपत्यका ज़ुंगर मंगोलों के हाथ में थी। बुखगोल्त्स्क का सहायक एक स्वीडिश अफसर रेनाट को ज़ुंगरों ने पकड़ लिया और उसने उन्हें बहुत से युद्ध के हथियारों और लड़ने की बात सिखाई। आगे चलकर चीनियों ने ज़ुंगर-राज्य को नष्ट किया, किन्तु उससे अधिक लाभ रूसियों को हुआ और उन्होंने पूर्वी क़ज़ाकस्तान को अपने हाथों में कर लिया। पराये देश में अपनी शक्ति दृढ़ करने के लिए जहाँ रूसियों ने अपनी सैनिक छावनियाँ बैठाईं, वहाँ साथ ही यूरोपीय किसानों—विशेषकर रूसी और उक्रइनी किसानों-को आकर बसने के लिये प्रोत्साहित किया। यह कोई नई बात नहीं है। सभी विदेशी विजेताओं ने ऐसा किया है। यूनानियों ने अपने एसियाई राज्य में ऐसी अनेक बस्तियाँ बसाई थीं। अंग्रेजों का देश यदि भारत से मिला या नजदीक होता, तो वह भी ऐसा करते, बल्कि निलहे गोरों और चायबगान के साहबों के रूप में उन्होंने कुछ किया भी। रूसी सरकार की इस नीति ने जिस तरह क़ज़ाकों को कृषि-उपयोगी उर्वर भूमि से वंचित किया, उसी तरह किर्गिज़ों को चू नदी की उर्वर उपत्यका से भी निकलने को मजबूर किया। यह उर्वर-उपत्यकायें कभी-कभी घुमन्तुओं को एक जगह बस कर खेती करने के लिये आकृष्ट करती थीं। उन्हें छीनने का मतलब था, किर्गिज़ों की अधिक संख्या को फिर घुमन्तूपन के लिये मजबूर करना। किर्गिज चू की उपत्यका से ही नहीं बल्कि इस्सिकुल महासरोवर के तट से भी भगाये गये।

किर्गिज़ों के ऊपर सर्व शक्तिमान् रूसी शासक अपना कठोर शासन कर रहे थे, साथ ही उन्होंने किर्गिज़ धनियों—बायों और मनापों—को अपने हाथ में किया था। बायों-मनापों ने स्वार्थसिद्धि के लिए रूसी सरकार के हाथ में अपने को बेंच दिया था। किर्गिज़ सारे अत्याचार को सहते आये थे। पहला विश्व-युद्ध आया, जार की सेना युद्धक्षेत्र में मार खाती रही, और आदमियों की

जरूरत थी। लड़ना नहीं था, तो भी एसियायियों से दूसरे शारीरिक काम लिये जा सकते थे। १६१६ में जबर्दस्ती एसियायियों को भर्ती करने के लिये हुकुम निकला। एक किर्गिज बूढ़े ने उसके बारे में कहा "हमारे पास कागज लेकर आदमी आया और बोला, 'सभी नौजवान मेरे साथ चलें।' हमने सोचा यह क्या है? हमसे कहता है कि लड़ाई में चलो और रूसी मजे में यहाँ बैठे हुए शैतान की तरह जुल्म कर रहे हैं। हम किर्गिज शैतान के हाथ मरने को तैयार नहीं थे। हमने आपस में कहा, लड़ाई बहुत दूर है, वहाँ घोड़े पर चढ़के जाने में तीन साल लगते हैं।"

जबर्दस्ती भरती के हुकुम ने लोगों में आग लगा दी।

५ अगस्त १६१६ को रूसी सरकार के अफसरों ने कितने ही किर्गिजों को पकड़कर जेल में डाल दिया और समझा कि इस तरह दबकर लोग भरती होने लगेंगे, लेकिन आग रुकी नहीं। यद्यपि इससे धनी किर्गिजों पर असर पड़ा और वह डरकर २० अगस्त को अफसरों से बात करने के लिये पिशपेक (आधुनिक फ्रुंजे) पहुँचे। वह सिर्फ जार की सरकार ही से नहीं भय खा रहे थे, बल्कि उन्हें किर्गिज तरुणों से भी भय होने लगा था। इन ३०० किर्गिज बड़े-बूढ़ों ने रूसी सरकारी अफसरों को पर्वत में सेना भेजने के लिये जोर दिया और दूसरे दिन से विद्रोह शुरू हो गया। सब जगह रूसी सैनिक चौकियों और बस्तियों पर हमला होने लगा। आतंकित जारशाही सरकार के होश उड़ गये और उसने खूनी हाथों से विद्रोह को दबाना शुरू किया। एक के बाद एक स्थान किर्गिज विद्रोहियों के हाथ में चले गये। पीछे स्थान और चौकियाँ रूसियों के हाथ में लौटी, बहुत से किर्गिज डर से भाग कर चीनी तुर्किस्तान में चले गये। लेकिन किर्गिजों को बहुत दिनों तक दबे रहना नहीं पड़ा। १६१७ के शुरू में जार को हटा दिया गया। करेन्स्की और दूसरे नरम-दली नेता सारी शक्ति लगाकर क्रान्ति को आगे बढ़ने से रोक रहे थे, किन्तु रूस के किसानों मजदूरों ने ७ नवम्बर (१६१७) उन्हें हटाकर अपना राज्य स्थापित किया, एसिया की पिछड़ी जातियों को—जो

ज़ारशाही निरंकुशता से 'त्राहि माम्, 'त्राहि माम्' कर रही थीं—उठने का मौका मिला।

१६२६ में किर्गिज़ों का प्रदेश—किर्गिज़िस्तान-स्वायत्त-सोवियत-समाज-वादी-प्रजातंत्र बनाया गया, और १६३६ में उसे संघ-प्रजातंत्र का दर्जा देकर दूसरे बड़े प्रजातंत्रों की पाँती में बैठा दिया गया। अब उसे अपनी सेना और विदेश में राजदूत रखने का अधिकार है, सोवियत्-संघ में रहना न रहना किर्गिज़ जनता की इच्छा पर निर्भर है।

२. *इस्सिक्कुल*—

किर्गिजिस्तान के पहाड़ी इलाके में रेलवे-लाइनों का ले जाना बहुत मुश्किल है, तो भी वहाँ कुछ रेलें बनाई गई हैं और सभी सोवियत शासन-काल ही में। पहले तुर्क-सिबेर रेलवे से राजधानी फ्रुंजे (पुराने पिश्पेक्) को मिलाया गया, जो कि चू नदी के तट पर है। आगे दुर्गम पहाड़ों से चू नदी की धारा अट्टहास करती आती है, और उसमें से रेल निकालना आसान नहीं है। किन्तु त्यान्शान् के महासरोवर इस्सिक्कुल से फ्रुंजे का मिलाना देश की आर्थिक उन्नति के लिए आवश्यक था। इस्सिक्-कुल की मछलियाँ ही ही नहीं बल्कि उसके किनारे अवस्थित कोयले की खानों के लिए भी रेल की अत्यन्त आवश्यकता थी। हाँ, इन सँकरे पहाड़ी दर्रों में साँप की तरह बल खाती चू की धारा के साथ रेल का बनाना आसान नहीं था। लेकिन इंजीनियरों ने सर्वे शुरू कर दी। सर्वे तो वैसे ४० साल पहले भी शुरू की गई थी और समझा गया था, कि इन उत्तुङ्ग पर्वतों के भीतर से रेल निकालना असम्भव है। बूमदर्रे को पहले उन्होंने देखना शुरू किया। यह वस्तुतः दोनों तरफ खड़े हिमाच्छादित पर्वतों की दीवार में एक दरार सा मालूम होता है और २५ किलोमितर के इस दर्रे में पैर रखने की जगह नहीं है। इंजीनियरों ने नापा, रेलवे की योजना बनाई। फ्रुंजे को इस्सिक-कुल-तट पर अवस्थित रिबाची बन्दरगाह से मिलाना निश्चित हो गया।

१९४६ के मध्य में सड़क बनाने का काम शुरू हुआ। रेलवे बनाने वालों ने बारूद से उड़ा उड़ाकर उस प्रस्तरमय पहाड़ों में रास्ता बनाना शुरू किया, जिनमें पैर रखने की भी गुंजाइश न थी। सिर्फ सड़क बना देना ही काफ़ी नहीं था, बल्कि सड़क की ऊपर से गिरनेवाली हिमानी और चट्टानों से भी रक्षा करनी थी। इसका अनुभव उन्हें बनाते वक्त ही होगया, फ्रुंजे से २१वें किलोमीतर पर एक पहाड़ ही आ गिरा और सड़क पर करोड़ों घन-मीतर मिट्टी और पत्थर जमा हो गया। इससे सारी लाइन के काम में चौथाई का बोझ और बढ़ गया, लेकिन रेलवे बनानेवाले इसके लिए तैयार थे। उन्हें इन घनघोर पर्वतों में होकर ७८ किलोमीतर लम्बी रेलवे लाइन जरूर बनानी थी और उसे आखिर बनाकर छोड़ा। आज फ्रुंजे से रेल इस्सिक्कुल के किनारे रिबाची तक चल रही है।

इस्सिक्कुल वही झील है, जिसके किनारे से युन्चाङ् गुज़रा था। युन-च्वाङ् ने इसे समुद्र कहा, और है भी यह समुद्र सी ही। पूर्व-पश्चिम लम्बी इस झील को आरपार नहीं देख सकते। इसके उत्तर तरफ कुंगई-अलाताउ-पर्वत-माला और दक्षिण में तेर्स्केई-अलाताउ पर्वत माला है। चीन की तरफ से आने पर अक्सू नगर से युन्चांङ् ने तुर्फान के बाद बेदल तथा अक्बेल की जोत्तों को पार किया और वह इस विशाल सरोवर के किनारे पहुँचा। वैसे चीन से रेशमी व्यापार का वणिक्-पथ दूसरे रास्तों से भी था, किन्तु उनमें एक रास्ता इस्सिक्कुल के किनारे से गुजरता था।

इस्सिक्कुल के किनारे की पर्वत-मालायें सदा बर्फ से ढँकी रहती हैं। यह हिमालय के मानसरोवर जैसी किन्तु उससे कहीं बड़ी झील है। समुद्र तल से यह १½ किलोमीतर ऊपर अवस्थित है, तथा इसकी गहराई बीच में ६००-७०० मीतर तक है। झील के पूरब तरफ कुछ हटकर कराकोल नाम की कोयले की खान है, जिसमें ज़ारशाही के जमाने में भी काम होता था। कराकोल का नाम

आजकल प्र्ज़ेवाल्स्क है। आस-पास जमीन पहाड़ों से घिरी किन्तु चौरस है। यह मेवों और अनाज़ के लिये बहुत ही उर्वर भूमि है।

सरोवर के किनारे कितने ही गरम पानी के चश्मे हैं, जहाँ बहुत से स्वास्थ्य-घर बने हुए हैं। पुराने समय में भी यहाँ चिकित्सा के लिए सारे मध्य एसिया से लोग आया करते थे। इस्सिककुल का अर्थ है, उष्ण-सरोवर। इतनी ऊँचाई होने पर भी जाड़ों में इसका पानी जमता नहीं है।

आजकल इस्सिककुल में स्टीमर चलते हैं। मछुए नये ढंग से मछलियाँ मारते है। किनारे पर कितने ही कल-खोज स्थापित हो गए हैं, जहाँ अब घुमन्तू किर्गिज़ स्थायी तौर से निवास करते हैं।

३. आगे के संकल्प

किर्गिज प्रजातन्त्र में १६५० में समाप्त होने वाली पंचवार्षिक योजन के अनुसार १ अरब २० करोड़ रूबल पूँजी लगाई जायेगी।

उद्योग-धन्धे की उपज में युद्ध-पूर्व की अपेक्षा २.१ गुना होगी और कोयला १६५० में युद्ध-पूर्व की अपेक्षा १½ गुना अधिक निकलने लगेगा। मकान बनाने की सामग्री भी १½ गुना से २ गुना तक होगी। किर्गिजिस्तान में कई तरह की धातुयें निकलती हैं, उनकी उपज में भी पंचवार्षिक योजना बड़ा कदम उठा रही है।

भला घुमन्तू किर्गिज़ों का कल-कारखानों और उनमें भी मशीन बनाने-वाले कारखानों के साथ क्या सम्बन्ध हो सकता था? लेकिन पिछले युद्ध से ही यहाँ मशीन बनाने का कारखाने चालू हो गये। इन कारखानों ने सभी धातु के यंत्र-साधनों, कृषि की मशीनों, बिजली की टर्बाइनों और घर के लिये उपयोगी धातु की चीजों को प्रजातन्त्र को देना शुरू किया है। प्रजातन्त्र की योजना-कमीशन के प्रधान ने कहा "साथ ही साथ हमारी कृषि की भिन्न-भिन्न शाखाओं में काफी उन्नति होगी और हमारे पास अपने और अपने बजार की आवश्य-

कताओं से अधिक आहार और औद्योगिक फसल की चीजें पैदा होंगी, जिन्हें हमें बाहर भेजना होगा।"

युद्ध के छिड़ जाने से कई आर्थिक योजनायें रुक गईं। अब यातायात, व्यापार, गृहनिर्माण और उपभोग सामग्री के उत्पादन की तरफ खासतौर से ध्यान दिया जा रहा है। कपड़े के और कितने ही दूसरे कारखाने बन रहे हैं। युद्ध-पूर्व की अपेक्षा १९५० में सूती कपड़े की चीजें ७.६ गुना, रेशमी कपड़े ६ गुना और ऊनी कपड़े ३.३ गुना पैदा की जायेंगी।

दूसरे कारखाने जो स्थापित हो रहे हैं, उनमें ७ हैं यांत्रिक रोटी कारखाने, १ तम्बाकू फैक्टरी, १ अंगूरी मदिरा कारखाना, १ मांस टिन में बन्द करनेवाला कारखाना—जो कि इस्सिककुल के पास बन रहा है,—मांस पैक करने और कलबासा (सासेज) बनाने के ४ कारखाने हैं। साथ ही कितने ही मछली मारने और लकड़ी कटाई-चिराई के कारखानें बन रहे हैं।

किर्गिजिस्तान में कितने ही पन-बिजली स्टेशन काम कर रहे हैं। अब ७ नये बनाये जा रहे हैं। इनसे सारे औद्योगिक कारखानों की आवश्यकता ही नहीं पूरी होगी, बल्कि अधिकांश कल-खोजों को तेल जलाने की जरूरत न होगी।

पंचवार्षिक योजना में एक सबसे बड़ा काम है ओर्तो-तोकोई की विशाल जल-निधि, जिसमें ५० करोड़ घन-मीतर पानी जमा किया जायगा। १९५० तक ५५ हजार एकड़ नई जमीन को नहरें सींचने लगेंगी। नहर के सुभीते और कृषि के पूर्णतया यंत्रित करने से प्रजातन्त्र में अन्न और मेवों की उपज बहुत बढ़ जायगी।

कान्त से रिबाची तक की १५० किलोमीतर लम्बी रेलवे वर्तमान पंचवार्षिक योजना में पूरी हो गई। यह राजधानी को इस्सिक्-कुल की उर्वर भूमि से मिलाती है। इससे इस्सिक्कुल उपत्यका की खेती और बागवानी में ही उन्नति नहीं होगी, बल्कि उसके उद्योगीकरण में भी सहायता मिलेगी।

पंचवार्षिक योजना में कला और साइन्स की प्रगति पर भी बहुत ध्यान दिया गया है। दर्जनों नये स्कूल, और पुस्तकालय, पहले से दूने अस्पताल और शिशुशालायें बन रही हैं। फ्रुंजे नगरी में ओपेरा-बालेत्-थियेटर के लिये नया भवन बन रहा है।

नहरों से सिंचाई के प्रबन्ध ने किर्गिज़िस्तान में अन्न की उपज बहुत बढ़ाई है। १९४१ में १९१३ की अपेक्षा ८६% अधिक अन्न पैदा हुआ था। और कपास तो २.८ गुना अधिक। चीनीवाले चुकन्दर, तम्बाकू और दूसरी फसलें भी बहुत बढ़ी है। १९३५ से १९४५ के बीच घोड़ों की संख्या १७ गुना, भेड़ों की ४५ गुना और ढोरों की १० गुना बढ़ी है। साथ ही पशुओं की जाति को बेहतर बनाने में वैज्ञानिक तरीके इस्तेमाल किये गये है।

आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के साथ साथ नगरों की भी वृद्धि हुई है। सिर्फ निवासियों की संख्या में ही नहीं, बल्कि उनके रहने लायक पक्के महलों के बनाने में भी। हजारों किलोमीतर मोटर की सड़कें बनाई गई हैं। अस्पतालों की संख्या अधिक हो पहले से ५० गुना हो गई, डाक्टर भी ४० गुना हैं।

१,५०० हाईस्कूल, २८ विशेष स्कूल और ६ कालेज आज किर्गिज़िस्तान में काम कर रहे हैं। क्रान्ति से पहले किर्गिज् लोगों की भाषा की न कोई लिपि थी न कोई लिखित-साहित्य। क्लब, थियेटर, सिनेमाघर बढ़ते ही जा रहे हैं।

४. कृषि—

कृषि के लिये उपयोगी जमीन पहाड़ों की जड़ में प्रजातन्त्र के उत्तरी भाग में है, जहाँ गेहूँ, चीनीवाला चुकन्दर, तम्बाकू आदि चीजें होती हैं। कपास यहाँ की फर्गाना उपत्यका में होता है। फ़र्गाना उपत्यका सिरदरिया की कछार में है, जिसका ऊपरी भाग किर्गिज़िस्तान में है, और बाकी उज्बेकिस्तान तथा ताजिकितान में। किर्गिज़िया में युद्ध के समय २½ लाख एकड़ नई जमीन को खेत में परिणत किया गया।

खेती के लिये नहरों की बड़ी आवश्यकता है। किर्गिजिस्तान दूसरे सोवियत प्रजातंत्रों की तरह अप नदियों से बहे जाते एक एक बूँद जल का उपयोग करना चाहता है। कई रें और कई जलनिधियाँ इस प्रजातंत्र में बनाई गई हैं। आज-कल सबसे बड़ा काम इस विषय में ओर्तो-तोकोइ की जलनिधि का बनाया जाना है। यह कृत्रिम झील संगखारे के पहाड़ों की घिड़ौंची पर २½ हजार फीट ऊपर एक प्रकाण्ड कड़ाह की तरह होगी। त्यान्शान् पर्वत-माला में चू नदी के जल को जमा करने के लिये यह जलनिधि बन रही है। चू मध्य-त्यान्शान् के पिघले बर्फों से पानी पाती है, लेकिन जिस वक्त चू उपत्यका की फसलें अधिक पानी चाहती हैं, उस वक्त नदी में सबसे कम पानी रहता है। इसीलिये गेहूँ-चुकन्दर, सेब-अंगूर के लिए उपयोगी ७ लाख हेक्तर भूमि में से आधी बेकार पड़ी है।

ओर्तो-तोकोइ की जलनिधि इस अभाव को दूर कर देगी। इसमें ५० करोड़ घन-मीतर पानी जमा किया जायेगा, जिसे कि पूर्व और पश्चिम की दो नहरों द्वारा नीचे खेतों में भेजा जायगा, और उस समय जब कि खेतों को पानी नहीं मिलता। जलनिधि बनाने के लिये बड़ा बाँध-बाँधा जा रहा है। धार को दूसरे रास्ते से बहाने के लिये पहाड़ में सुरंग खोदी जा रही है। जलनिधि के तैयार होने पर इसी सुरंग से चू की महानहर में पानी भेजा जायगा। यह कृत्रिम सरोवर १२ किलोमीतर लम्बा और क्षेत्रफल में ४ हजार हेक्तर होगा। इसके लिये ३६,१०,००० घनमीतर मिट्टी और पत्थर को खोदकर हटाना होगा। सबसे मेहनत का काम पहले ही आयगा, यह है ६०० मीतर (करीब हजार हाथ) लम्बी सुरंग और बाँध के लिये नींव खोदना। इतने बड़े काम के लिये मजदूरों की भारी संख्या में आवश्यकता है और उन्हें काफी समय तक काम करना होगा। उनके रहने के लिए मकान बनाये जा चुके हैं।

ओर्तो-तोकोइ और चू महानहर ८०,००० हेक्तर उर्वर भूमि के

लिये जल का अभाव सदा के लिये दूर कर देगी। ८०० किलोवात शक्ति का पन-बिजली स्टेशन भी काम में सहायक होगा। चू-उपत्यका के कल-खोज और सोव-खोज, इस नहर के तैयार हो जाने पर माला-माल हो जायँगे। चू-उपत्यका में कभी शक बसे थे, हूण रहे थे, तुर्कों ने अपनी राजधानी और नगर बसाये थे, गरलोक (कराख़ानी) ने भी यहीं अपनी राजधानी रखी थी। किन्तु किसी समय में भी उसे वह समृद्धि और सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ था, जो अब प्राप्त हुआ है। चिंगीज़ खान की औलाद और तैमूर ने भी मध्य-एसिया में नहरों के महत्त्व को समझा था, और कितनी ही नहरें खुदवाई थीं; किन्तु पिछली ४ सदियों में इनकी तरफ कोई ध्यान नहीं दिया गया या बहुत कम, और उससे मध्य-एसिया के हरे-भरे प्रदेश उजाड़ हो गये।

५. *उद्योग-धन्धा—*

किर्गिज़िस्तान मध्य-एसिया की औद्योगिक शक्ति का स्रोत है। अधिकांश कोयले की खानें किर्गिज़िया में ही हैं। पेट्रोल भी यहाँ है और पन-बिजली देनेवाली नदियाँ सब यहीं से आती हैं; किन्तु क्रान्ति से पहले यहाँ का उद्योग-धन्धा बहुत ही प्रारम्भिक अवस्था में था। इस्सिक्-कुल के किनारे कोयला निकाला जाता था। सोवियत-काल में चमड़ा, ऊन, रेशम, मांस और कृषि के कच्चे माल के कारखाने काम करने लगे। युद्ध के समय कुछ और कारखानें चालू किये गये, उनमें एक बड़ा सुर्मे का कारखाना था। पारे, सीसे की खानों और बहुत से तुंग्स्तेन और मोलिब्दिनम् के कारखानों में काम शुरू हुआ और उनके लिये धातु बनाने के कारखाने कायम किये गये। चू महानहर पर एक पन-बिजली स्टेशन बना है और कई चीनी की मिलें भी। वर्तमान पंचवार्षिक योजना में कोयले तथा अलोह-धातु, आहार और कपड़े, नये पन-बिजली स्टेशन तथा रेलों का भारी निर्माण हो रहा है। यहाँ सूती रेशमी, ऊनी कपड़ों की मिलें हैं, जो और अधिक बढ़ाई जा रही हैं। प्रजातन्त्र

के सोने, तेल, गन्धक तथा दूसरे बहुमूल्य धातुओं के कारखानें भी तेजी से बढ़ रहे हैं। जारशाही के जमाने जहाँ १,००० मजदूर काम करते थे, वहाँ १९४० में ही उनकी संख्या १,१५,००० हो गई थी।

युद्ध के समय किर्गिज़िस्तान ने बहुत बड़े परिमाण में अनाज, चीनी, फल, मांस, ऊन, अलोह-धातु तथा लाल-सेना की दूसरी आवश्यक चीजें दीं।

स्त्रियाँ—

साधारण किर्गिज़ों में वैसे पर्दा नहीं था, लेकिन शहरों में दूसरों के प्रभाव में आकर उनके यहाँ भी मध्यम-वर्ग में पर्दा होने लगा। किन्तु आज जलालाबाद और ओश के कपड़े के कारखानों में बड़ी संख्या में स्त्रियाँ काम करती हैं।

फर्गाना कपास और रेशम के लिये बहुत समृद्ध प्रदेश है। यहीं पर मेवों के बड़े-बड़े बाग हैं। यहाँ का सरदा (खरबूजा) अपनी मिठास के लिये सारे मध्य-एसिया में मशहूर है। इञ्जीर भी यहाँ के बहुत मीठे होते हैं। खूबानी तथा नाखें भी बहुत अच्छी होती हैं। जलालाबाद के पास तख्त-सुलेमान मध्य-एसिया के मुसलमानों का एक बड़ा तीर्थ है। उसने किर्गिज़-फर्गाना की ख्याति को फैलाने में बड़ा काम किया।

६—*विटामिन के जंगल और कारखानें*—किर्गिज़िस्तान के जंगलों में जंगली फलों के बहुत से दरख्त हैं। प्रजातन्त्र के दक्षिणी भाग में ही सवा लाख हेक्टर में ऐसे जंगल हैं। यहाँ विटामिन की अक्षय-निधि पड़ी हुई है। इन जंगलों में जंगली अखरोट, सेब और आलूचा के वृक्ष हैं, जिनसे विटामिन निकालने के लिये कच्चा माल मिलता है। १९४४-४६ में भिन्न-भिन्न अभियानों को भेजकर सोवियत साइन्स-अकदमी ने यहाँ के जंगलों की बहुत जाँच-पड़ताल और सर्वे की। विशेषज्ञों का एक बड़ा अभियान १९४६ में गया था, जिसने हवाई जहाजों, घोड़ों की सवारी और पैदल १०,००,००० एकड़ पहाड़ी जमीन का चक्कर लगाया। उन्होंने फर्गाना और चेतकल पर्वत-मालाओं का विशेष रूप से अध्ययन किया। अभियान के प्रमुख थे सोवियत जंगल

इन्स्तीत्यूत के डायरेक्टर अकदमिक व्लादिमिर सुकाचेफ़। उनके साथ मिट्टी विशेषज्ञ, भू-वनस्पति-विशेषज्ञ, अर्थशास्त्री, रसायनशास्त्री आदि ८० व्यक्ति थे।

अभियान के उपप्रधान डाक्टर इवान लूपिनोविच के कथनानुसार अभियान ने दक्षिणी किर्गिज़िस्तान के फलों और तेलवाली गुठलियों के जंगल की सर्वे करके इस जंगल को विटामिन के लिये कच्चे माल के उद्गम के तौर पर सुरक्षित रखने की सिफारिश की थी। सरकार ने उसे स्वीकार किया। अभियान ने एक योजना सोव-खोज़ों और आहार-फैक्टरियों के कायम करने के लिये बनाई। इस क्षेत्र को आहार-उद्योग-मंत्रिमण्डल के विटामिन उद्योग के प्रबन्ध-विभाग के हाथ में इस काम के लिए सौंप दिया है, और विभाग ने फलों को जमा करने के लिये ६ सरकारी फार्म संगठित किये हैं। यह उन्हें जमा करके फैक्टरियों में भेजेंगे। युद्ध के समय फर्गाना उपत्यका के जलालाबाद शहर में सी विटामिन पैदा करने की एक फैक्ट्री चालू की गई। अभी तक सिर्फ जंगली सेब और आलूचा को सुखाया जाता रहा। अभियान ने उससे मुरब्बा, अचार और विटामिनवाला फल-चूर्ण बनाने की योजना बनाई। उसने यह भी परामर्श दिया है, कि सी-विटामिन् को अखरोट के पत्तों से बनाया जाय और फल को तेल और प्रोटीन निकालने के काम में लाया जाय।

किर्गिज़िस्तान का यह जंगल-क्षेत्र दुनिया भर में जंगली अखरोट और फल का सबसे बड़ा क्षेत्र है। सबसे खास बात यह है, कि यहाँ पर बहुत प्रकार की फलों की जातियाँ हैं—अखरोट की ८०, सेब की १०० और आलूचा की ६० जातियों का पता लगा है। ये सभी फल जंगल में अपने आप उगते हैं, बहुत स्वाद तथा गुण में अत्यन्त पुष्टिकारक हैं। उदाहरणार्थ दक्षिणी किर्गिज़िस्तान के जंगली अखरोटों में रूसी और फ्रान्सीसी बगीचों के अखरोटों से अधिक तेल पाया जाता है—यानी बाग के ६५% की जगह ये जंगली अखरोट ७५% तेल देते हैं, इसी तरह उनमें १२-२० सैकड़ा आसानी

४८. किर्गीज़स्तान कन्योमोल तरुणी (पृष्ठ ७५)

४९. किर्गिजिस्तान मदला नमन "मानस" के गायक (पृष्ठ ८१)

५०. गैसाईन अब्दुल्ला गॉसिनॉफ उ ताजिकिस्तान (पृष्ठ ९४)
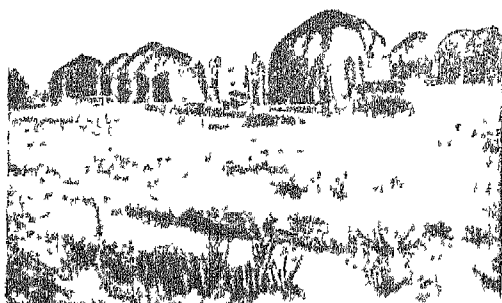
५१. उज़्बेकिस्तान— रेगिस्तान में आल (पृष्ठ १०५)
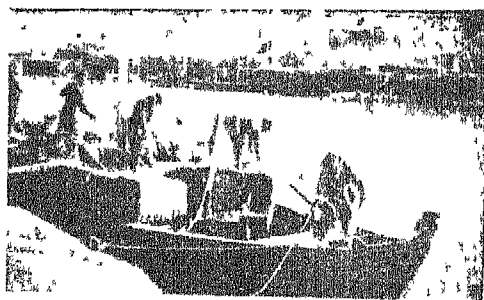
५२. उज़्बेकिस्तान — आमू दरिया की नाव (पृष्ठ १२२)

से मिलनेवाला प्रोटीन है। हरे अखरोट और उनकी पत्तियों में सी-विटामिन बहुत अधिक पाया जाता है।

जंगली सेबों और आलूचों में बहुत ही पुष्टिकारक प्राखिज एसिड और चीनी पाई जाती है। इसके अतिरिक्त और भी कई आहार-तत्व इनमें मिलते हैं।

यहाँ कितने ही प्रकार के जंगली गुलाब हैं, जिनमें से दो प्रकार के नये अभी मालूम हुए हैं। इनमें दूसरे जंगली गुलाबों के ७% की जगह १५% सी-विटामिन है। अभियान ने बहुत बड़ा क्षेत्र चारेवाले घास का भी मालूम किया, जिसमें भारी संख्या में पशु पाले जा सकते हैं। यहाँ मधु-मक्खी-पालन का भी परामर्श दिया गया है।

साइन्सवेत्ताओं ने दक्षिणी किर्गिज़िस्तान की इस वन्य-सम्पत्ति को बढ़ाने की भी योजना बनाई है। अपने ऊपर छोड़ देने से इन जंगलों की वृद्धि इतनी तेजी से नहीं हो सकती, अतः साइन्स-वेत्ताओं ने १०-१५ साल में अखरोट के वृक्ष को पूरा फल देने लायक बनने का तरीका बतलाया है। उनके अनुसंधान से पता लगा, कि इस जंगल के अधिकांश वृक्ष कम से कम २८० साल पुराने हैं। यहाँ जंगली सेब बीज से नहीं बल्कि जड़ से उगता है। इसीलिये दो तीन दर्जन वृक्ष एक ही जड़ के तांतों से लगे रहते हैं। साइन्स वेत्ताओं ने इन सेब-वृक्षों के बढ़ाने की भी रीति बतलाई है।

७—*शिक्षा*—

किर्गिज़ मरणासन्न जाति कही जाती थी, क्रान्ति से पहले उनमें जन्म से मृत्यु की संख्या अधिक थी। लेकिन १२ सालों में वहां जनसंख्या ४५% बढ़ी। सोवियत शासन से पहले वहाँ २% शिक्षित मिलते थे और उनमें भी अधिकतर किर्गिज़-भिन्न जाति के लोग थे। १९३९ तक ७०% जनता शिक्षित हो गई थी। किर्गिज़ भाषा को लिपि मिली और लिखित-साहित्य भी। आज वहाँ के ५,००० स्कूलों में ३,२८,००० विद्यार्थी पढ़ते हैं।

सभी लड़के स्कूलों में जाते हैं। यहाँ २८ टेकनिकल स्कूल हैं और ६ कालेज। साइन्स-अकदमी के ५३ अनुसंधान-इन्स्तीत्यूत किर्गिज़िस्तान में काम करते हैं। किर्गिज़ शिक्षा-मन्त्री युनुस अलीएफ के कथनानुसार १६४५ में सारी जनता का ? स्कूलों में था, और १८,००० अध्यापक पढ़ाते थे। प्रजातन्त्र की बजट का करीब करीब आधा शिक्षा पर खर्च होता था। पंचवार्षिक योजना के पांचों वर्षों में हाईस्कूल में पढ़नेवाले लड़के-लड़कियों की संख्या तेजी से बढ़ेगी। किर्गिज लोग अपने पहाड़ों में थोड़ी-थोड़ी संख्या में बिखरे हुए हैं। उनके छोटे गांवों में प्रारम्भिक स्कूल का खोलना जितना आसान है, उतना हाई स्कूल का नहीं। इसलिये नजदीक के नगरों में हाई-स्कूलों की संख्या बढ़ाई गई है, और कितनों को छात्रावास सहित हाई-स्कूल का रूप दे दिया गया है। १६४६ में किर्गिज हाई-स्कूलों से युद्ध-पूर्व से चौगुना अधिक लड़के लड़कियाँ अन्तिम परीक्षा पास हुईं। १६५० तक यह संख्या छगुनी करनी है। इसके लिये ७ हजार और ट्रेन्ड अध्यापकों की जरूरत होगी और उन्हें प्रजातन्त्र के दस स्कूलों में तैयार किया जा रहा है। ट्रेनिंग के लिये आने वाले लोगों की कमी नहीं है। एक स्त्रियों के ट्रेनिंग स्कूल में १५० नये विद्यार्थी लिये जानेवाले थे, लेकिन उसके लिये ५०० प्रार्थना-पत्र आये। कहाँ पुरानी किर्गिज स्त्रियाँ जिनके लिये पढ़ना हराम था और कहाँ आज यह ज्ञान-पिपासा! शिक्षा-मन्त्री ने यह भी बतलाया, कि कालेजों और उच्च शिक्षणालयों में ६०% विद्यार्थी लड़कियाँ हैं। मन्त्री युनस् स्वयं भाषा-तत्वशास्त्री हैं। वह तुर्की भाषाओं के वंश के सम्बन्ध में एक पुस्तक लिख रहे हैं।

८—*कला*—

सोवियत् के विद्वानों ने भिन्न-भिन्न प्रकार के आभूषणों और अलंकारों से किर्गिज़ कला के हजार वर्ष पर रोशनी डाली। इन पुराने कलाकारों ने अपनी कला का प्रयोग आभूषणों और रत्नों पर ही नहीं किया है, बल्कि कितने

पत्थरों पर भी खोदा है। किर्गिजों के बनाये कालीनों और गलीचों में उन्होंने प्राचीन काल से आज तक की किर्गिज़ जीवन गाथा पढ़ी है। इनमें शिकार के दृश्य हैं, भोज और देशान्तर-गमन के दृश्य हैं, और कितनी ही कहानियाँ भी अंकित हैं। फ्रुंजे के राष्ट्रीय संस्कृति म्यूजियम में पुराने नम्दों, कालीनों का बहुत अच्छा संग्रह है। इनके चमकीले रंग और लाल ढांचे, बहुत आकर्षक हैं। किनारे पर तरह तरह के रंगों का गोटा लगा मखमली लिहाफ है। अच्छी तरह अलंकृत राष्ट्रीय परिधान, चाँदी, चमड़े, ऊन और पत्थर के कई तरह के अलंकृत घर के काम की चीजें भी यहाँ रखी हुई हैं। इस संग्रह से किरगिज़ कला का विकास अच्छी तरह समझा जा सकता है। लेकिन यह कला नष्ट प्राय हो चुकी थी। सोवियत् काल में फिर से उसे उज्जीवित होने का मौका मिला। जब से किर्गिज़ों ने इस्लाम-धर्म को कबूल किया, तब से नम्दे, और कालीनों, चमड़े की वस्तुओं और धातु के बर्तनों पर मनुष्य का चित्र बनाना वर्जित हो गया। किर्गिज़ कलाकारों के लिये सिर्फ फूल-पत्ती और अलंकार तक ही अपनी कला को सीमित रखना पड़ा। सोवियत्-क्रान्ति ने किर्गिज़-कला को मुक्त कर दिया।

किर्गिज़ कला के नये विकास में किर्गिज़िस्तान में बसे रूसी कलाकारों ने बड़ी सहायता की। प्रसिद्ध चित्रकार सेम्योन चुइकोफ रूस में पैदा हुआ, उसने रूसी कला का गम्भीर अध्ययन और अभ्यास किया। उसकी क्रियात्मक सहायता से किर्गिज़िस्तान में एक चित्रशाला और एक जातीय-कला-स्कूल खोला गया। आज चुईकोफ के विद्यार्थी और अनुयायी किर्गिज़ कला के स्तम्भ हैं।

१४ साल पहले—किर्गिज़ प्रजातन्त्र की स्थापना के ७वें वार्षिकोत्सव के समय प्रथम बार किर्गिज़ कलाकार सामने आये, उनमें से एक है गफार अइतियेफ, जिसने मास्को में कला की शिक्षा पाई और आजकल कलाकार-सभा का प्रधान है। उसके पोर्ट्रेट (मानव-व्यक्ति-चित्रण)

में बहुत ही मौलिकता और सुरुचि पाई जाती। वह बड़े सूक्ष्म ढंग से अपने विषय की पृष्ठ-भूमि और स्वभाव को प्रकाशित करता है। इसी तरह का चित्र उसने कलाकार औरस अकिलबेकोफ और कवि उस्मानोफ का बनाया है। आइतियेफ की देशभक्ति उसे खींचकर युद्ध-क्षेत्र में ले गई, और स्तालिनग्राद् के युद्ध क्षेत्र में घायल होकर वह १६४३ में स्वदेश लौटा। इसके बाद के उसके चित्रों में "कपास लोढना" एक बड़ा ही भाव-पूर्ण चित्र है।

गफार के साथी अकिलबेकोफ ने किर्गिज़ लोक-गायकों के कितने ही प्रभावशाली चित्र बनाये हैं। इससे भी दिलचस्प उसने प्रकृति चित्र और कल्पना-चित्र बनाये हैं। उसका चित्र "कलखोज के गल्ले" बड़ी सूक्ष्मता से भावों को व्यक्त करता है, जिसमें विस्तृत चरगाह और प्रकृति के सजीव चित्र को अंकित किया गया है। सजीवता, मधुरता, सरलता जो इन दोनों चित्रकारों की तूलिका में दिखाई देती है, वह दूसरे किर्गिज चित्रकारों में भी पाई जाती है; यद्यपि उनके विषय और व्यक्तित्व में अन्तर है, किन्तु सबके सामने एक उद्देश्य एक ही प्रेरणा है।

युद्धकाल में किर्गिज़ कलाकारों ने बड़ी कार्यतत्परता दिखलाई। राजधानी फ्रुंजे में उनकी चित्र-प्रदर्शनियां हुईं, जिन्हें भारी संख्या में लोग देखने आये थे। पिछले चंद सालों से किर्गिज़ जनता की कला की ओर रुचि बहुत बढ़ी है। बहुत से कल-खोजों ने अपने सार्वजनिक भवनों के चित्रण के लिये चित्रकारों को निमंत्रित किया। और उन्होंने वहाँ जाकर पोर्ट्रेट, प्रकृति और कल्पनाचित्र बनाये। लेनिनोपोल में एक चित्रशाला भी स्थापित हुई। आज वहाँ आधुनिक चित्रकला तेजी से जनप्रिय होती जा रही है।

६. *साहित्य*—

लिपि और लिखित-साहित्य का आरंभ किर्गिज़ जनता में सोवियत् क्रान्ति के बाद होता है, किन्तु उसका यह अर्थ नहीं, कि किर्गिज़ भाषा का

भाषा का भी कितना ही साहित्य मौखिक रहा। उसमें से कितना ही कालक्रम के अनुसार नष्ट हो गया। तो भी किर्गिज जनता ने अपने एक उत्कृष्ट काव्य "मानस" को कंठस्थ रखके बचाया। यह काव्य ग्यारह सौ वर्षो से सुरक्षित चला आया था, और हो सकता है और भी कुछ समय तक सुरक्षित रहता, लेकिन सोवियत्-युगीन विद्वानों की सहृदयता न प्राप्त हुई होती, तो इतने अच्छे तोर से उसका उद्धार न होता। हमारे यहाँ के आल्हा की तरह "मानस" भी बहुत जन प्रिय काव्य है। अनपढ़ गायक किर्गिजों के तम्बुओं के डेरे में रात-रात गाते और लोग सुनते न थकते थे। तो भी गायको के अपने-अपने कथानको में भी कुछ-कुछ और वाक्यों में तो बहुत कुछ अन्तर था। "मानस' के उद्धार के लिए "मानस" पारंगत तीन प्रसिद्ध वृद्धों को एकत्रित किया गया, जिनमें एक **भक्तिदवसन** था। इन लोगो ने अपनी कंठस्थ गाथाओंको लिखवाया। फिर विद्वानों ने तुलना "करके मानसका एक प्रामाणिक संस्करण प्रकाशित कराया 'मानस' के कुछ अंशों का अनुवाद जब रूसी भाषा में छपा, तो सोवियत्-संघ के दूसरे भागो में भी 'मानस'-भक्ति पैदा हुए और अन्त में मानस रूसी में छपकर ही रहा।। १९४२ में "मानस" की ग्यारहवीं शताब्दी धूमधाम से मनाई गई। इस उत्सव के बारे में तैयारी करते हुये न-कुर्लातोफ ने कहा—"किर्गिज जनता के सांस्कृतिक जीवन में कितनी ही सदियो तक "मानस" का इतना महत्वपूर्ण भाग रहा, कि हम उसे एक जातीय प्रतिष्ठान कह सकते हैं। यह दुनिया का सबसे बड़ा गाथा-काव्य है। उसके गम्भीर विचार उसका कल्पना-सौन्दर्य, उसके चमत्कारिक पद्य इसे दुनिया के प्रसिद्ध गाथा काव्यों—इलियद, ओदेसी, और शाहनामा की कोटि में रखते हैं।"

८४७ ई० के आसपास इस महाकाव्य का आरम्भ हुआ था, जबकि वर्तमान किर्गिज प्रजातन्त्र से बहुत दूर येनसेई नदी के तट पर, सिबेरिया के मैदानों में एक शक्तिशाली किर्गिज-राज्य स्थापित हुआ था। इस राज्य की उन्नत संस्कृति को पड़ोसी कबीले ही नहीं मानते थे, बल्कि चीनी शासकों का

थाङ्-वंश (७—१०वीं सदी) भी इसे स्वीकार करता था। "मानस" में इसी नाम के इस महावीर का यशोगान गाया गया है, जिसने किर्गिज कबीलों को एकताबद्ध किया। मानस का पुत्र सेमेतेई और पौत्र सेईतेक् थे। मानस में किर्गिज-जाति के उस संघर्ष का वर्णन है, जिसे उसने अपनी स्वतन्त्रता और भीतर फूट डालनेवालों के खिलाफ किया। महाकाव्य की मुख्य घटना "महा-अभियान" बतलाती है, कि कैसे किर्गिजों ने मंगोलिया की तरफ से सायन-अल्ताई होते अपने देश पर आक्रमण करने वाले दुश्मनों का मुकाबला किया। किर्गिज हार पर हार खाते गये, क्योंकि अभी उनमें एकता नहीं कायम हुई थी। इस कमी को उनके नेता याग्ला कार खान ने समझा और उसने सभी कबीलों को एक किया। उसने एक बड़ी सेना ले दुश्मन को हराया, सायन-अल्ताई के दक्षिण भाग से लेकर त्यान-शान तक की विजय यात्रा की। आज किर्गिज उसी त्यान्-शान् पर्वत-माला में रहते हैं। याग्ला कार खान के समय किर्गिज अपनी राजनीतिक और सैनिक शक्ति के लिये ही प्रसिद्ध नहीं थे, बल्कि इस समय उन्होंने बाहरी दुनिया से भी सम्बन्ध स्थापित किया था। याग्ला कार खान की मृत्यु तक (अगस्त, ८४७ ई०, किर्गिज-राज्य उन्नति करता ही गया। इस खान का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व इसी से समझा जा सकता है, कि चीन ने उसकी मृत्यु के बाद उसे उपाधि प्रदान की।

फिर पतन का आरम्भ हुआ। लोगों ने उस युग की प्रशंसा गानी शुरू कीं और धीरे-धीरे अपने नायक के और भी गुण तथा वीरतापूर्ण कृत्य जोड़ते गये। इस तरह नायक एक पौराणिक पुरुष का रूप ले "मानस" की भूमिका में परिणत हो गया। त्यनशान् और येनिसेई के बीच के हजारो किलोमीतर ने और उस युग से आज के युग तक के हजारों वर्षों ने किर्गिज जनता के दिल से अपने गौरवशाली इतिहास को भुलवाने में सफलता नहीं प्राप्त की। आज कोई भी किर्गिज बालक या वृद्ध नहीं, जो इस महाकाव्य से

अनभिज्ञ हो। किर्गिज तरुण के लिये यह वीरता और साहस का एक महान् पाठ है।

× × ×

किर्गिज साहित्य इस बीस ही साल में बहुत उन्नत हो गया। अली तकुमबयेफ़ उनका सबसे बड़ा कवि और उपन्यासकार है। १९२४ में किर्गिज भाषा के पत्र "एर्किन ताउ" (स्वतन्त्र गिरि) का पहला अंक प्रकाशित हुआ और इसमें लेनिन के सम्बन्ध में एक कविता प्रकाशित हुई। यह है अली तकुम्बबेफ़ का साहित्य-क्षेत्र में प्रथम अवतरण, अली का जीवन बड़े ही संकट और चिन्ता का जीवन था। माँ-बाप ने १९१६ के विद्रोह में जारशाही के खिलाफ बगावत की। ज़ार की पलटन ने किर्गिज-भूमि को खून से रंग दिया और बचे हुए उत्तरी किर्गिज भागकर चीनी तुर्किस्तान चले गये। कितनी ही लाशें ख्यानशान् के पहाड़ों पर बिखरी पड़ी थीं। बच्चे-बूढ़े और स्त्रियाँ बहुत बड़ी तादाद में उन उत्तुंग जोतों को जीवित न पार कर सकीं। बचे बचाये लोग जब तुर्फान शहर में पहुँचे, तो वहाँ के अफसरों ने उन्हे खूब लूटा। दैन्य और दारिद्रय देखकर लोगों ने इन भगोड़ों को तुर्फानची कहना शुरू किया। इन्हीं में बूढ़े चरवाहे तकुमबाय का भी परिवार था। अगले साल फर्वरी (१९१७) में रूस में क्रान्ति हुई। जार हटा दिया गया। औरों की तरह यह परिवार भी स्वदेश लौटा। किन्तु यहां उसे भूख की बलि होना पड़ा और सिर्फ अली अनाथ बच रहा। वह इस्सिक्कुल के तटपर अवस्थित कराकोल से चू की उपत्यका तक भटकता रहा। लोग उससे कविता सुनते और फिर उसे भर पेट खिला देते। वह युर्तों (तम्बू के डेरों) में "कुर्मान बेक" के लोक-गीत सुनाता, पीछे उसने अपनी इस कविता को "चोल्पान" नामक किर्गिज पत्र में छपाया। १९२० में उसने यह जीवन छोड़ मेषपाल का काम संभाला। इस छोटे पतले-दुबले जवान ने जल्दी ही अपने पशुओं में बड़ी बृद्धि की। वह चरवाहों में अपनी कवितायें गाता, खास करके लोकवीर

"मानस" के बारे में।

एक बार ताशकन्द में कोई समारोह हो रहा था। "मानस" के गायक अली को मालूम था, कि तत्कालीन ताशकन्द "पाषाण पुरी" में गुणियों का एक दुर्ग है। अली ने साथ चलने का आग्रह किया।

ताशकन्द ने अली के भाग्य का फैसला कर दिया। वह पार्टी के स्कूल में दाखिल हो गया और बारहखड़ी पढ़ी। एक साल के भीतर उसने सारे पुश्किन को पढ डाला। "यूगिनी ओनेगिन" को पढ़कर तरुण कवि ने लिखने का निश्चय किया। उसने अपनी जाति के वीरों के बारे में उपन्यास लिखने की बात सोची। उसे चीनी तुर्किस्तान का कड़ा अनुभव था और फिर अपने अनाथ जीवन का भी। वह इस जीवन का केवल साक्षी नहीं था, बल्कि खुद उस आग में जला था। उसने दस साल अपने पद्यमय उपन्यास "खूनी साल" में लगाये। इसका पहला भाग १९३६ में प्रकाशित हुआ। किर्गिज पाठकों ने उसका बड़ा स्वागत किया।

अली तकुमबयेफ ने कविता, गीत, कथा, निबन्ध, साहित्य शास्त्र के सम्बन्ध में तीस पुस्तकें लिखी हैं। मातृमुक्ति-युद्ध के समय उसकी नाटककार प्रतिभा जागी और उसने "सम्मान" और "शपथ" नाम के दो रूपक लिखे, जो किर्गिज नाट्यशाल में अभिनीत हुए।" कौन कायर और कौन वीर—जानना है अब ?" प्रश्न करके कवि ने उत्तर दिया—"हाँ, किर्गिज जनताने सीख पकड़ी उसने अपने वीरों को पहचाना।"

किर्गिज का लिपबद्ध साहित्य अभी शैशव अवस्था में है, इसलिये नये भावों को प्रगट करना कठिन होता है। अली तकुमबयेफ कठिन-पथ पर चल रहा है। किर्गिज जनता अपने इस प्रतिमाशाली बन्धु पर बड़ा ही स्नेह रखती है। वह अली को अपना साहित्य महारथी समझती है। सरकार ने उसे "जन-कवि" की उपाधि प्रदान की है।

× × ×

शिक्षा के साथ साहित्य की वृद्धि किर्गिजिस्तान में बड़ी तेजी से हुई है। १६३६ में किर्गिज भाषा में ३६ पत्र निकलते थे। बहुत से रूसी पुस्तकों का अनुवाद भी हुआ है। लेव् ताल्स्ताय का मुख्य और विशाल उपन्यास "युद्ध और शान्ति" किर्गिजी में प्रकाशित हुआ। इस्लाम के प्रभाव ने चित्रकला और मूर्तिकला के विकास में बाधा डाली, उसी तरह उसने नाट्य-मंच को भी उत्पन्न होने नहीं दिया। नाट्य मंच की स्थापना के बाद भी स्त्रियों को अभिनय में भाग लेने में कम कठिनाई नहीं हुई, किन्तु अब यह सारी बाधायें दूर हो गई हैं। नाटकों की बड़ी माँग है।

ओश, जलालाबाद, नारिम, प्रजेवाल्स्क, तलस्, फ्रुंजे आदि सभी नगरों में १७ नाट्यशालायें हैं। जनता के भीतर की पुरानी रूढ़ियाँ और रीति-रवाज बहुत बदल गये हैं। स्त्रियाँ निर्माण में पुरुषों के बराबर भाग ले रही हैं। घुमन्तू किर्गिज बस्तियों में बस गये हैं। पहाड़ों के सानुओं पर नये गाँव आबाद हो गये हैं। खेती पंचायती हो गई है।

इन दुर्गम पहाड़ों में चलना आसान काम नहीं है। हजारों सालों से चीन से यूरोप का व्यापार इसी रास्ते होता था, लेकिन वह रास्ते स्वाभाविक और कठिन थे। लेकिन इधर कुछ सालों में इन पहाड़ों के अन्दर मोटर की सड़कों का जाल बिछा दिया गया है। ओश से खरोग (ताजिकिस्तान) की मोटर-सड़क का निर्माण उसी प्रकार अतिकठिन है, जैसे अलमोड़ा से मानसरोवर और सतलज-उपत्यका को मिलानेवाली सड़क का। यह सड़क अलई-उपत्यका को पार करती है, जो समुद्रतल से १०,००० फुट से ऊंची है। अब भी ऊँट, घोड़े और भेड़ें किर्गिज लोग पालते हैं और पहले से भी अधिक संख्या में, अब भी किर्गिज लड़कियाँ घुड़सवारी में पुरुषों को मात करती हैं। किन्तु अब उनकी चरागाहें उनके जाड़े का निवास, घास चारे का प्रबन्ध सब सुव्यवस्थित रूप से होता है; जिसमें मोटरें, विमान और रेडियो सहायता करते हैं। उनके साथ साथ अध्यापक और डाक्टर भी अब चलते हैं। आज किर्गिजिस्तान में ८८ अस्पताल

काम कर रहे हैं और जिन बीमारियों को किर्गिजों के लिये स्वाभाविक कहा जाता था, अब उनका पता नहीं।

१०. साइन्स-सम्बन्धी अनुसन्धान

१९२४ में जब रूस का सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र संघ नाम पड़ा और संघ के प्रजातंत्रों का अलग-अलग विभाजन हुआ, तो किर्गिजिस्तान रूसी फेडरल सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र का एक स्वायत्त जिला बनाया गया। दो ही साल बाद वह स्वायत्त सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र बन गया और १९३६ में पूरा सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र का पद पाने में सफल हुआ। १९४६ में किर्गिज-शाखा साइंस-अकदमी के प्रेसीडेंट कस्कियावन्ने किर्गिजिस्तान में साइंस की प्रगति के बारे में लिखते हुए कहा— इस प्रजातंत्र के २ लाख १ हजार ६०० वर्ग-किलोमीतर में एक दशांश छोड़कर बाकी समस्त भूमि पहाड़ी है और जैसा कि पहाड़ी भूमि से आशा की जाती है, सब तरह की धातुओं कोयला और तेल की भारी खनिज संपत्ति, दुर्लभ धातुओं विशेषकर पारा के उत्पादन में इसका स्थान सारे सोवियत में प्रथम है।

धातुओं की इतनी खानें जहाँ हों, वहाँ साइंस-संबन्धी गवेषणा का काम भी ज्यादा होना चाहिये, और इसी ख्याल से १३ अगस्त १९४३ को अखिल सोवियत-संघ की साइंस अकदमी की एक शाखा यहाँ कायम की गई। इसके निम्न चार बड़े बड़े इन्स्तित्यूत (प्रतिष्ठान) हैं।

(१) भूगर्भ-इन्स्तित्यूत जिसमें चुम्बकीय भूगर्भ-शास्त्र-स्तरांकन और टेकटोनिक के विभाग हैं।

(२) प्राणिशास्त्र-इन्स्तित्यूत जिसमें वनस्पति और जन्तु-शास्त्र दो विभाग हैं। वनस्पति विभाग के साथ एक वनस्पति उद्यान भी है।

(३) रसायन-इन्स्तित्यूत, जिसमें प्राणिज विश्लेषणात्मक भौतिक तथा पेट्रोलीय रसायन-विभाग सम्मिलित है।

(३) इतिहास-भाषा-साहित्य इन्स्तित्यूत, जिसमें भाषा-शास्त्र, साहित्य लोक-साहित्य-कला समालोचना, कोश आदि विभाग सम्मिलित हैं।

पहली जनवरी १९४५ में १५० साइंस वेत्ता अनुसंधान के काम में लगे थे। क्रांतिसे पहले किर्गिज लोगों में कोई शिक्षित वर्ग नहीं था। उसका जन्म सोवियत-काल में हुआ अनुसंधान-कर्ताओं में अभी १०% किर्गिज विद्वान हैं, किंतु उनकी संख्या बड़ी तेजी से बढ़ रही हैं। बहुत से किर्गिज तरुण मास्को लेनिनग्राद में अकदमी के प्रतिष्ठानों में अध्ययन कर रहे हैं।

अपनी स्थापना के प्रथम वर्ष में भी किर्गिज शाखा ने काफी काम किया। भूगर्भ-इंस्तित्यूत के विद्वानों ने पहले के अनुसंधानों के परिणामों का निष्कर्ष निकाल कर लेखबद्ध किया, और पेट्रोल, धातु, भू-रसायन आदि के सम्बन्ध में कितने ही सैद्धान्तिक और अभियानिक अनुसंधान किये। प्रजातंत्र के पर्वतों के स्तर-निर्माण आदि का भी बड़ी तत्परता से अध्ययन हो रहा है। पश्चिमी फरगाना की सुरमा-पारा वाले क्षेत्र का भी अध्ययन और सर्वे हो रही है और उसके लिए धरती में ट्यूब गड़ा-गड़ा कर देखा जा रहा है। प्राणि-शास्त्र इंस्तित्यूत ने किर्गिज चरागाहों और पठारों के वनस्पतियों के बहुत अच्छे नकशे बनाये हैं जिनका आकार १ : ७,५०,००० और १ : ५,००,००० के स्केल पर बनाया गया है। तंबाकू के अनुसंधान में भी उसके खाद, पानी आदि के खर्च का पूरा-पूरा पता लगाया गया है और इससे कलखोजों ने बहुत फायदा उठाया है।

वनस्पति-उद्यान की खोजों ने पता लगाया है, कि कौन-कौन वृक्ष चू- उपत्यका के निर्वृक्ष प्रदेश में आसानी से लग सकते हैं। इसके लिए अमेरिका, कनाडा और दूसरे देशों से भी वृक्ष मँगाकर प्रयोग किया गया। वहाँ वही वृक्ष लग सकता है, जो थोड़े पानी से गुजर कर सकें और पराकाष्ठा की गर्मी और सर्दी को बर्दाश्त कर सकें।

प्राणि-शास्त्र-विभाग ने खेती के कीड़ों पर ध्यान दिया है। गवेषक बतमसेंको ने चमगादड़, खरगोश, चूहा, कुत्ता, बिल्ली, शाही के बारे में अनुसंधान करते हुए और बातों के साथ उनके निवास-स्थानों का नकशा बनाया है। प्रो० स्लोनिन ने उच्च-पर्वतीय स्थानों में हवा की कमी से प्राणियों के साँस लेने में जो कठिनाईयाँ होती हैं और वहाँ अधिक दिन ठहरने से जो परिवर्तन होता है इसका अनुसंधान किया है। इन अनुसंधानों से ऊँचे स्थानों की चरागाहों के उपयोग में बड़ी सहायता मिली।

रसायन-शास्त्र प्रतिष्ठान ने सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों तरह के ऐसे ढंग स्थिर किये हैं, जिनसे तुंङ्स्तेन निकालने घटिया कोयले से कोक बनाने आदिमें सफलता हुई है।

भाषा-विभाग ने किर्गिज भाषा की बोलियों का अनुसंधान किया है और उनकी विशेषताओं की सूचियाँ बनाई हैं। वाइस-प्रेसीडेन्ट ज़फर शकुरोफ़ ने किर्गिज भाषा का व्याकरण, किर्गिज़-रूसी-कोष और किर्गिज कृषि-शब्द-कोष तैयार किये हैं। उसने अलई-बोली पर निबंध लिखा है। शकुरोफ एक गरीब किर्गिज लकड़हारे का पुत्र है। दस साल की उम्र में एक धनी किसान के घर काम करने लगा। फिर गाँव का मेष-पाल बना। १९२० में वह फ्रुंजे के एक अनाथालय में ले लिया गया। वहाँ शिक्षा समाप्त की। फिर हाईस्कूल की पढ़ाई समाप्त कर १९२८ में ताशकंद युनिवर्सिटी में पढ़ने गया। पढ़ाई के बाद वह राजकीय योजना-कमीशन का सदस्य हो काम करने लगा। वह काम करते करते उसने मार्क्सवाद के मुख्य ग्रन्थों का किर्गिज भाषामें अनुवाद किया। १९३७-४० तक किर्गिज भाषा-साहित्य-इतिहास-प्रतिष्ठान का प्रधान रहा, फिर१९४०-४३ तक प्रजातन्त्र का शिक्षा-मंत्री रहा।

ई. अब्दमानोफ ने किर्गिज भाषा का उसके ऐतिहासिक विकास के साथ व्याकरण तैयार किया है। प्रो० क. युदखिन ने किर्गिज़ भाषा की दक्खिनी बोलियों का अनुसंधान किया है। उनकी सामग्री ने किर्गिज भाषा के व्याकरण

और इतिहास के लिखने में बड़ी सहायता की। प्रो० युदखिन की प्रधान-संपादकता में करासयेऊ और शकुरोफ़ ने १६०० पृष्ठों का रूसी-किर्गिज शब्द कोष तैयार किया। यह तुर्की भाषाओं के वैज्ञानिक अध्ययन में बहुत सहायक होगा। ताजिबेक समंचिन ने लोक-गायक तोग्दोक् माल्दो की कविताओं का एक बहुत बड़ा संग्रह तैयार किया है। वह पहिली बार छपने जा रहा है। समचिन स्वयं एक अच्छा नाट्यकार है। उसका नाटक 'बेतेंभी के पुत्र' को प्रजातन्त्र का एक पुरस्कार मिला था। शकुरोफ् की तरह समंचिन भी धूल का हीरा है! उसका पिता जीवन भर एक धनी किसान के यहाँ काम करता रहा। ताजिबेक सात ही साल का था, कि वह मर गया। १६२२ में अनाथ-सहायक कमीशन ने उसे बाल-भवन (अनाथालय) में रख दिया। यहाँ से उसका पढ़ने का रास्ता खुल गया। ट्रेनिंग स्कूल खतम करके वह दो साल अध्यापक रहा। फिर उसने मास्को के अध्यापक-कालेज से ट्रेनिंग की परीक्षा पास की, और किर्गिज-लिपि-कमेटी का सेक्रेटरी बना। किर्गिज शाखा-अकदमी की स्थापना के बाद वह वहाँ चला आया।

किर्गिज भाषा-साहित्य-इतिहास विभाग ने ही सायकबे, करालयेफ् और मामूल मन्नुलोफ् के मुख से सुन कर 'मानस' को लेख बद्ध किया।

डा० अ० न० बेर्नस्ताम् ने किर्गिजि इतिहास पर बहुत काम किया है और कई अंधकारावृत युगों पर प्रकाश डाला है। उनकी खोजों से यह भी मालूम होता है, कि १०वीं सदी से पहले वहाँ (किर्गिजस्तान) के पहाड़ों में बौद्ध-धर्म प्रचलित था। अभी तक मूर्तियाँ और कुछ मामूली अभिलेख मिले हैं, लेकिन अभी वहाँ से और नई चीजों के मिलने की आशा है। डा० बेर्नस्ताम् ने १२वीं से १६वीं सदी तक के किर्गिज इतिहास पर एक निबंध लिखा है। स-बकुशिन् ने १६वीं सदी में येनीसेइ तटवर्ती किर्गिजों पर एक निबन्ध लिखा है।

किर्गिजिस्तान और किर्गिजों का इतिहास दो जिल्दों में युनवर्सिटी के

विद्यार्थियों के लिये और उसका संक्षिप्त संस्करण स्कूलों के लिये तैयार किया गया है।

अ, जमुग्येचिनोफ एक होनहार तरुण ऐतिहासिक है। वह पहला किर्गिज है, जिसने सर्वप्रथम एम. ए० पास किया। उसका जन्म १९१४ में एक किसान के घर हुआ। १९३६ में किर्गिज ट्रेनिंग कालेज का ग्रेजुएट बना, फिर वहीं पढ़ाने लगा। १९३९-४२ में एम० ए० परीक्षा (एक्स्टर्नल) पास की।

फ्रुन्जे—

किरगिज प्रजातंत्र की राजधानी के पीछे भी अलमाअता की तरह ही अलाताउ पर्वतमाला चली गई है। जिसके शिखर सदा बरफ से ढँके रहते हैं। सोवियत-क्रान्ति का महान् सैनिक-नेता मिखाइल फ्रुंजे यहीं पैदा हुआ था, इसीलिये नगर का यह नाम पड़ा। नगर में पहाड़ से आती कई धारायें बहती हैं। उद्यान इतने अधिक हैं, कि इसे उद्यानपुरी कहा जा सकता है। चौड़ी सड़कें सीधी एक दूसरे को काटती चली जाती हैं। इनके किनारे सफेदा, ओक भोजपत्र आदि के ऊँचे ऊँचे वृक्ष लगे हुए हैं। मुख्य सड़क जेर्जिन्स्की-पथ सबसे अधिक सुन्दर है। इसके किनारे वृक्ष-पंक्तियाँ सरल रेखा में चली गई हैं। चौरस्तों पर घास और फूलों के छोटे छोटे बगीचे बने हुए हैं।

नगर का पुराना नाम पिशपेक था, जिसकी स्थापना १८७८ में हुई थी। इसके पहिले खोकन्द के खान का यहाँ एक किला था, जिसे १८६२ में रूसी सेना ने नष्ट कर दिया। १९१३ में पिशपेक १८,००० आबादी का एक छोटा सा दरिद्र कस्बा था। उस वक्त सबसे नजदीक का स्टेशन भी सैकड़ों मील दूर था। उद्योग-धन्धे का नाम न था, उसकी जगह एक बाजार लगा करती थी।

कस्बे के मकान कच्चे और छतें सरकण्डे की होती थीं। वहाँ कोई स्कूल न था।

१९२८ में पिशपेक का नामकरण फ्रुंजे हुआ और साथ ही वह

किर्गिज प्रजातन्त्र की राजधानी बना। नगर को तुर्क-सिबेर रेलवे के साथ एक रेलवे लाइन से जोड़ दिया गया। अब नगर की जन-संख्या तेजी से बढ़ने लगी, और १९३९ में ९३,००० हो गई। अब तो लाख से भी अधिक है। इसका बाहरी आकार-प्रकार भी बदल गया है। हजारों पत्थर और सीमेन्ट के महल तैयार हो गये, सरकारी कार्यालयों की भव्य इमारतें भी शोभा बढ़ाने लगी। सड़कों पर अस्फाल्त बिछा दिया गया। सब जगह पानी का नल और बिजली लग गई।

फ्रुंजे अब एक औद्योगिक केन्द्र है, चू- उपत्यका तथा प्रजातन्त्र के दूसरे जिलों के कपास और दूसरी चीजों से तैयार माल बनानेवाले बहुत से कारखाने यहाँ खुल गये। यहाँ के कारखानों में मांस की चीजें, आटा, अंगूरी मदिरा, सिगरेट बनियान, कपड़े और चमड़े की चीजें बनती हैं, चू-उपत्यका के पटसन के लिये भी बड़े कारखाने स्थापित हुए है, जिनमें रस्सी और कपड़ा तैयार किया जाता है।

चू-उपत्यका के कल-खोजियों ने सोवियत-सरकार की सहायता से २७० किलोमीतर लम्बी महाचूनहर बनाई। इस नहर के किनारे फ्रुंजे के पास कई पन-बिजली स्टेशन बने, जिससे नगर की सड़कों और घरों को रोशनी और कारखानों को चालक शक्ति मिलती है। फ्रुंजे से इस्सिककुल सरोवर को रेल द्वारा मिला दिया गया है, और अब वहाँ के सीसे कोयले और दुर्लभ धातुओं का काम और बढ़ेगा।

फ्रुंजे किर्गिजिस्तान का शिक्षा का प्रधान केन्द्र है। यहाँ ४ बड़ी बड़ी शिक्षण-संस्थायें हैं। इतिहास-साहित्य-भाषा-प्रतिष्ठान प्राणिशास्त्र और भू-गर्भ शास्त्र के प्रतिष्ठान, महामारी-किटाणु, प्राणिशास्त्र-प्रतिष्ठान पशु-प्रतिष्ठान पशुचिकित्सा-कालेज, कृषि फल तरकारी और तम्बाकू के अनुसन्धान-स्थान, इत्यादि काम कर रहे हैं।

राजधानी में एक प्रादेशिक म्युजियम और एक चित्रशाला है। कई

नाटक-ओपेरा-बैलेत के थियेटर हैं। एक लोक-संगीतशाला है। कितनी ही पत्र-पत्रिकायें यहाँ से निकलती है, जिनमें कुछ रूसी और तुंगत (तुर्किस्तानी) चीनी भाषाओं में भी निकलती हैं। फ्रुंजे की समृद्ध किर्गिजिस्तान की समृद्धि का थर्मामीटर है।

१२. *नवीन पंच-वार्षिक-योजना*—नवीन पंचवार्षिक-योजना में किर्गिजिस्तान के लिये निम्न योजना बनी है।

किर्गिज सोवियत् समाजवादी प्रजातंत्र—किर्गिज स०स०र० की औद्योगिक उपज के मुख्य अंशों की योजना १९५० तक निम्न प्रकार है।

कोयला (टन)	१६,००,०००
पेट्रोल (")	८०,०००
बिजली (हजार किलोवात)	१,८०,०००
सूती कपड़ा (मीतर)	६,६०,०००
रेशमी कपड़ा (")	९.२०,०००
ऊनी कपड़ा (")	५,००,०००
मोजा (जोड़ा)	३५,५०,०००
जूता (")	९.२०,०००
चीनी (टन)	७५,०००
मांस (")	१७,०००
मक्खन (")	१,४००

किर्गिज प्रजातन्त्र में १९४६-५० में १ अरब २० करोड़ रूबल की पूँजी लगाई जायगी, जिसमें प्रजातंत्र के आधीन कामों में ३२ करोड़ ७० लाख रूबल लगेगा।

३८ हजार किलावोत की क्षमता वाले बिजली स्टेशन, ८ लाख २५ हजार टन की क्षमता वाली कोयला-खानें, १० हजार टन की क्षमता वाली एक कपास-ओटनी-मिल बनकर चालू हो जायगी। एक बोरा-कारखाना (जूट-मिल)

एक कता का मिल, ३० हजार टन की क्षमता एक सीमेंट-कारखाना और एक मांस पैक करने का कारखाना बनाया जायगा। कन्त रिबाची रेलवे-लाइन बनाकर पूरी कर दी जायगी। प्रजातंत्र के अधीनस्थ उद्योगों में १२ हजार टन किलो-वात की क्षमता का एक पन-बिजली स्टेशन और १ लाख २५ हजार टन क्षमता की कोयला-खानें चालू की जायेंगी।

प्रजातंत्र के अधीनस्थ कारखानों की औद्योगिक उपज १९५० में ३६ करोड़ रूबल निश्चित की गई है, जिसमें स्थानीय अधीनता तथा औद्योगिक सहयोग-समितियों से चालित राजकीय उद्योगों की उपज ७½ करोड़ रूबल होगी।

१९४६-५० में ५५ लाख टन की क्षमता वाले कोयले के क्षेत्रों को काम करने के लिये तैयार किया जायगा। और सीसा, पारा, सुरमा, स्वाभाविक गंधक, और जिप्सम् के औद्योगिक स्रोतों का पता लगाया जायगा।

१९५० में ११ लाख २ हजार हेक्तर में फसल बोई जायेगी, जिसमें कल-खोज के ९ लाख ४९ हजार हेक्तर होंगे। अनाज की फसल ७ लाख ८ हजार हेक्तर में, जिसमें ६ लाख २० हजार कलखोज की; औद्योगिक फसल १ लाख ८ हजार हेक्तर, जिसमें कलखोज की ९९ हजार हेक्तर, तरबूजा, आलू और दूसरी तरकारियाँ २६ हजार हेक्तरमें, जिसमें २० हजार हेक्तर कलखोज की घास-चारे की फसल २ लाख ५४ हजार हेक्तर में, जिसमें २ लाख १० हजार हेक्तर कलखोज की; कपास की खेती ५३ हजार हेक्तर में होगी। ऊँचे किस्म की तँबाकू और अंगूर का क्षेत्र बढ़ाया जायगा।

१९५० के अन्त में पशुओं की संख्या निम्नप्रकार निश्चित है—घोड़े ४,९०,००० जिसमें कल-खोज के ४, ३०,०००, ढोर ५,६०,००० जिसमें कल-खोज के २,६०,०००। भेंड़-बकरियाँ ४३,००,००० जिसमें कलखोज की ३३,००,०००। सूअर ६०,००० जिसमें कलखोज के २०,०००।

कास्नोरेच्ये नहर का काम पूरा हो जायगा, और ओतुजआलिर के

सींचनेका काम हाथ मे लिया जायगा । आतों-तो कोई जलनिधि और महान्‌ नहर के निर्माण को बढ़ाया जायगा । १९४६-५० के समय में २२ हजार हेक्तर सींची जमीन बढ़ाई जायगी ।

योजनानुसार १९४६-५० मे किर्गिज प्रजातन्त्र के नगरों मे राज्य स्वामिक घरों के २,१५,००० वर्गमीतर फर्श के वास स्थान तैयार होंगे, जिसमें स्थानीय सोवियतों के बनाये २५ हजार वर्ग-मीतर होंगे । फ्रुंजे नगर मे एक और जल कल, सिवेर (पाखाना मोरी) व्यवस्था और एक ट्राली-बस-लाइन बनकर तैयार होगी ।

सांस्कृतिक विकास और स्वास्थ्य रक्षा के क्षेत्र में निम्नलिखित मुख्य करणीय हैं—१९५० तक स्कूलों की संख्या १,५८५ और विद्यार्थियों की २,७८ ००० तक पहुंच जायेगी । अस्पताल में ७,२०० चारपाइयां होंगी ।

३

उज्बेकिस्तान प्रजातन्त्र

क्षेत्रफल	१,८८,००० वर्ग मील
जनसंख्या	६२,८२,०००
राजधानी	ताशकन्द, जनसंख्या-६,००,०००

१. भूगोल

उज्बेकिस्तान जनसंख्या के विचार से मध्यएसिया के प्रजा-तंत्रों में सबसे बड़ा प्रजातंत्र है। क्षेत्र फल में कजाकस्तान इससे बड़ा है। औ-द्योगिक और कृषिके विकास में भी उज्बेकिस्तान सबसे आगे बढ़ा है। और यही हालत शिक्षा में भी है। इसके भीतर से सिर-दरिया, आमू, जरफशां और चिर-चिक जैसी महानीरा नदिया बहती हैं। इसकी दक्षिणी सीमा आमू-दरिया है जो कि इसे अफगानिस्तान से अलग करती है। यह राजनीतिक सीमा है, वैसे जाति के ख्याल से हिन्दू कुशतक उज्बेक लोग बसते हैं। वस्तुतः यह भविष्य की एक समस्या है—लाखों की संख्या में तुर्कमान, उज्बेक और ताजिक अफगानिस्तान में पिछड़ी जातियों की तरह बसते हैं और उन्ही के सहोदर शिक्षा तथा संस्कृति में बढ़े हुए ताजिकिस्तान, उज्बेकिस्तान, तुर्कमानिस्तान प्रजातंत्रों के स्वतंत्र स्वामी हैं। यह समस्या कजाकस्तान के साथ भी है, जिसके भाई बन्द कुलजा के पास इली-उपत्यका में चीनी साम्राज्य के नीचे हैं। बल्कि उन्होंने तो चीनी सरकार को कुछ झुकने को भी मजबूर किया। सोवियत की स्वतंत्र जातियों के यह कटे हुए भाई कब फिर से मिलेंगे, कहा नहीं जा सकता; क्यों कि इसका सम्बन्ध

अन्तर-राष्ट्रीय शान्ति से है। पर इतना तो निश्चित है, कि अपने समुन्नत भाइयों और उनके समृद्ध प्रदेश को देखते हुए वह दरिद्रता और दासता का जीवन अधिक समय तक बर्दाश्त नहीं कर सकते। इन पर शासन करने वाली सरकारों के लिए भी बेहतर यही है, कि इन जातियों की शिक्षा, संस्कृति और सम्पत्ति के तल को ऊँचा करें। बहुत समय तक अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति के भय का पल्ला पकड़ कर उन्हें चुपचाप बैठा नहीं रहना चाहिये। आखिर राजा-रानियों को युग अब लद गया। कड़ी से कड़ी बेड़ियाँ रस्सी की राख की तरह अपने आप झड़ती हुई देखी जा रही हैं।

२. इतिहास

उज्बेकिस्तान ऐतिहासिक तौर पर भी बहुत महत्व रखता है। नवपाषाण काल में—जो कि यहाँ ईसा-पूर्व ६-४ हजार वर्ष में रहा—यही भूमि अपने मूल स्थान से आये आर्यों की प्रथम भूमि रही। आरियाना वेजा ("आर्य-बीज") की जिस पवित्र-भूमिका वर्णन अवेस्ता में आया है, और जिसे हमारे यहाँ "उत्तर-कुरू" कहा गया, वह यही थी। आमू दरिया का पुराना नाम वक्षु था, यूनानियों ने ओक्सुस कर दिया। इसकी एक ऊपरी शाखाका नाम अब भी वख्श है। जरफ्शां इस प्रजातंत्र के कटि प्रदेश में बहती है, जिसने अपना नाम देकर प्रदेश को सुग्ध या सोग्द के रूप में प्रसिद्ध किया। उत्तर में सिर-दरिया है, जो फरगाना की ऊर्वर उपत्यका से होकर बहती है।

आर्यों के आने से पहिले भी एक पुरानी सभ्यता थी। लोग शहरों में रहते थे और खेती करना जानते थे। खारेज़्म के पास के रेगिस्तानों में इस सभ्यता के अनेक चिह्न हाल में मिले हैं। रूसी पुरातत्त्वज्ञों का विचार है, कि यह सभ्यता मोहन-जो-दड़ो-हड़प्पा (सभ्यता) से सम्बद्ध थी। इसका अर्थ यह हुआ, कि वोल्गा से पूर्व और पश्चिम की घुमन्तू जातियाँ—जिन्हें आसानी के लिए हम आर्य-शक कह सकते हैं—की एक शाखा आर्य का सिन्धु-सभ्यता वाली जाति के संघर्ष यहीं से शुरू हो गया था। सभ्य असभ्य जातियों के संघर्ष

का दूसरा अर्थ होता है, असभ्य जातिको सभ्यता में दीक्षित करना। इसलिए आर्यों ने सभ्यता का पहिला पाठ इसी भूमि में पढ़ा, इसमें सन्देह नहीं। आर्यों के इस प्रथम आक्रमण के बाद भी यह भूमि प्रायः पाँच हजार वर्ष तक जातियों के संघर्ष का अखाड़ा बनी रही। ईसा पूर्व २००० में मूल भूमि में छूट गये आर्यों के भाई शकों ने पूर्वका अभियान किया और वह आधुनिक कजाकस्तान-किर्गिजिस्तान होते, त्यान-शान के पहाड़ों को लांघते गोबी की मरुभूमि तक पहुँच गये— इसका जिक्र हम पहले कर चुके हैं। सिकन्दर जब ३३१ ईसा-पूर्व में सिर दरिया के किनारे पहुँचा, तो उस समय नदीपार शक उसका मुकाबला करने को तैयार थे और इस समय निम्न वक्षु या अराल तटवर्ती खारेजम-प्रदेश भी शकों के अधिकार में था। जब तक कजाकस्तान —शकद्वीप—में घुमन्तू शक कबीले रहते रहे, तब तक यहाँ के आर्यों को बराबर उनका डर बना रहता। कितनी ही बार बाहर वालो से डर पैदा होने पर उनसे सहायता भी मिलती।

ईसा-पूर्व १३० सन् के करीब हूणों से भागे शक-कबीलों ने बाढ़ के पानी की तरह इस प्रदेश को भर दिया। जब उससे भी काम नहीं चला, तो वह सीस्तन बलोचिस्तान और सिन्ध होते भारत तक पहुँच गये। यह घुमन्तू जाति थी, इसलिए सारा कबीला सेना थी। भारत में भिन्न भिन्न जातियों के रूप में जितना आज यह फैले हुए हैं, उससे जान पड़ता है, कि दो हजार वर्ष पहले भी यह काफी संख्या में यहाँ पहुँचे होंगे। कनिष्क की तरह कितने ही शक-राजा उत्तरी भारत और वर्तमान ऊज्बेकिस्तान के शासक रहे। उनकी प्रथम राजधानी कुशानिवा अब भी जारफ्शां उपत्यका में एक कस्बे के तौर पर मौजूद है।

कुशान—शकों के स्थान को हेफ़तालों ने लिया। यह हेफताल भारत में हूण कहे गये, ईरान तथा पश्चिमी देशों में भी इन्हें "श्वेत हूण" कहा गया है, यद्यपि वस्तुतः यह हूण न थे। हूणों के आधीन शक-द्वीप में रह आने से इन शकों

को इनके प्रतिद्वंद्वियों—कुशानों—ने यह नाम दिया। ईसा की पाँचवी सदी में इस तरह शक-द्वीप में बचे-बचाये शकों का भी बहुत सा भाग वक्षु और शुग्ध की भूमि में चला आया। कुशानों की तरह यह लहर भी ग्वालियर और सागर-दमोह तक पहुँची, किन्तु शक्तिशाली गुप्त-राजाओं ने उसे टिकने नहीं दिया, और ग्वालियर-दुर्ग में सूर्य-मंदिर की स्थापना करके भी मिहिर-कुल को भाग कर कश्मीर में शरण लेनी पड़ी।

मंगोल-नरवंशी हूणों का यद्यपि पुराने शक-द्वीप पर अधिकार हो गया था, और वहाँ के बचे-खुचे शकों पर मंगोल मुख-मुद्रा फिरने लगी थी, किन्तु पाँचवीं सदी तक इस भूमि में शकार्य रक्त ही अधिक देखा जाता था। "तुर्क" नाम से प्रथित हूण वंशजों ही के प्रहार से हेफताल कबीलों को दक्षिण की ओर भागना पड़ा था। किन्तु तुर्कों को अभी इस पुराने आर्यावर्त में आने में एक शताब्दी की देर लगी। छठीं सदी के मध्य में तुर्कों ने सिरदरिया को पार किया और धीरे धीरे हिन्दूकुश तक के देश को अपने अधिकार में कर लिया। इस समय से इस भूमि पर "मंगोल" रक्त का प्रसार आरम्भ हुआ। यहाँ रह गये आर्य जो ईरानी और सोग्दी नाम से प्रसिद्ध हुए थे, अब तुर्कों के घनिष्ठ सम्पर्क में आये। पिछली चौदह सदियों में वह सम्पर्क इतना बढ़ा कि आज इस भूमि के निवासियोंपर ही मंगोल (तुर्क) मुखमुद्रा की छाप नहीं है, बल्कि अब वह तुर्की भाषा बोलते हैं। जिस तरह आज उज्बेक नाम से प्रख्यात इन तुर्कों के चेहरे पर उनकी घनी दाढ़ी आँखों का कम तिर्छापन और कम उठी गाल की हड्डियाँ सोग्दी—ताजिक-प्रभाव को बतलाती हैं, उसी तरह उनकी भाषा पर भी ताजिक (फारसी) भाषा का बहुत असर पड़ा है।

आज इस प्रजातंत्र को उज्बेकिस्तान कहा जाता है। उज्बेक शब्द का प्रयोग सोलहवीं सदी के आरम्भ से होने लगा। चिंगिज़ के वंश की जो शाखा स्वर्ण-उर्दू रूस पर राज्य करती रही, उसी के एक खान (राजा) का नाम उज्बेक खान (१३१३-४०) था। इसी ने पश्चिमी मंगोल खानों में सर्वप्रथम इस्लाम

धर्म को स्वीकार किया, जिससे इसके अनुयायी कबीलों का नाम उज्बेक कबीला पड़ा। यह कबीला पश्चिमी कजाकस्तान में रहता था। अपनी शक्ति बढ़ाते-बढ़ाते सर्दार शैबानी के नेतृत्व में चिंगिज़ वंश के उत्तराधिकारी तैमूरवंश (१३७०-१५००) को मध्य-एसिया से भगा और तब से अर्थात् सोलहवीं सदी के आरम्भ से यह मुल्क उज्बेकों का देश कहलाया।

उत्तरी भारत में उज्बेक शब्द अति प्रचलित है, जिसका अर्थ बुद्धू और उजड्ड होता है। उज्बेक शब्द का ऐसा अर्थ होने का कारण है। उज्बेकों के खान शैबानी ने तैमूर-वंश का ध्वंस किया और उसी वंश के एक राजकुमार बाबर ने भाग कर हिन्दुस्तान में मुगल-साम्राज्य की स्थापना की। वस्तुतः इस वंश को मुगल या मंगोल (चिंगिज खान) वंश कहलाने का कोई अधिकार नहीं था। तैमूर स्वयं उस वंश का नहीं था। उसने अंतिम मंगोल खान को नाम के लिये रहने दिया और शासन को हथियाते हुये जापान के शोगनों और नेपाल के जंगबहादुर वंशज राणाओं की तरह अपने नाम के साथ केवल अमीर की उपाधि ही लगाकर सन्तोष किया। बाबर की माँ मंगोल खानों के वंश की थी। हो सकता है, यह भी कारण हुआ हो इस नये नामकरण का। उज्बेक कबीला, जिसका सर्दार शैबानी खान था, अभी भी घुमन्तू जीवन से आगे नहीं बढ़ा था; इसलिये उसमें कुछ उजड्डता रही हो, किन्तु शैबानी स्वयं बहुत संस्कृत और अपनी भाषा का अच्छा कवि था। अपने प्रतिद्वन्द्वी बाबर जैसा बड़ा कवि और लेखक न भी रहा हो, तो भी वह एक अच्छा साहित्यकार था, इसमें संदेह नहीं। खैर इसमें संदेह नहीं उज्बेक शब्द का यह दुरुपयोग उज्बेकों से पराजित बाबर वंश ही द्वारा हुआ।

उज्बेक भाषा छठीं सदी में आये तुर्कों की भाषा का विकसित रूप है। मंगोलों के शासन काल (१२२०-१३७०) में इसे साहित्यिक भाषा बनने का मौका नहीं मिला। यद्यपि तुर्क-काल (५५७-६७२) में कितने ही बौद्ध-सूत्रों का इस भाषा में अनुवाद हुआ था, किन्तु वह साहित्य-

परम्परा आगे अरबों का शासन स्थापित होने पर विच्छिन्न हो गई। फिर तैमूर के वंशजो उलुगबेग आदि के शासन-काल में जो सर्वतोमुखीन सांस्कृतिक प्रगति हुई, उससे इस प्रदेश की भाषा जो कि अब अधिकतर तुर्की थी, को आगे बढ़ने का अवसर मिला। मीर अलीशेरनवाई (१४४१-१५०१) ने अपनी सुन्दर कविताओं द्वारा इस भाषा को समृद्ध भाषाओं की श्रेणी में लाकर बैठा दिया। अभी तक इस भाषा का कोई स्थिर नाम नहीं हो पाया था। कभी इसे तुर्की कहते और कभी चगताई—चगताई (१२२७-४२) चिंगिज खान के पुत्र का नाम था, जिसके राज्य में कि यह सारा प्रदेश आया था। इसीके कारण यहाँ की भाषा को भी चगताई कहा जाने लगा। बाबर ने अपना बाबर नामा इसी भाषा में लिखा है। अस्तु, यद्यपि भाषा और जाति का नाम उज्बेक १६वीं सदी के आरम्भ से हुआ, तो भी यह भाषा बहुत पहले से मौजूद थी और रचना भी पहले से हो रही थी।

जाति का नाम यद्यपि १६वीं सदी से ही उज्बेक पड़ गया था, लेकिन इस जाति और उसकी भाषा को यह गौरव सोवियत् के शासन की स्थापना के बाद ही प्राप्त हुआ। १९१७ में समरकन्द, ताशकन्द के बड़े बड़े शहर और कितने ही उत्तरी प्रदेश सीधे रूसी शासन के अधीन थे। प्राचीन खारेज्म की भूमि में खीवा के अमीर का राज्य था और बाकी में बुखारा के अमीर का शासन था। यद्यपि हिन्दुस्तानी रियासतों की तरह यह दोनों रियासतें रूस की मातहत थीं और स्वतन्त्रता पूर्वक कुछ नहीं कर सकती थीं, तो भी अपनी जनता के ऊपर अत्याचार करने के लिये वह बिल्कुल मुक्त थीं।

उज्बेकिस्तान की भूमि का अधिक भाग रेगिस्तान है और सहस्राब्दियों से इसके कितने ही भाग को नहरों द्वारा हरा-भरा रखा जाता रहा। तैमूर और दूसरे शासकों ने नहरों के निर्माण पर खास तौर से ध्यान दिया, किन्तु पीछे के शासकों को उनके लिये उतनी चिन्ता न थी। जनता इन रेगिस्तानों में भटकती फिरती थी और उधर अमीर अपने दरबान की तड़क-भड़क में तैमूर-युग की

आवृत्ति करना चाहते थे। इसके लिए जनता का अधिक से अधिक शोषण हो रहा था। कृषि से भी अधिक इस देश में मेवा के बागों का महत्त्व था। खेत और बाग के लिए उपयोगी जमीन का अधिकांश भाग अमीर और उसके दरबारियों के हाथ में था। सैकड़ों वर्षों से स्थापित बुखारा के मदरसों की भी बड़ी बड़ी जागीरें थीं। इस सारी लूट के बाद मेहनत करनेवालों के लिए भूखे मरने के सिवाय और कोई रास्ता न रह जाता था।

१६१७ की फरवरी-क्रान्ति में जब जार को तख्त से हटाया गया, तो पहले उसका प्रभाव यहाँ पड़ा और बुखारा के अमीर ने कुछ शासन-सुधार स्वीकार भी किये। किन्तु वहाँ इतने अधिक स्वार्थों का विरोध था, कि उसे कार्यरूप में परिणत नहीं किया जा सकता था। अमीर और उसके मन्त्रियों ने सोचा—मास्को बहुत दूर है, बोलशेविक अपने ही गृह-युद्ध में परेशान हैं, इसलिए मेरी निरंकुशता के लिये कोई भय नहीं है। भीतरी असन्तोष को दूर करने के लिए उसने खुलकर खून की होली खेली और जिस पर जरा भी नये आन्दोलन (जदीदी) के साथ होने का सन्देह हुआ, उसे बुरी तरह से मौत के घाट उतारा।

लेकिन प्रगतिशील शक्तियाँ इतनी निर्बल न थीं। पड़ोस में समरकन्द और ताशकन्द में बोलशेविकों ने एक नये तरह का शासन स्थापित किया था, जिससे उज्बेकिस्तान की जनता को बहुत प्रेरणा मिल रही थी, तथा दबे-पिसे लोग सदियों की गुलामी को दूर करने के लिये कटिबद्ध हो गये थे। ब्रिटिश साम्राज्यवादी बोलशेविकों के नाम को मिटा देने के लिये जोर का प्रयत्न कर रहे थे, उन्होंने अमीर के पास भी रुपये और हथियार की मदद भेजी, किन्तु यह सब होते भी अमीर को १६२० में बुखारा छोड़कर अफगानिस्तान भाग जाना पड़ा। उसने इब्राहीम गल्लू नामक एक प्रसिद्ध डाकू को अपनी तरफ से शासक बनाया और फिर इन डाकुओं—जिन्हें बसमाची कहा जाता था—ने देश में तबाही मचानी शुरू की। मुल्ला, जागीरदार और व्यापारी बोलशेविकों के शासन के

रूप की झलक पा चुके थे और समझते थे कि उनकी बड़ी बड़ी जागीरें और शोषण के दूसरे ढंग चल नहीं सकते; इसलिये सब इब्राहीम गल्लू के साथ हुए। धार्मिक जहाद की घोषणा की गई। सभी बोलशेविकों और उनके साथ सहानुभूति रखने वालों को काफिर घोषित किया गया, तथा उनके जान-माल, स्त्री-बच्चों को लुटेरों के लिये हलाल कर दिया गया। फिर वह नृशंसता क्रूरता शुरू हुई, जिसे दुनिया के इतिहास में कभी ही कभी देखा जाता है। लाखों नर-नारी बूढ़े-बच्चे तक बड़ी बर्बरता के साथ मारे गये, जिन्दा जलाये गये। हजारों गाँवों को उजाड़ दिया गया। इस्लाम के लिये लड़ने वाले इन गाजियों को लोगों ने नग्न रूप में देखा। उधर से नई सरकार ने जमीनों को किसानों में बाँट दिया और उन्हें बीज तथा खेती के साधन दिये। उज्बेक जनता जानने लगी की कौन उनका हित है। बसमाचियों के विरुद्ध लड़ने में हजारों उज्बेक किसान मजदूर शामिल हुए और १९२४ पहुँचते पहुँचते उज्बेकिस्तान की भूमि तमाम बसमाचियों से मुक्त हो गई। ताजिकिस्तान अभी नहीं। तजिकिस्तान के पहाड़ी इलाके में १९२९ तक बसमाचियों का उपद्रव कुछ-कुछ चलता रहा। इन पहाड़ों में इक्के-दुक्के सीमा पार से घुस आये डाकुओं की रोक-थाम करनी कठिन थी, किन्तु सोवियत-सरकार सिर्फ डाकुओं से लड़ ही नहीं रही थी, बल्कि खेती, दस्तकारी के कामों में भारी सहायता देकर जनता के सामने एक नवीन जीवन का क्रियात्मक आदर्श पेश कर रही थी।

आज कश्मीर में वही हालत पैदा हुई है। इस्लामी जहाद के नाम पर सरहदी कबीलों को उभाड़ा गया है। भुक्खड़ लोग लूट का अच्छा मौका देखकर कश्मीर की सुन्दर और समृद्ध उपत्यका को लूटने के लिए चढ़ दौड़े। भारत सरकार की सेना ने उनके तथा उनके पृष्ठ-पोषकों के मनसूबे को पूरा होने नहीं दिया। लेकिन अभी भी शेख अब्दुल्ला तथा उनके साथियों का रास्ता अकंटक नहीं है। हिन्दू-विरोध और इस्लाम के नाम पर बाहर के लुटेरों को भेजा जा सकता है और अन्दर भी लोगों को बहकाया जा सकता है।

काश्मीरी मुसलमानों को कहा जायेगा कि तुम उस भारत संघ में क्यों सम्मिलित होगे, जिसमें करोड़ों मुसलमानों को शहीद किया गया है। यह साफ है कि बाहरी आक्रमण-कारियों को अपने सैनिक बल से मार भगाने भर से काम नहीं चलेगा। कश्मीर-राज्य पहाड़ी इलाका है, जिसके दुर्लंघ्य पर्वतों में आने जाने के हजारों रास्ते हैं। वह कठिन जरूर हैं, लेकिन बन्दूक लिए लुटेरों के आने में उससे कोई रुकावट नहीं हो सकती। सीमान्त पर पाकिस्तान, चित्राल और अफगानिस्तान के राज्य हैं, । जिनमें पहले दो तो खुल कर जहादियों के साथ साहानुभूति रखते हैं। फिर राज्य में सिर्फ काश्मीरी-मुसलमान ही नहीं हैं, उत्तर में बल्तिस्तान के बल्तीशीया मुसलमान रहते हैं और गिलगित की तरफ दर्द। इसमें सन्देह है, कि शेख अब्दुल्ला इन जातियों के ऊपर उतना ही प्रभाव रखते हैं, जितना कश्मीरी मुसलमानों पर। बाहर के आक्रमणकारियों से बचने के लिए जनता का सहयोग अत्यावश्यक है और यह सहयोग तभी मिल सकता है, जब कि जहादी प्रचार के विरुद्ध ठोस काम जन-हित के लिए किया जाय। कश्मीर को शान्त और सुरक्षित रखने के लिए यह जरूरी है, कि उसी तरह के जन-हित के काम यहाँ भी शुरू किए जायँ, जैसे कि सोवियत सरकार ने उज्बेकिस्तान और ताजिकिस्तान में किये। स्मरण रखना चाहिये, कि १६२०-२६ के छः वर्षों तक बसमाची कश्मीर के पड़ोसी ताजिकिस्तान में अपनी लूट जारी रख सके थे।

तो क्या कश्मीर-सरकार जन-हित के बड़े प्रोग्राम को काम में लाने जा रही है? ये प्रोग्राम क्या हो सकते हैं—पहला काम तो है, जमीन का मालिक किसानों को बना देना। सिंचाई के लिए जितनी नहरें आसानी से बन सकती हैं, उन्हें तत्परता से बनाना चाहिये और साथ ही नहरों की एक बड़ी योजना तैयार कर उसे भी काम में लाना चाहिये। अकर्मण्य कृषि-विभाग को क्रिया-शील बनाना चाहिये तथा बीज और खेती के साधनों को सुलभ करना चाहिये। काश्मीर अपने शाल-दुशालों और बारीक हस्त-शिल्प के

लिए प्रसिद्ध है। बुखारा और समरकन्द भी अपने बहु-मूल्य कालीनों, कासीदा की टोपियों और चादरों के लिए प्रसिद्ध रहा। किन्तु वर्तमान सदी तक उनकी अवस्था बहुत खराब हो गई थी। सोवियत्-शासन ने इस हस्त-शिल्प को बहुत उन्नत किया। मशीनवादी सोवियत्-शासन के इस काम पर आश्चर्य करने की आवश्यकता नहीं। सोवियत्-शासन के मशीनवाद में हस्त-शिल्प और हस्त-कला के लिये पूरी गुंजाइश है। कारीगरों को खाने के लिए, कच्चे माल के लिए पैसों की बड़ी तंगी रहती थी। फिर तैयार माल के बेचने में भी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। सोवियत् ने अपने दस्तकारों को सहयोग-समितियों में संगठित कर दिया। सहयोग समितियों के पास काफी रुपया दे दिया है। तैयार चीजों को बेचने के लिये सोवियत् के दूर-दूर प्रदेशों में बाजार तैयार किये गये। आज बुखारा समरकन्द के कारीगर बहुत सुखी और समृद्ध हैं। उनके हाथ की बनी चीजें २० गुना हो जाने पर भी माँग को पूरा नहीं कर सकतीं। यही नहीं, उन्होंने कला में भी उन्नति की है। शाल और कालीन की कारीगरी सीखने के लिए कला-स्कूल खोले गये हैं, जिनमें हर तरह के पुराने और नये नमूनों के साथ बाकायदा पढ़ाई होती है। दूसरे मुल्कों में इस विषय में कितनी उन्नति है, इसका भी ज्ञान कराया जाता है। यही नहीं, सस्ते एनीलाइन के कृत्रिम रंगों के आने से पुराने रंगों का प्रचार बन्द हो गया था—यद्यपि पुराने रंग अधिक सुन्दर और स्थायी होते थे। सोवियत् रसायन-शास्त्रियों ने खोजकर फिर उन पुराने रंगों को तैयार किया है और अब फिर वही रंग काम में लाये जाते हैं। काश्मीर के लिए सोवियत् के इस उदाहरण से बहुत कुछ सीखा जा सकता है। फिर काश्मीर की अपार खनिज और पनबिजली सम्पत्ति की अभी तक ठीक से सर्वे भी नहीं हुई है। उसे भी करना है, और इस सम्पत्ति से वहाँ के निवासियों के जीवन को समृद्ध बनाना है। यदि उद्योग को हिन्दू पूँजीपतियों के हाथ में दिया गया, तो हानि होगी, शत्रुओं को प्रचार करने का मौका मिलेगा। संक्षेप

में यह कि काश्मीर तभी भारत-संघ का स्थायी भाग हो सकता है, यदि वहाँ के आर्थिक जीवन का समाजवाद के आधार पर नव-निर्माण हो, उसकी कृषि और बागवानी आधुनिक तरीकों द्वारा की जाय और उसे एक उद्योग-प्रधान देश बना दिया जाय।

३. कृषि—

उज्बेकिस्तान गदहों, टट्टुओं और ऊँटों का मुल्क था। आज वहाँ की पक्की सड़कों पर उज्बेक ड्राइवर अपनी मोटर-लारियों को दौड़ा रहे हैं, लड़के-लड़कियाँ साइकिल दौड़ाते हैं। लेकिन दो-ही दशाब्दी पहले वहाँ ओमच (लकड़ी के हल) चलते थे। खेती का सब काम हाथ से होता था। आदिमयुग से चले आये थे खेती के हथियार अब वहाँ जादूघरों की शोभा बढ़ा रहे हैं, और उनकी जगह २२ हजार ट्रैक्टर काम करते हैं। ९९% किसान ८,४५२ कल-खोजों और ७९ सोव-खोजों में संगठित हैं। १७७ मशीन-ट्रैक्टर स्टेशन खेती की जोताई, कटाई करने के लिए तैयार हैं।

४. रेगिस्तान से युद्ध—

उज्बेकिस्तान के अधिक भाग में रेगिस्तान है, और उसके बाग तथा खेत इसी रेगिस्तान से जबर्दस्ती निकाले गये हैं। सोवियत्-काल में इस रेगिस्तान से और भी बहुत सी जमीन छीनी गई है। यह काम सिर्फ नहरों द्वारा ही नहीं हो रहा है, बल्कि इसके लिए रेगिस्तान से दूसरी तरह की भी लड़ाई लड़ी जा रही है। इसका एक तरीका है, रेगिस्तान से लोहा लेनेवाले वृक्षों और झाड़ियों का वहाँ लगाना। विश्वयुद्ध से पहले यह काम हो रहा था। लड़ाई के बन्द होने के एक साल के भीतर ही ९,२०० एकड़ पर वृक्ष और झाड़ियाँ लगादी गईं। बुखारा, खारेज्म, फर्गाना और सुर्खान-दरिया के जिलों में १९४६ में ८,७५० एकड़ और जमीन में पेड़ लगाये गये। युद्ध से पूर्व के काल में ७५,००० एकड़ में वृक्ष लगाये जा चुके थे। किजिल-कुम के महारेगिस्तान से बचाने और खेती की जमीन अधिक करने के लिए बुखारा जिले

में ऐसी बहुत सी घनी वृक्ष-पंक्तियाँ लगाई गई हैं। रेगिस्तान को इस तरह पीछे ढकेल कर सिंचाई का प्रबन्ध कर अंगूर और मेवों के बाग तथा मिस्री कपास के लिये खेत तैयार किये गये हैं।

मध्य-एसिया में मनुष्य को रेगिस्तान से युद्ध आरम्भ-काल से ही करना पड़ा। पीढ़ियों ने शान्ति काल में जो सफलता प्राप्त की, उसे कु-शासकों ने चन्द वर्षों में खतम कर दिया। लेकिन साइन्स-युग से पहले मनुष्य के पास रेगिस्तान से लड़ने के लिए उतने साधन न थे। साइन्स ने आज मनुष्य के हाथ में अपार साधन दे दिये हैं। ऐसा युद्ध सोवियत्-भूमि के उन सभी भागों में बड़ी सफलता से लड़ा जा रहा है, जहाँ कहीं भी रेगिस्तान है—वह चाहे वोल्गा का रेगिस्तान हो, या कजाकस्तान का उज्बेकिस्तान का या तुर्कमानिस्तान का, सभी जगह लड़ाई जारी है।

उज्बेकिस्तान में सोवियत् का ⅔ कपास तैयार होता है और यह क्षेत्र बराबर नहरों के विस्तार द्वारा बढ़ाया जा रहा है। १९२४-३९ के १५ वर्षों में २ लाख हेक्तर नये कपास के खेत बढ़ाये गये। क्रान्ति से पहिले सिर्फ ६०,००० हेक्तर जमीन में नहर से सिंचाई होती थी।

१९४६ में पिछले साल से दूना कपास उज्बेकिस्तान ने सरकार को दिया था। उज्बेक औद्योगिक फसल मन्त्री मुकान्व ने कहा "इस साल जो इतनी अधिक फ़सल हुई है इसका कारण सरकारी सहायता है। बोने के वक्त वसन्त में हमारे कल-खोजों को भारी संख्या में नये ट्रैक्टर मिले और सरकारी कारखानों ने पिछले साल से और अधिक परिमाण में खनिज-खाद्य दिया।

आजकल कल-खोज कपास को सरकारी अड्डों पर पहुँचाने में होड़ लगाये हुए हैं। प्रति-फसल प्रतिहेक्तर ५,००० किलोग्राम (६⅞ हजार सेर) कपास पैदा करने की चारों ओर कोशिश हुई, और दो हजार से तीन हजार किलोग्राम तक उसे पैदा किया गया। अब कपास के खेतों में लोढ़ने का काम अधिकतर हाथ से नहीं बल्कि मशीन से होता है, मशीन उन ढेंढ़ियों को भी

चुनती है, जो जाड़े के आ जाने से खिलने नहीं पातीं। यह काम ४ लाख ४० हजार एकड़ में करना है। ८,१५,००० एकड़ में इस साल कपास की फसल हुई। मशीनों से कपास के झाड़ों के निकालने का भी काम लिया जायगा और इस तरह खेत जल्दी जोतने के लिये तैयार हो जायगा।'

× × ×

१९४६ में कपास वाले ७,००० कल-खोजों के किसान कत्ताकुर्गन में एक बड़ा बाँध बनाने में लगे थे। साल के अन्त तक उन्होंने १०,००,००० घनमीतर मिट्टी निकालकर बाँध पर डाली। इस बाँध के भीतर ६० करोड़ घनमीतर की भारी जल-राशि एकत्रित होगी। यह जलनिधि जरफशां-उपत्यका के बहुत से कपास के खेतों को काफी पानी देगी, तथा प्रजातन्त्र के कपास के खेतों का ⅑ इससे लाभान्वित होगा। पानी की अधिकता के कारण फसल का क्षेत्र ही नहीं बढ़ेगा, बल्कि उपज भी बढ़ेगी। यह छोटा सा समुद्र हवा की खुश्की को भी कम करेगा। कल-खोजी किसान पहले ही इस बाँध को बनाने में लगे थे, किन्तु युद्ध के समय वह रुक गया था। लड़ाई के बाद अब फिर उसमें तेजी से काम हो रहा है। १९४८ में बाँध तैयार हो जायेगा।

कर्शी शहर के पास से कश्का-दरिया जाती है। इस इलाके में भी रेगिस्तान का जोर है और अब नदी पर एक बड़ा बाँध बाँधा जा रहा है, जिसके लिए २०,००,०० घनमीतर मिट्टी निकालनी पड़ेगी। इस बाँध से १४० किलो-मीतर लम्बी नहर निकाली जायेगी।

उज्बेकिस्तान का कपास ताशकन्द की बड़ी बड़ी मिलों में ही नहीं बल्कि सोवियत् के दूसरे भागों में भी भेजा जाता है। कपास से बिनौला निकालने और गाँठ बाँधने के लिए २८ जिनिंग फेक्टरियाँ हैं। १९४६ में वह अपने काम को २० % अधिक पूरा कर रही थीं। कपास की खेती किस तरह बढ़ी है, यह इसी से मालूम होगा, कि १९१३ में जहाँ वह ४,२३,०००

हेक्तर (१ हेक्तर = २.४७१ एकड़) में बोई गई थी, वहाँ १६३६ में ६,१८,००० हेक्तर हो गई। इस साल १ करोड़ ६० लाख क्विन्तल (१ क्विन्तल = ३.६७४३ बुशल) कपास हुई थी। १६१३ में उपज ५०,००,००० क्विन्ताल थी।

उज्बेकिस्तान में चावल भी होता है और बहुत अच्छी जाति का। १ लाख से अधिक हेक्तर में धान की फसल बोई जाती है। नहरों ने खेती के क्षेत्र-फल और पैदावार दोनों को बढ़ाया है। १६३७ में ७०,००,००० एकड़ जमीन में खेती होती थी, जिसमें ३७,००,००० एकड़ को नहरें सींचती थीं। सभी नहरों में फ़र्गाना की स्तालिन महानहर १६४० में बनी, यह १६८ मील लम्बी है और सिर दरिया के पानी से १२½ लाख एकड़ खेतों को सींचती है।

उज्बेकिस्तान सोवियत का ⅔ कपास देता है, यहाँ अंगूर, सेब और दूसरे मेवों के बाग भी बहुत हैं, तो भी अनाज की पैदावार कम नहीं होती। उसके २२,००० ट्रेक्टरों और १,५०० कम्बाइनों ने खेतों की उपज को खूब बढ़ाया है। मशीनों के कारण खेतों के काटने और बोने में बहुत सुभीता और जल्दी होती है। १६४६ की फसल के बारे में वहाँ के अखबारों के अनुसार १५ जुलाई तक ५५.६% फसल काटी जा चुकी थी। पिछले साल इस समय तक २०४% ही काटी गई थी, यद्यपि इस साल ५,००,००० एकड़ और खेतों में फसल बोई गई थी। उज्बेक कृषि मन्त्री मिर्जा वलीमुहम्मदजानोफ ने इसका कारण बतलाते हुए कहा—नई मशीनों के अतिरिक्त कलखोजों में कामों का जो अच्छा संगठन हुआ है, उसने भी इसमें सहायता की है। जोताई आदि का काम बहुत योग्यता के साथ किया गया था। बोआई पिछले साल से पहले समाप्त हो गई और फसल की देख-भाल अच्छी तरह हुई। साथ ही खेती के काम में अधिकांश मशीनों के उपयोग ने भारी सहायता की। मन्त्री ने बतलाया कि किसान अनाज की उपज को और बढ़ाने के लिये जबर्दस्त मेहनत करने

जा रहे हैं। अनाज के खेतों में चौमासा जोतने और बीच के समय में उर्वरता बढ़ानेवाले पौधों के लगाने का इन्तिजाम हो रहा है। अनाज की फसल अधिकतर बिना सींची जमीन में बोई जाती है। सींची जमीन को कपास ने ले रखी है। इस बिना सींची जमीन में कैसे अनाज की उपज बढ़ाई जाय, इस के लिये जमीन में नमी बनाये रखने की बहुत सी बातें की गयी हैं, बहुत से नये बीज भी तैयार हुए हैं। मन्त्री ने कहा "इस तरह से कपास के खेतों को बिना छुए ही हम अनाज को ड्योढ़ा कर सकते हैं।"

उज्बेकिस्तान के दीहात की काया-पलट हो गयी है। कपास, अनाज, मेवा सभी से मनुष्य इतनी सम्पत्ति पैदा कर रहा है, कि वह आधुनिक ढंग के सुखी जीवन को बिता सकता है। जगह-जगह नहरें चल रही हैं, जिनके किनारे तून के वृक्ष लगे हैं। सड़कों के किनारे सफेदे या कारागाछ के वृक्ष खड़े हैं। खेतों में कपास और अल्फाल्फा (घास) या अनाज की फसल लगी है। कितनी ही धानों की क्यारियाँ भी पानी से भरी हैं। अंगूर और मेवे के बागीचों के किनारे दीवारें खड़ी हैं। सड़क के ऊपर कल-खोज की मोटरें और लारियाँ दौड़ रही हैं। ड्राइवर गर्मी के लिये सीने की बटन खोले हुए हैं और उसके सिर पर बेल-बूटा लगाई गोल टोपी है। स्त्रियाँ रंग-बिरंगे स्कर्ट (लहंगे) या दूसरे परिधान पहने हुई हैं। आज के सुखी किश्लाक (गाँव) में चारों तरफ हरे हरे बगीचे दीख पड़ते हैं। गाँव में एक लाल चाय खाना रहना जरूरी है, जहाँ कितनी ही बार गाँव की संगीत-मंडली भी अपना जौहर दिखाने बैठती है। हर गाँव में सोवियत् (पंचायत)-घर, एक बड़ा क्लब-घर, एक सहयोगी दूकान, स्कूल और पुस्तकालय के मकान जरूरी हैं। साथ ही क्लब-घर की शाला में नाटक या सिनेमा का कोई न कोई मनोरंजन प्रोग्राम हर सप्ताह रहता है।

वहाँ के गाँवों में बिजली भी तेजी से पहुँच रही है और कई छोटे-छोटे बिजली तैयार करने के स्टेशन तैयार किये गये हैं।

५. पशुपालन--

उज्बेकिस्तान में पशुपालन भी काफी है। इसके लिए फर्गाना उपत्यका जाड़े के दिनों में अच्छी है। गर्मियों में पशुओं की ऊपरी पहाड़ की चरागाहों में भेजा जाता है। हर गर्मी के आरम्भ में पशु अलई और पार-अलई पर्वत-मालाओं के घास के मैदानों में जाते हैं। १९४६ में ३ लाख पशुओं को ३०० किलोमीतर दूर कितने ही पहाड़ी जोतों को पार करके पहुँचाया गया। यह उपत्यकायें १२०० (४ हजार फीट) से ३,८०० मीतर तक ऊँची है। उनके साथ ५,००० पशुपाल, पशु-चिकित्सक और दूसरे आदमी रहे।

× × ×

उज्बेक पशु-पालों ने युद्ध के समय जैसे दिल खोलकर मेहनत की और लाल सेना को सहायता दी। उसी तरह लड़ाई के बाद इन्होंने उजड़े इलाकों को आबाद करने में हाथ बँटाया। १९४५ में उज्बेक मेष-पालों ने वोल्गा तीर के कल-खोजियों को हजारों कराकुल भेड़ें भेंट की। कराकुल भेड़ों की नमकीले बालों वाली खाल बहुत कीमती होती हैं। मेष-पाल खुद अपने भेड़ों को पहुँचाने आये। इसके लिए ५०० मेष पालों, पशुचिकित्सकों और दूसरे सहायकों को ५ महीने में २,००० किलोमीतर जमीन नापनी पड़ी --और ऐसी जमीन जो कहीं वनस्पति-हीन, कहीं निर्जन-निर्जल बालुका भूमि, कहीं बरफ जमी हुई और कहीं हड्डी चीरनेवाली तेज हवावाली थी।

चरवाहों ने जून में यात्रा शुरू की। लेकिन यह यात्रा पुराने युग की यात्रा न थी। चरवाहों की सवारी के लिए जीन कसे हुए अच्छी जाति के घोड़े, मोटर-कारें और जल्दी के काम के लिए एक हवाई जहाज भी था। सारी योजना पहिले बन चुकी थी। पहले भेड़ों को किजिल-कुम के महारेगिस्तान से पार कराया गया, फिर वह वक्षु-उपत्यका और नदी को पार करते उस्त-उर्त के प्लेटो पर पहुँची। यह ऊँचा मैदान अराल और कास्पियन समुद्र के बीच में

है, और क्रान्ति से पहले बहुत ही अपरिचित स्थान समझा जाता था। यहाँ उनके सामने पहिले-पहिल कठिनाई आयी और वह थी गर्मी और जलाभाव की। यात्रा रात ही को की जा सकती थी और पहिले से आगे की मंजिल की देखभाल करके। इन कठिनाइयों के साथ साथ भेड़ियों से भी बचना था और वहा साँप भी बहुत थे। कितनी ही बार इस निर्जन-असीम बयाबान में भटक गये मेषपालों और उनकी भेड़ों का पथ-प्रदर्शन विमान करता था। एम्बा नदी की उपत्यका में पहुँचकर कुछ आराम मिला, लेकिन यहाँ की अधिक वर्षा और रात को बर्फानी सर्दी ने गति को मन्द कर दिया।

अक्तूबर के अन्त में वे उराल नदी के तट पर पहुँचे और अब उन्हें हिम बिन्दु से नीचे की सर्दी का सामना करना पड़ा। एक महीना बर्फ पर चलने के बाद उन्होंने वोल्गा के किनारे डेरा डाला। मेष-पालों को बड़ी प्रसन्नता हुई, कि रास्ते में उन्हें बहुत कम भेड़ें खोनी पड़ीं।

उज्बेक मेषपालों ने हजारों की संख्या में सबसे मूल्यवान भेड़ें वोल्गा-वाले पशुपालों को दीं। अब वहाँ एक नया पशु-उद्योग आरम्भ हुआ। वोल्गावाले रूसी-मेषपालों ने अपने भाई उज्बेक मेषपालों का बड़ा स्वागत किया, भोज और आतिथ्य किये और फिर वह स्पेशल ट्रेन से अपने घर भेजे गये।

उज्बेकिस्तान में ६०,००,००० पशु हैं। इनमें अच्छी जाति के घोड़े, गायें, भेड़ें, कराकुल (भेड़ें), बकरियाँ और ऊँट सभी हैं। उज्बेक संघ-प्रजातन्त्र में सम्मिलित कराकल्पक स्वायत्त-प्रजातन्त्र में सोवियत् में सबसे अधिक कराकुली भेड़ें पाली जाती हैं।

६ ताशकंद—

क्रान्ति के पहले मध्य-एसिया के दूसरे भागों की तरह यह प्रदेश भी उद्योग-धन्धे में बहुत पीछे था। ताशकन्द रूसी सरकार के शासित तुर्किस्तान प्रान्त की राजधानी थी, और पहिले-पहिल यहीं रूसियों ने कपड़े का कारखाना

खोलकर नये ढंग के उद्योग-धन्धे का आरम्भ किया। ताशकन्द आज हरे भरे बगीचों और चौड़ी सड़कों का नगर है। जन संख्या लड़ाई से पहले ही ५,००,००० पहुँच गई थी, अब तो वह ६,००,००० से भी ऊपर है।

लेकिन पुराना ताशकन्द दूसरा ही था। नगर के उस समय दो भाग थे—पुराना शहर और नया शहर या सिविल-लाइन। दोनों की दो दुनियायें थीं, दोनों के बीच एक चौड़ी नहर विभाजक थी। पुराना नगर अति प्राचीन है। यहाँ बिना खिड़की और रोशनदान के मिट्टी की चौड़ी छतवाले घरौंदे पतली टेढ़ी-मेढ़ी गलियों के किनारे बने हुये थे। लोगों ने पहिले स्वच्छ जल, स्वच्छ वायु और स्वास्थ्य-रक्षक घरों का ख्याल नहीं किया, तो रूसी सरकार को इसकी क्या परवाह? उसने रूसी अधिकारियों के लिये अलग शहर बसा रखा था। यहाँ गोरे साहब किस ठाठबाठ से रहते थे, यह भारतीय पाठकों से कहने की जरूरत नहीं। पक्की सड़कें थीं, जहाँ लम्बे लम्बे सफेदे के वृक्ष लगे हुए थे। पास में पतली नहर बहती थी। हर कोठी या बँगले के साथ सेवों और फूलों का सुन्दर उद्यान होता था। घूमने फिरने के लिये बग्गियों के अतिरिक्त ट्राम भी लगी थी। घरों में बिजली भी जल रही थी।

किन्तु यह सारा शहर जारशाही अफसरों और रूसी व्यापारियों के लिये सुरक्षित था। कोई भूला भटका उनका पिछलग्गू ही वहाँ रहने पाता।

लेकिन क्रान्ति ने दोनों नगरों और उनके रंग-भेद को निकाल फेंका। अब उसकी जगह नया नगर बना हुआ है। पहले से भी सुन्दर हजारों नये बड़े बड़े सौध तैयार हुए हैं। एक विशाल नाट्यशाला बनी है। आज इसके निवासियों में उज्बेक डाक्टर, इंजीनियर, प्रोफेसर और कारखानों के मजदूर हैं। यह कायापलट सिविल-लाइन ही में नहीं हुई है, बल्कि पुराने शहर की भी अब वह सँकरी गलियाँ खतम हो चुकी हैं। उनकी जगह आधुनिक ढंग की चौतल्ली पँचतल्ली इमारतें खड़ी हैं, जिनमें कहीं स्कूल, कहीं सिनेमा तो कहीं परिवारों के रहने के लिये मकान हैं। यहाँ कितने ही कालेज हैं। एक महिला क्लब और

एक जातीय नाट्यशाला भी है। सँकरी गलियों में ट्राम कौन लाना चाहता, किन्तु अब इसकी प्रशस्त सड़कों पर ट्रामें दौड़ती हैं।

ताशकन्द मध्य-एसिया का सबसे बड़ा औद्योगिक केन्द्र है। यहाँ बहुत विशाल कपड़ा मिल है, जो हर साल १० करोड़ मीतर (१२ करोड़ गज से ऊपर) सूती कपड़ा पैदा करती है। यहाँ एक कृषि मशीन की भी बहुत बड़ी फैक्ट्री है, जिसमें सभी तरह की मशीनें बनती हैं। ताशकन्द के पास चिरचिक नदी पर कई पन बिजली के स्टेशन हैं, जो शहर के घरों और कारखानों के लिए बिजली पैदा करते हैं। इसके पास ही खनिज-खाद का कारखाना है, जो कपास के खेतों के लिये खाद तैयार करता है।

समरकन्द —

बिजली पैदा करने का काम चिरचिक के पन-बिजली स्टेशनों तक ही सीमित नहीं है। समरकन्द में भी दर्गम नहर के पास एक बड़ा पन-बिजली स्टेशन बनाया जा रहा है। इसका पहिला भाग तो बल्कि काम भी करने लगा है। जरफ़शाँ नदी समरकन्द और बुखारा प्रदेश की प्राण है। समरकन्द के इलाके में चारों ओर अंगूर और मेवों के बाग, कपास और धान के खेत फैले दिखाई पड़ते हैं। समरकन्द को सिकन्दर ने भी देखा था, बल्कि वह उससे भी पहले से आबाद था। तैमूर के समय यह राजधानी रहा। वैसे पीछे बुखारा राजधानी हो गई और १६वीं सदी के बाद यह एक बड़ा नगर मात्र रह गया, शिक्षा और संस्कृति में इसका स्थान हमेशा ऊँचा बना रहा। लेकिन शिक्षा संस्कृति का केन्द्र होना किसी नगर की समृद्धि और वृद्धि के लिये काफी नहीं है। सोवियत् काल में शिक्षा और संस्कृति का केन्द्र होने के साथ साथ यहाँ उद्योग-धन्धा भी बढ़ाया जाने लगा। पहले तो यहाँ की दस्तकारियों को सहयोग-समितियों में संगठित कर उन्नत किया गया, फिर नये कारखाने खोले गये। युद्ध के समय और तेजी से कई फैक्टरियाँ और मिलें खुलीं। इसके लिए बिजली बढ़ाना आवश्यक हो गया है।

लाखों किसानों ने मिलकर समरकन्द के पास दर्गम नहर के किनारे बाँध बाँधने का काम शुरू किया। इससे एक तरफ़ किसानों को अपने खेतों के लिये पानी मिलेगा, और दूसरी तरफ बिजली पैदा होगी, जो समरकन्द की २,५०,००० आबादी तथा उसके कारखानों के साथ साथ किसानों के घरों को भी प्रकाशित करेगी। पहिला हिस्सा जो काम करने लगा है, अब तक पैदा होने वाली बिजली से चौगुनी दे रहा है। इतनी ही क्षमता का दूसरा स्टेशन भी १६४७ में तैयार होने वाला था। इसके बाद तीसरा स्टेशन तैयार होगा, जो इन दोनों स्टेशनों से चौगुनी बिजली देगा। सारे स्टेशनों के तैयार हो जाने पर वर्तमान आवश्यकता की ही पूर्ति नहीं होगी, बल्कि उसके उपयोग के लिये और भी कितने कारखाने बनाये जानेवाले हैं। समरकन्द प्रदेश के गाँवों में भी बिजली लाने के लिये छोटे बड़े स्टेशन बनाये जा रहे हैं। आठ स्टेशन बन चुके हैं और १३ और बन रहे हैं। धीरे धीरे नहर के किनारे और भी कितने स्टेशन बनाये जायेंगे और इन स्टेशनों की बिजली से कलखोजों के घरों को प्रकाशित करने और मशीनों को चलाने का काम लिया जायेगा। समरकन्द का यह बिजली प्रोग्राम उज्बेक प्रजातन्त्र के उस प्रोग्राम का अंग है, जो सारे प्रजातन्त्र में बिजली फैलाने के लिये बनाया गया है और जिसके लिये लाखों किसान स्वेच्छापूर्वक काम कर रहे हैं।

नहरों से बिजली पैदा करने के साथ-साथ सिंचाई का काम भी एक मुख्य चीज़ है। खास करके सोवियत् मध्य-एसिया में, जहाँ वर्षा की कमी के कारण पानी अनमोल चीज है। यह कह आये हैं, कि मध्य-एसिया की नदियों से सिंचाई का काम बहुत प्राचीनकाल से लिया जाता था। सिर-दरिया, जरफ़शां और आमू-दरिया इस प्रजातंत्र के लिए बहुत महत्व रखती हैं और तीनों पर नहरों के बनाने का काम बड़े पैमाने पर चल रहा है। जरफ़शां नदी का पुराना नाम सुग्ध नदी (सोग्द) था और जिसने ही अपना नाम वहाँ की जाति को दिया, जैसा कि सिन्ध ने अपना नाम वहाँ बसते सिन्धु कबीले

को और पीछे ईरानियों द्वारा भारे देश और निवासियों को दे उन्हें हिन्दू बना दिया। किसी समय जरफ़शां या सुग्ध नदी आमू-दरिया (वक्षु) में गिरती थी, किन्तु अब वह वक्षु पहुँचने से २० किलोमीतर पहिले ही विनष्ट हो जाती है। रेगिस्तान उसके मार्ग को रोक देता है। जरफ़शां-उपत्यका सोवियत् मध्य-एशिया की सबसे अधिक उर्वर भूमि है। यहीं सबसे पुराना नगर समरकन्द है, यहीं कुशानिया है जो किसी वक्त कुशान-राजाओं की राजधानी थी। यहीं बुखारा के पास वरखशा के ध्वंसावशेष हैं, जो तोरमान और मिहरकुल-वंश की राजधानी रही यहीं बुखारा का प्रसिद्ध शहर है, जिसने बिहार की प्रधानता से अपने इस नाम को ही नहीं बल्कि आरम्भिक कीर्ति को भी पाया। अरब शासन-काल में इसका महत्त्व बढ़ा और आगे चलकर यह मध्य एसिया की काशी बन गया।

लेकिन यह सारी संस्कृति और सभ्यता की चकाचौंध यहाँ की उर्वर भूमि के ही कारण थी। गेहूँ, तेलहन और चावल बहुत प्राचीन काल से यहाँ पैदा होता रहा। सबसे अच्छी जाति के अँगूर, मेवों और तरबूजों के लिये जरफ़शां उपत्यकता सदा प्रसिद्ध रही—जरफशां का सुवर्ण-वर्षिका नाम कितना यथार्थ है। कपास भी यहाँ प्राचीन काल से होती आई है। रेशम के कीड़े उससे सदियों पहले पाले जाने लगे, जबकि चीन से बाहर कहीं भी इनके पालने का काम आरम्भ हुआ। कागज का निर्माण चीन से पहिले समरकन्द पहुँचा था। सातवीं सदी में समरकन्द विजय करते वक्त अरबों ने पहले-पहल इस नई चीज को आश्चर्य के साथ देखा, और उन्हीं के द्वारा हिन्दुस्तान तथा दूसरे देशों में कागज का प्रचार हुआ। जरफशाँ-उपत्यका में अलफाफा और दूसरी नई फसल होने लगी हैं। अब तो यहाँ ऊखें भी बोई जाने लगी है। १९४७ में ऊख से चीनी बनानेवाली पहली मिल आरम्भ हुई। इन फसलों के लिये पानी की जरूरत है और इसीलिये कलखोंजी किसान मिलकर कत्ताकुरगान की महाजलनिधि को बना रहे हैं तथा जिसे वह अभिमान से उज्बेक-सागर कहकर पुकारते हैं।

× × ×

अब भी नगर की चारों तरफ ऊँचे प्राकार और बारह दरवाजे हैं। पुरानी सड़कों के किनारे कितने ही छोटे-छोटे चौरस छतवाले कच्ची ईंट के बने मकान हैं, जिनका ढाँचा सफेदे की कमजोर लकड़ी का है। किन्तु, बड़ी तेजी से वह खतम होते जा रहे हैं। रेशम कारखाना, आधुनिक नाट्यशालायें, सरकारी आफिस की इमारतें, उष्णादेशीय चिकित्सालय, रहने की हजारों इमारतें बिलकुल नये ढंग की बनी हैं। १९२० में समरकन्द की जनसंख्या ८२००० थी, जो १९३३ में १ लाख ५४ हजार हो गई। और अब ढाई लाख से भी ऊपर है।

× × ×

एक हजार वर्ष पहले अरब लेखकों ने इसके बारे में लिखा था "एक बड़ा ही प्रसिद्ध और कीर्तिशाली नगर जहाँ पर युग के महान् पुरुषों का समागम होता है।" ५०% साल पहले समरकन्द तैमूर की राजधानी रहा। उस वक्त तैमूर का राज्य पश्चिम में भूमध्य-सागर के किनारे तक पहुँच गया था। तैमूर ने दिल्ली को (१३९८ ई०) ही नहीं लूटा था, बल्कि मास्को को भी (१३९५) ध्वस्त किया था और दुनिया भर के कलाकारों और लूट की अपार सम्पत्ति से अपनी राजधानी को समृद्ध बनाया था। यहीं समरकन्द में उन सुन्दर इमारतों का आरम्भ हुआ, जिनका अन्तिम विकास उसके वंशजों ने हिन्दुस्तान में दिल्ली, आगरा और सिकरी की वास्तु-कला द्वारा किया। तैमूर की समाधि एक बहुत ही सुन्दर इमारत है और उसी तरह बीबी खानम् की इमारत भी है, जिसे कि उसने अपनी बीबी के नाम पर मसजिद के रूप में बनाया था। सोवियत काल में इन इमारतों पर खास तौर से ध्यान रखा गया तथा बड़े परिश्रम और व्यय के साथ उनकी मरम्मत हुई।

१९४५ के अन्त में समरकन्द में उज्बेक-साइन्स-अकदमी का अधिवेशन हुआ, जिसमें अकदमी के प्रेसीडेन्ट प्रो० ताशमुहम्मद कारी

नियाजोफ़ ने तैमूर के पौत्र और प्रसिद्ध विद्याप्रेमी उलुग़्बेग की वेधशाला का जिक्र किया। उलुग़्बेग ने तारों का एक वृहत् मानचित्र और सूची तैयार कराई थी, जो आधुनिक यूरोपीय-ज्योतिषशास्त्र की खोजों के आरम्भ तक सारी दुनिया में श्रेष्ठ समझी जाती थी। उलुग़्बेग की वेधशाला की विशाल और सुन्दर इमारतों के बारे में समसामयिकों का कहना था, कि उसकी तुलना कस्तुनतुनिया (इस्ताम्बूल) की प्रसिद्ध मसजिद सोफ़िया से की जा सकती है—सोफ़िया मसजिद वस्तुतः बिज़नतिन-ग्रीककाल की इमारत है। प्रो० कारीनियाजोफ़ ने अपने भाषण में कहा—"इसी वेधशाला में वह ज्योतिष-सूची बनाई गई थी, जो अपनी शुद्धता के लिये आज भी आश्चर्य की चीज है। सदियों तक प्राची और यूरोप के ज्योतिषी इससे सहायता लेते थे। उलुग़्बेग के मरने के बाद धर्मान्ध प्रतिगामियों, ने जिनमें उसका अपना पुत्र भी शामिल था, इस वेधशाला को नष्ट कर दिया और उसका काम बिल्कुल खतम हो गया। वेधशाला का नाम इस तरह मिट गया कि लोग उसके अस्तित्व को भी भूल गये। वर्तमान शताब्दी के आरम्भ में सोचा जाता था, कि उसके ध्वंस का भी कोई चिन्ह नहीं रह गया है और उसकी इमारत के ढाँचे का पता लगाना कभी संभव नहीं होगा। १९०८ में रूसी पुरातत्ववेत्ता व्यत्किन ने उस जगह का पता लगाया, जहाँ पर कि वेधशाला थी और ध्वंस से कुछ चीजें भी प्राप्त कीं। लेकिन उसकी व्यवस्थित खुदाई सोवियत-काल में ही हुई और जिसमें प्रो० कारीनियाजोफ़ का खास हाथ है। कारीनियाजोफ़ ने अपने भाषण में आगे कहा—"मैंने कितने ही पहले के अज्ञात हस्त-लिखित ग्रन्थों में कुछ ऐसे ग्रन्थ देखे, जो हिन्दुस्तान में लिखे गये थे और हाल में मध्य-एसिया के पुराने पुस्तकालयों से मिले। आजकल यह ग्रन्थ उज्बेक-साइन्स-अकदमी के प्राच्य-हस्तलेख-प्रतिष्ठान में रखे हुये हैं।" इन हस्तलेखों से पता लगता है, कि वेधशाला की इमारत ढोल की शकल की थी और एक विशाल मीनार की तरह सीधी खड़ी थी। मकान कई तले का था। यंत्रों के रखने और ज्योतिषियों के रहने के लिये पास में कई मकान थे। उलुग़्बेग के

सहायक ज्योतिषियों ने बहुत से वेध किये और उनके आँकड़ों का विश्लेषण किया। यह सारी इमारत एक विशाल उद्यान के भीतर थी। उलुगबेग अपना बहुत सा समय यहाँ बिताता था।

व्यत्किन् ने अपनी खुदाई में उलगबेग के ज्योतिष-यंत्रों के कुछ अवशेष पाये और उसे पादयंत्र बतलाया। कारीनियाजोफ़ का कहना है, कि वह पाद-यंत्र नहीं था, बल्कि एक नया यंत्र था, जिसे उस समय फखरी-षष्ठांश कहा जाता था। इस बात से उलुगबेग की गणित-प्रक्रिया में एक नई बात मालूम हुई। पहिले समझा जाता था, कि मुख्य यंत्र पाद-यंत्र था, किन्तु पाद-यंत्र से वेधशाला के साधारण ढाँचे का सम्बन्ध नहीं जोड़ा जा सकता था। अब हम समझ सकते हैं, कि कैसे उलुगबेग ने उत्तरी खगोल के तारों का अध्ययन किया। इसके लिये उसने एक यंत्र बनवाया, जोकि समरकन्द की मध्याह्नरेखा पर अवस्थित था और उसका मुँह दक्षिण की ओर था। कारीनियाजोफ ने बतलाया कि उलुगबेग इस यंत्र को सूर्य के वेध के लिए इस्तेमाल करता था, इसीलिए इसका मुँह दक्षिण की ओर था। इस विशाल यंत्र के निर्माण से मालूम होता है, कि उलुगबेग ने अपने अनुसन्धान को कितने ध्यानपूर्वक संगठित किया था—उलुगबेग के षष्ठांश-यंत्र का आकार बहुत विशाल था, उसकी व्याका व्यास ४२ मीतर (प्रायः १०० हाथ) था। इसी विशाल षष्ठांश-यंत्र की सहायता से ज्योतिष-सम्बन्धी वेध के बहुत ही शुद्ध आँकड़े सूर्य की गति से प्राप्त किये गये थे। उस समय इतना बड़ा षष्ठांश-यंत्र कहीं नहीं था। उसने तारों के वेध के लिए दूसरे नल-यंत्र इस्तेमाल किये और वह वेध उतने शुद्ध नहीं निकले जितने की सूर्य सम्बन्धी वेध के।

इसी सम्मेलन में प्रो० सेम्योनोफ़ ने शरफुद्दीन यज्दी नामक मध्य-एसिया के इतिहासकार की पुस्तक 'ज़फ़र-नामा' की हस्त-लिखित प्रति को प्रदर्शित किया। इस पुस्तक में तैमूर के युद्धों के कई छोटे-छोटे सुन्दर चित्र हैं। ये चित्र ईरानी चित्रों की अपेक्षा अधिक वस्तुवादी दृष्टि से बनाये गये

है। सम्मेलन में मध्य एसिया के उन विचारकों और कवियों की जीवनियों और कृतियों के बारे में भी निबन्ध पढ़े गये, जिनका समरकन्द से सम्बन्ध था। कितने ही निबन्धों में समरकन्द और आस-पास के इलाके की सांस्कृतिक और आर्थिक उन्नति के बारे में भी विचार प्रकट किये गये।

१९४६ के मध्य में उज्बेक प्रजा-तन्त्र ने पुरानी इमारतों और कला की महत्वपूर्ण चीजों के पुनः निर्माण के लिए एक विभाग कायम किया। इस विभाग ने समरकन्द में एक कारखाना खोला है, जिसमें उन नीली, पीली तथा दूसरे रंग की ईंटों-टाइलों और दूसरी चीजों को तैयार किया जा रहा है, जिन्हें प्राचीन-काल में उज्बेकिस्तान के शिल्पी इमारतों को अलंकृत करने के लिये बनाया करते थे।

८. नहरें—

१९४६ में उज्बेकिस्तान के ७,००० कल-खोजी किसानों ने कत्ता-कुरगन की जल-निधि को बनाना शुरू किया। यह जल-निधि ६० करोड़ घनमीतर जल रखनेवाली है। उसी साल उन्होंने १० लाख घनमीतर से अधिक मिट्टी निकालकर बाँध पर रखी। जरफ्शाँ उपत्यका की कपास की खेती के लिए इस जल-निधि से पर्याप्त जल मिलेगा और प्रजा-तन्त्र के ⅓ खेत इससे लाभ उठायेंगे। इससे उनकी उपज दुगुनी हो जायगी।

अंग्रेन् नदी सिर-दरिया की एक शाखा है और ताशकन्द से नाति-दूर बहती है। भूगर्भ-शास्त्रियों ने पता लगाया, कि उसकी धार में कोयले की खान है और कोयला बहुत भारी परिमाण में ही नहीं है, बल्कि उसकी तह भी बहुत मोटी है। इतनी कोयला-सम्पत्ति को बेकार रखने के लिये नदी को इजाजत नहीं दी जा सकती थी। १९४६ के उत्तरार्ध में ७ हजार आदमियों ने एक विशाल नहर खोदनी शुरू की, जिसमें कि अंग्रेन नदी को पहली जगह से हटाकर दूसरे रास्ते से बहाया जाय। उसी साल की ७वीं नवम्बर तक

अर्थात् कोयला-खान से निकाले कोयले की पहिली ट्रेन भी ताशकन्द पहुँ-चाई गई।

जुलाई १९४७ में सोवियत् मध्य-एसिया के प्रजातन्त्रों के सामने एक बड़ी समस्या आ गई। जब मौसिम के भविष्य-कथन विभाग ने घोषणा की कि पहाड़ों में जिस मन्द गति से बरफ पिघल रही है, उससे सिरदरिया की धार कम हो जायगी। सिरदरिया किरगिज, ताजिक, उज्बेक और कजाक चार प्रजातन्त्रों के बीच से गुजरती है। इसलिए इस नई समस्या के हल के लिए चारों प्रजातन्त्रों के प्रतिनिधि बुलाये गये। चारों प्रजातन्त्रों के कपास के खेत अधिकांश सिरदरिया के जल से सींचे जाते हैं और जिसके लिये पानी का खर्च बहुत है। उस साल के जून के एक मास में नदी से प्रति सेकण्ड हजार घनमीतर जल लिया जाता था। इस पानी को किस तरह चारों प्रजातन्त्रों के खेतों में बाँटा जाय, इसके बारे में चारों प्रजातन्त्र के मन्त्रियों की ३ महीना पहले बैठक हुई थी और मात्रा को निश्चय कर दिया गया था। बीच में पानी की कमी से जो समस्या उत्पन्न हुई, उस पर विचार करने के लिए चारों प्रजातन्त्रों के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त सोवियत-संघ के कृषि-विभाग का भी एक प्रतिनिधि आया। प्रतिनिधि ने जल के बँटवारे के बारे में कहा था—"जिसकी आवश्यकता सबसे अधिक है, उसे जल भी सबसे अधिक मिलना चाहिये, यही नियम है इस प्रकार के प्रश्नों के हल करने का। इसमें इस बात का कोई ख्याल नहीं किया जा सकता है कि पानी की कुंजी किसके हाथ में है।" प्रतिनिधि ने यह भी कहा कि सिरदरिया के जल-तल के नीचे गिरने से फसल को खतरे का डर नहीं है, तो भी जो जल मौजूद है, उसका ठीक तरह से वितरण होना चाहिये। इसके लिये मन्त्री लोग प्रत्येक प्रजातन्त्र के सींचे क्षेत्रों के आँकड़ों को मिलाकर फिर से जल का वितरण करेंगे। चारों प्रजातन्त्रों के मन्त्रियों के अतिरिक्त पाँचवाँ अखिल सोवियत प्रतिनिधि प्रमुख के तौर पर गया था। यह पूछने पर, कि यदि चारों प्रजातन्त्रों का आपस

में मतभेद रहा, तो क्या अपने विशेष अधिकार का इस्तेमाल करके उन्हें किसी निर्णय को मानने के लिये मजबूर करेंगे ? प्रतिनिधि ने जवाब दिया—

"सिद्धान्त के तौर पर हाँ, ऐसा किया जा सकता है। लेकिन मैंने कभी ऐसा देखा नहीं कि प्रजातन्त्रों के मन्त्रियों के जल-वितरण-सम्बन्धी सम्मेलन में कभी इस तरह का विरोध हुआ हो। ऐसे सम्मेलन हर साल वसन्त में हुआ करते हैं।

"मन्त्रियों का इस तरह का सम्मेलन सिर्फ सिरदरिया के बारे में ही नहीं होता, बल्कि मध्य-एसिया की दूसरी बड़ी नदी आमूदरिया के बारे में भी ताजिक-उज्बेक तुर्कमान मन्त्रियों के इस तरह के सम्मेलन हर साल हुआ करते हैं। नहरों की वृद्धि के साथ मन्त्रियों का काम भी बढ़ गया है।"

आजकाल उज्बेकिस्तान ६ नदियों में किरगिजिस्तान का और ३ में कजाकस्तान का भागीदार है। किरगिजिस्तान और ताजिकिस्तान ३ नदियों में भागीदार हैं। प्रजातन्त्र मिलकर इन नदियों के पानी का बँटवारा ही नहीं करते बल्कि मिलकर नहरों का प्रबन्ध करते हैं। मन्त्रियों के वार्षिक सम्मेलन में उन्हें पता लग जाता है, कि कस प्रजातन्त्र के पास कितना खेत सींचने को है, यानी कितना खेत बोया गया है और उसके लिये प्रतिमास उसे कितने जल की आवश्यकता होगी। यह मासिक खर्च भी फसल और समय के मुताबिक घटता बढ़ता रहता है। यदि नदी में पानी की कमी मालूम हुई, तो उसका व्यय प्रति-सेकेण्ड घनमीतर के हिसाब से किया जाता है। उदाहरणार्थ फर्गाना नहर से जून में उज्बेकिस्तान को प्रति-सेकेण्ड ७८ घनमीतर जल मिला और ताजिकिस्तान को १२ घनमीतर, क्योंकि इसी के अनुसार ताजिक और उज्बेक के खेत इन नहरों पर पड़ते हैं। नदी और नहरों के प्रवाह पर यंत्र द्वारा नियंत्रण है, जिससे कोई समझौते के विरुद्ध जल का इस्तेमाल नहीं कर सकता।

समाजवादी ढंग ने जिस तरह से इस जल की समस्या को हल किया वह क्रान्ति से पहले संभव न था। उस समय जल जातियों के भीतर लड़ाई का एक मुख्य कारण था। मध्य-एसिया क्या हमारे भारत में भी यह बात रही है। ईसा-पूर्व पाँचवीं सदी में कभी-कभी ममग्र नदी के पानी के लिए कपिल-वस्तु के शाक्यों और देवदह के कोलियों के बीच कितनी ही बड़ी खूनी लड़ाइयाँ होती थीं। दामोदर नहर-योजना के बारे में कितने ही बिहारी एसेम्बली मेम्बरों ने सवाल उठाया, कि जब उससे अधिक लाभ बंगाल को होता है, तो हम क्यों उसके खर्च को अपने ऊपर उठायें। खैर, इस तरह की संकीर्ण-हृदयता आगे चल नहीं सकती। लेकिन पंजाब में नदियों के पानी के लिए पाकिस्तान और हिन्दुस्तान में विवाद की जरूर संभावना है। सोवियत् के सभी प्रजातन्त्र निजी स्वार्थ से सारे राष्ट्र के स्वार्थ को ऊपर समझते हैं, इसलिये वहाँ ऐसे लड़ाई झगड़े नहीं हो सकते। पहिले मध्य-एसिया में कितनी ही बार ऐसी घटनाएँ घटीं, जब कि नदी के ऊपरवालों ने पानी को रोककर नीचेवालों को विपदग्रस्त कर दिया। समरकन्दवालों के पास अब भी एक जगह है, जहाँ से जरफ़शाँ को निकालकर सिरदरिया में मिलाया जा सकता है और उस समय समरकन्द से नीचे बुखारा और आगे तक का हरा-भरा देश चन्द ही वर्षों में रेगिस्तान में परिणत हो जायेगा।

इस वक्त एक बड़ी योजना वक्षु (आमूदरिया) को कस्पियन समुद्र में गिराने की चल रही है। किसी समय और ऐतिहासिक काल में भी वक्षु कस्पियन में गिरती थी। अब भी उसकी सूखी धार के चिन्ह बहुत दूर तक मिलते हैं। यदि सारी वक्षु को इस धार में डाल दिया जाय, तो ख्वारेज्म का हरा-भरा देश चौपट हो जायगा, लेकिन सोवियत् सरकार की योजना में वक्षु की धारा के अंशतः ही इधर फेरने का विचार है, जिसमें ख्वारेज्म की समृद्धि को धक्का न लगे। जब वक्षु का सम्बन्ध कास्पियन से हो जायगा, तो बम्बई से चला स्टीमर अरब समुद्र, लाल-सागर, भूमध्य-सागर, बास्फोरस होते कालासागर

और अर्जोफ तक पहुँच जायगा और फिर वहाँ से दोन बोल्गा नहरें द्वारा बोल्गा में जा कास्पियन के भीतर पहुँच जायगा। कास्पियन से वह वक्षु की इस नई धारा से होते ऊपर की ओर बढ़ते अफगानिस्तान और ताजि किस्तान की सीमा पर उस जगह पहुँच जायेगा, जहाँ से काश्मीर की सीमा डेढ़-दो सौ मील से अधिक दूर नहीं है।

क्रान्ति से पहिले नहर का पानी जमींदारों के आमदनी का एक और जरिया था। वह उसे बड़े दामों पर किसान को बेचते थे। किसान जमींदारों या अमीर की नहरों से छोटी छोटी नालियाँ खोदकर अपने खेतों में ले जाते थे। यह नालियाँ और नहरें भी इस तरह बेकायदा बनाई जाती थीं, जिससे बहुत सा पानी हवा में उड़ जाता था या धरती में सोख लिया जाता था। सोवियत क्रान्ति ने जल को सारी जाति की सम्पत्ति बना दिया। नहरें नये ढंग से इंजीनियरों के तत्वावधान में बनाई गईं और जगह जगह यंत्र स्थापित किये गये। इस नये ढंग और नहरों के उपयोग के सुफल ने किसानों में नहरें बनाने के लिये जोश भर दिया। फर्गाना की बड़ी नहर जो ४१५ किलो-मीटर लम्बी और सिरदरिया से निकली है, पहिली बड़ी नहर है, जिस को ताजिक और उज्बेक किसानों ने मिलकर तैयार किया। १९३७ तक ५० करोड़ रूबल नहरों पर खर्च किये जा चुके थे और २० लाख हेक्तर जोते खेतों में आधे की सिंचाई का प्रबन्ध हो चुका था। १९४५ तक ४ लाख २० हजार हेक्तर और सींचे खेत हो गये। फ़र्गाना नहर युद्ध के समय बनी। इसमें २० हजार कलखोजी किसनों ने स्वेच्छापूर्वक काम किया। काम क्या किया, इस नहर को बनाने के लिये उन्होंने ही जोर दिया और कहा कि सरकार हमें इंजीनियर और टेकनिकल मदद दे, मिहनत हम करेंगे। सैकड़ो कलखोजों के किसान अपने तम्बू-शामियाने और खाने-पीने के सामान के साथ वहाँ पहुँचे थे और होड़ बाँधकर काम कर रहे थे। उन्होंने निश्चित समय से पहले काम को खतम किया। फर्गाना की नहर उस प्रदेश में निकाली जा रही थी, जिस पर से होकर

पुराना रेशम-पथ चीन से यूरोप की ओर जाता था और वहाँ की खुदाई में उम्मीद थी, कि कितनी ही पुरातत्व के महत्व की चीजें निकलेंगी। सोवियत् सरकार उस वक्त जर्मनी से जन्म मरण की लड़ाई लड़ रही थी, लेकिन तब भी उसका ध्यान इस ओर गया। कितने ही पुरातत्वज्ञ नहर की देख भाल के लिए नियुक्त किये गये। उज्बेक, ताजिक और किर्गिज भाषाओं में हेण्ड-बिलें बाँट कर किसानों को ताकीद की गई, कि यहाँ कितनी ही ऐतिहासिक-महत्व की चीजें निकलेंगी, कुदाल चलाते वक्त इसका ध्यान रखें और निकलते ही उन्हें सुरक्षित जगह पर पहुँचा दें। इसके लिए पुरातत्व विभाग ने २ दर्जन से अधिक लारियाँ नियुक्त की थीं। इस नहर से सूखी-प्यासी भूमि को पानी मिल जाने और वहाँ खेत लहलहाने लगे। इसी तरह यहाँ से इतनी अधिक पुरातत्व सामग्री मिली, कि जो एक म्यूजियम के लिए काफ़ी है।

१६४५ में उत्तरी ताशकन्द नहर तैयार हुई, जिससे सवा लाख एकड़ जमीन की सिंचाई होने लगी।

६ उद्योग-धन्धा—

(१) खाद का कारखाना—फ़र्गाना उपत्यका में खोकन्द में यह उज्बेकिस्तान का प्रथम खनिज-खाद का कारखाना लड़ाई के बाद बनाया गया। अगस्त १६४६ में उसने काम शुरू किया और प्रजातन्त्र के कपास पैदा करनेवाले कल-खोजों और सोव-खोजों को खाद मिलने लगी। इसके पहिले उन्हें क़ज़ाकस्तान और दूसरी जगहों से खाद मँगानी पड़ती थी। उज्बेकिस्तान-राज-योजना-कमीशन के भारी उद्योग विभाग के प्रधान अलकसान्द्र वासिलि-निस्की ने इस बारे में बतलाते हुए कहा "प्रजातन्त्र ने वर्तमान पंचवार्षिक योजना के अनुसार रसायनिक उद्योग के बढ़ाने का एक प्रोग्राम बनाया है। अगले चन्द वर्षों में रसायनिक उद्योग का मुख्य लक्ष्य है अपने कपास के खेतों को खाद प्रदान करना। खोकन्द सुपरफोस्फेट कारखाने—जो कि सबसे बड़े रसायनिक कारखानों में एक है—के बाद उच-कुर्गान का नाइट्रोजन कारखाना

फर्गाना-उपत्यका में बनाया जानेवाला है। इस कारखाने को बिजली देने के लिए नरिन नदी पर एक बहुत बड़ा पन-बिजली स्टेशन तैयार किया जाने वाला है। चिरचिक बिजली-रसायनिक-कारखाने को भी बहुत बढाया जा रहा है, जिससे वह नाइट्रोजन खाद की उपज को दूना कर सकेगा और इस तरह मध्य एसिया की इस तरह की बढ़ती हुई माँग को पूरा कर सकेगा। खोकन्द के कारखाने के अतिरिक्त एक दूसरा सुपर-फोस्फेट कारखाना वर्तमान पंच वार्षिक योजना में ही समरकन्द में तैयार होगा। यह मुख्यतः जरफशॉ-उपत्यका के कपास के खेतों और कल-खोजों की माँग को पूरा करेगा।" रसायनिक उद्योग धन्धे की एक शाखा और बढ़ाई जा रही है, वह है कपास से निकली बेकार चीजों को काम में लाकर उनसे अलकोहल (शराब) बनाना। वर्तमान पंचवार्षिक योजना में कितने ही काँच के कारखाने बन रहे हैं। जिनमें पहला कारखाना तो १९४६ में बनकर काँच तैयार भी करने लगा है। यह अधिकतर फलों को सुरक्षित रखने के लिये भिन्न-भिन्न तरह की बोतलें बना रहा है। खिड़कियों के लिए शीशे बनाने वाला कारखाना भी जल्द ही चालू होने जा रहा है।

(२) लोह-फौलाद—

१९४६ के मध्य में उज्बेकिस्तान के प्रथम लोह-फौलाद के कारखाने का निर्माण पूरा हो गया, जब कि उसके रोलिंग-विभाग ने काम करना शुरू किया। इस कारखाने का निर्माण १९४२ में युद्ध के समय शुरू हुआ था। यह राजधानी ताशकन्द से १९० किलोमीतर पर अवस्थित है। उस वक्त जब कि उक्रइन के लोह फौलाद कारखानें जर्मनों के आने से बेकार हो गये थे, इस बात की बड़ी जरूरत थी कि और जगहों पर भी ऐसे कारखाने खोले जायें। १९४२ में रूसी इंजीनियरों और कमकरों की सहायता से हजारों उज्बेकों ने बड़े उत्साह के साथ कारखाने को बनाना शुरू किया और १९४४ के आरम्भ में ही पहिला खुला भट्ठा काम करने लगा। कुछ महीने बाद दूसरे

भट्ठों में भी काम चालू हुआ। इसके साथ ही साथ ४,००० किलोवाट ताप और शक्ति का कारखाना भी बनकर तैयार हुआ। रोलिंग मिल पर खास तौर से प्रयत्न करना पड़ा। यह मिल ११,००० वर्गमीतर में बनाई गई है।

× × ×

(३) गैस-पाइप—

जून, १९४७ में उज्बेकिस्तान में पहली गैस-पाइप लाइन डाली गई। यह अन्दिजान तैल-क्षेत्र से लेनिन्स्क नगर तक गई है।

(४) कपड़ा-कारखाना—

ताशकन्द मध्य-एसिया का कपड़ा-केन्द्र है। जारशाही काल में ही यहाँ पहली कपड़े की मिल बनी थी, लेकिन उसमें आज के ताशकन्द के कपड़ा-उद्योग से तुलना नहीं की जा सकती। १९४६ में ताशकन्द में युद्ध के बाद पहिली कपड़ा-प्रदर्शनी पूर्वी कपड़ों की गई। इस प्रदर्शनी में ५०० प्रकार के बने कपड़े दिखलाये गये, जिनमें रेशमी, सूती और ऊनी सभी तरह के कपड़े थे। सिर्फ उज्बेकिस्तान की मिलों के ही कपड़े नहीं रखे गये थे, बल्कि इसमें तुर्कमानिस्तान, ताजिकिस्तान और किर्गिजिस्तान की मिलों ने भी भाग लिया था। साधारण यूरोपीय ढंग के कपड़ों के अतिरिक्त बहुत से ऐसे कपड़ों के नमूने भी वहाँ रखे गये थे, जिन्हें मध्य-एसिया में बहुत पसंद किया जाता है। खासकर भिन्न-भिन्न रेशम के रंगों और छींटों के कपड़े बहुत अधिक आकर्षक थे। तुर्कमानिस्तान रेशम पैदा करने का एक बहुत बड़ा प्रदेश है। उसने "कतेनी" नामक एक रेशमी कपड़ा भेजा था, जिसकी मध्य-एसिया में बहुत माँग है और सोवियत्-संघ के यूरोपीय भाग में उसे कोई जानता भी नहीं। तुर्कमानिस्तान के रेशमी कपड़ा-मिलों में ३ कपड़े इसी तरह के बनते हैं। दूसरे कपड़े वहाँ से जो आये थे, उनमें अपने रंगों के लिए प्रसिद्ध "सुअसनी," "अलाचा, और "चेपेलाउ" खास महत्व रखते हैं। समरकन्द की रेशम-

वालों ने ३४ प्रकार के कपड़े भेजे थे और ताजिक रेशम-मिलों ने ६५ प्रकार के। सबसे अधिक कपड़े ताशकन्द सूती कपड़ा मिल के थे। ताशकन्द मिल १३ साल पहले शुरू की गई थी। आज उसमें दो कताई, दो बुनाई, एक छपाई और एक सूत के विभाग हैं। १९४६ में उसने अपने रंगीन और विविध प्रकार के कपड़ों की उपज दुगुनी कर दी। इस प्रदर्शनी को देखने के लिए सोवियत्-संघ के दूसरे भाग के लोग आये थे।

× × ×

क्रान्ति से पहले मालूम ही है, उज्बेकिस्तान उद्योग-धन्धे का देश नहीं था। अब उसकी ७५% आय उद्योग से है। पहिले कपास-ओटाई की मिलें थीं ... छोटी छोटी मिलों का काम था कपास को ओटकर गाँठ बाँध रूस भेज देना। लेकिन अब उज्बेकिस्तान अपने कपास को पैदाकर गाँठ बाँध देने भर से छुट्टी नहीं ले लेता, बल्कि उससे हर तरह के कपड़े अपने मुल्क की मिलों में बनाता है। कपड़ा मिल का उद्योग उज्बेकिस्तान का एक प्रधान उद्योग है। फिर कपड़े में सिर्फ सूती कपड़े ही नहीं, रेशमी कपड़े के भी यहाँ कई कारखाने हैं। इनके अलावा अंगूरी शराब, बिनौले के तेल तथा मेवा-फल को तैयार कर टिन में बन्द करने के भी बहुत से कारखाने हैं।

सिर्फ हलका उद्योग ही नहीं, बल्कि पिछले २० वर्षों में उज्बेकिस्तान में भारी उद्योग-धन्धा भी खड़ा किया गया है। आज वहाँ लोहा, कोयला, रासायनिक और तेल के कारखाने बहुत से हैं।

उज्बेकिस्तान की आधी से अधिक आय उद्योग धन्धे से है। युद्ध के समय भारी उद्योग-धन्धे की बड़ी तेजी से वृद्धि हुई और उज्बेकिस्तान में लाल सेना के गोला बारूद और हथियार तैयार करने का कारखाने बन गये। युद्ध-सम्बन्धी उद्योग के लिये आवश्यक दुर्लभ धातुएँ खानों से निकाली जाने लगीं, फौलाद पैदा होने लगा और पेट्रोल की उपज दूनी हो गई। साधारण मशीन बनाने के कारखाने बढ़ाये गये। यही नहीं, बल्कि मशीन बनाने के

सबसे बारीक कारखानें स्थापित किये गये, जो कि आज मशीन टूल, और बिजली के हर तरह के साधन-यंत्र आदि बनाते हैं। युद्ध से पहिले जहाँ सारे उद्योग की उपज में १४ % भारी उद्योग का भाग था, वह अब यहाँ ५० % हो गया है।

उज्बेकिस्तान में लोह-फौलाद के अतिरिक्त मोलिब्देनम्, सुर्मा, पारा और दूसरी दुर्लभ धातुओं के कारखाने काम कर रहे हैं और तेजी से आगे बढ़ रहे हैं।

(९) बिजली—

ताशकन्द के पास से बहती चिरचिक नदी ने ताशकन्द के लिए बिजली प्रदान की, किन्तु ताशकन्द और उसके आस-पास बढ़ते कारखानों के लिए प्रचुर परिमाण में बिजली की आवश्यकता थी, इसीलिए और भी कितने ही पन-बिजली स्टेशन बनाये गये। फरहाद पन-बिजली स्टेशन बहुत बड़ा है और अब तो और कई बड़े-बड़े स्टेशन तैयार हो गये हैं।

अल्मालिक तांबा-खान ताशकन्द के निकट है। यहाँ बिजली के जरिये तांबा पिघलाया जाता है। यह सोवियत् के सबसे बड़े तीन तांबा पिघालक कारखानों में से अन्यतम है।

(१०) पार्लियामेंट के मेम्बर

उज्बेक सोवियत् समाजवादी प्रजतंत्र के शासन की सबसे बड़ी संस्था प्रजातंत्र की महा-सोवियत् या पार्लियामेन्ट है, जिसका चुनाव १८ वर्ष की उम्र से ऊपर के स्त्री-पुरुष वोटरों द्वारा होता है। सारा प्रजातंत्र कई जिलों में बँटा है और हर जिला कई परगनों या तहसीलों (रायोन) में विभक्त है। रायोन के नीचे फिर गाँव आते हैं। गाँव के प्रबन्ध के लिए सार्व मता-धिकार द्वारा ग्राम-सोवियत् चुनी जाती है। यही ग्राम-सोवियत् गाँव का सारा इन्तिजाम करती है। इसी से तहसील और जिला-सोवियत्का भी निर्माण होता है।

५२. उज्बेकिस्तान उज्बेक परिवार (१,९४ "सोवियत्-संघ-मित्र") (पृष्ठ १२८)

५४. उज्बेकिस्तान—कलाकार महिलायें (पृष्ठ ६४)

१६४६ में सोवियत्-संघ की पार्लियामेन्ट का चुनाव हुआ। सोवियत्-विधान के अनुसार संघ-सोवियत् के लिए ३ लाख पर १ मेम्बर और जातीय सोवियत् के लिए प्रतिसंघसोवियत् २५ और प्रति स्वायत्त-प्रजातंत्र ११ मेम्बर भेजना होता है। उज्बेक प्रजातंत्र को अपनी जनसंख्या के अनुसार २० प्रतिनिधि संघ सोवियत् की महा-सोवियत् में भेजना था २५ प्रतिनिधि उज्बेक जाति की तरफ से और ११ प्रतिनिधि कराकल्पक स्वायत्त-प्रजातंत्र की ओर से जातीय सोवियत में भी भेजना था। यानी सब मिलाकर ५६ प्रतिनिधि भेजने थे। मेम्बरों में अन्य वर्गों की अपेक्षा किसान अधिक चुने गए। उनमें से १२ तो कल-ख़ोजों के प्रधान, ब्रिगेड या टोली के नेता किसान या कमकर थे। किसानों में भी अधिकतर वही थे जो कि कपास की खेती करते थे। ये बारहों किसान प्रजातंत्र के प्रसिद्ध किसान हैं, कृषि-सम्बन्धी सफलताओं के लिये जिनका नाम और बखान अनेक बार समाचार-पत्रों में निकल चुका था। ताशिम बाय मिर्जाएफ़, अन्दिजान क्षेत्र से चुना गया। वह वहाँ की एक पंचायती खेती का प्रधान है। उसने तीन साल के अन्दर कपास की उपज को प्रति-हेक्तर (एक हेक्टर २.४७ एकड़ के बराबर) १२५० से ४२०० किलोग्राम बढ़ा दिया। ताशिम बाय ५० साल का उज्बेक किसान है। जारशाही की बहुत सी बातें उसे याद हैं। वह अच्छी तरह जानता है, कि उस वक्त रेल के डिब्बे में एसियाइयों के लिए तीसरे दर्जे का डब्बा होता था और वह रूसी लोगों के डब्बे में नहीं बैठ सकते थे। ताशिम बाय एक मामूली मजूर था, जब कि वह कल्खोज में सम्मिलित हुआ। उसे मीराब (पानी का अधिकारी) चुना गया। धीरे धीरे वह कल्खोज के 'प्रधान' पद तक पहुँच गया। चुने गए मेम्बरों में कितनी ही किसान-औरतें भी हैं। उनमें भी कितनी ही प्रधान और ब्रिगेड या टोली की नेत्रियाँ हैं। सफलताओं के कारण उनकी चर्चा बराबर अखबारों में होती रही है। इनमें से एक है ताजीखान हुसेनोवा, २६ साल की लड़की। कृषि-स्कूल की परीक्षा

समाप्त करके वह खेती के कामों में लग गई और युद्ध के पहिले ही उसे 'श्रम-लालध्वज' (पदक) मिला। कपास की फसल उपजाने में रेकर्ड तोड़ने के कारण अखिल-सोवियत-कृषि-प्रदर्शिनी के समय हुसेनोवा को स्वर्ण का महापदक मिला। पिछले साल उसने पहिले से भी अधिक उपज बढ़ाकर औसतन प्रति-हेक्टर ११·८ टन कपास पैदा किया। इसके लिये उसे 'लेनिन पदक' प्राप्त हुआ। कितने ऐसे भी किसान पार्लियामेन्ट के मेम्बर चुने गए हैं, जिनका आजकल खेती के काम से सीधा सम्बन्ध नहीं है। वह प्रजातन्त्र की शासन-संस्थाओं में पहिले चुने गए और आगे बढ़ते-बढ़ते प्रभाव-शाली व्यक्ति बन गए। इनमें कितने ही उज्बेक और कराकल्पक प्रजातंत्र के मंत्री या प्रजातंत्र-सोवियत या जिला-सोवियत के प्रमुख या कम्युनिस्ट संगठनों के नेता हैं। उदाहरण अब्दु रज़ाक मौलानोफ़—जो कि आजकल ताशकन्द जिला पार्टी का प्रधान-मंत्री है पहिले मामूली चरवाहा था। इसी तरह बुजुर्ग उस्मान खोजायेफ़ एक मामूली किसान था और आज-कल फर्गाना जिला सोवियत् का प्रधान है।

सारा ईशान तुरायेवा उज्बेकिस्तान की देदीप्यमान नाट्यतारिका पार्लियामेन्ट की मेम्बर हैं। वह एक किसान लड़की है। अपने गाँव के लोगों ने सारा का नाम मेम्बरी के लिए पेश किया। पति की मृत्यु के बाद सारा की माँ ने गरीबी के कारण मजबूर हो अपने तीन बच्चे पड़ोसियों को दे डाले। थोड़े समय बाद माँ मर गई। सारा जब नौ साल की हुई तो उसके धर्म-पिता ने एक धनी बूढ़े के हाथ बेचारी को बेच दिया। बूढ़े की पहले ही चार बीबियाँ थीं। क्रान्ति के बाद सारा वहाँ से भाग निकली और बाल-भवन में उसे पनाह मिली। यहीं उसका ध्यान अभिनय की ओर गया। जब वह चौदह वर्ष की थी, तो उसे अभिनय की शिक्षा के लिये मास्को भेज दिया गया। वहाँ बख्तनगोफ़ नाट्यशाला के प्रख्यात कलाकारों की देख रेख में उसे अभिनय की ट्रेनिंग मिली। सारा उन कतिपय उज्बेक नारियों में है, जिन्होंने रूढ़ि

को तोड़कर अभिनय को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। उस समय ऐसा करना खतरे की बात थी। सारा की एक अभिनेत्री रावी को पति ने मार डाला था। एक और उज्बेक अभिनेत्री गोली की शिकार हुई। तीसरी उज्बेक लड़की इसी अपराध में पथराव करके मार डाली गई! सारा की धर्म माँ भी परेशान होकर सोच रही थी—'अब समूचा शहर उसे देखेगा।' उज्बेकिस्तान में नवजीवन का यह अरुणोदय-काल था। स्त्री का अभिनयमंच पर जाने का मतलब था, धर्म और समाज से लोहा लेना। सारा और उसके साथियों ने न केवल शहरों में ही अभिनय किया, बल्कि गाँव की जगहों और मेलों में भी उनके उदाहरण ने हजारों उज्बेक नारियों को उत्साहित किया। वह पर्दा छोड़ स्कूलों में दाखिल हुईं, महिला-क्लबों में शामिल हुईं। उन्होंने सार्वजनिक काम में भाग लेना शुरू किया।

सारा के जीवन का द्वितीय परिच्छेद तब आरंभ हुआ, जब प्रजातंत्र में नये जीवन ने अपनी नींव मजबूत कर ली। अब सारा और उसके साथी ओस्त्रोव्स्की, शेक्सपीयर, लाक-दवेगा आदि रूसी और पश्चिम-युरोपीय नाटककारों की कृतियों को रंग-मंच पर लाकर लोगों को यूरोपीय संस्कृति से परिचित कराने लगे। जब वह ताशकन्द में ओफेलिया का पार्ट ले रही थी, तो २२ दिनों तक नाट्यशाला के आस-पास निकट न पानेवाले हजारों दर्शनार्थी घेरा डाले खड़े रहते थे।

महापार्लियामेन्ट के नये उज्बेक-प्रतिनिधियों में कितने ही मजदूर हैं। तीन मशहूर स्तखानोवियों में एक इन्जिन-ड्राइवर, एक जुलाहा और एक रेशम-मिल का मजदूर है। उनमें पिछली दो मजदूर-औरतें हैं। तीनों तरुण हैं और उनका नाम समूचे प्रजातंत्र में प्रसिद्ध है। उन्होंने अपने काम में नई हिकमतें निकालीं, जिससे काम ज्यादा होने लगा। मिकाइल नूर-महम्मदोफ ने इंजिन-ड्राइवरों में अपने काम से ऐसी प्रेरणा पैदा की, जिससे ट्रेनों की गति

और भार की लदाई अधिक होने लगी। उज्बेक महामंत्री अब्दुज्जब्बार अब्दुर्रहमानोफ १५ साल पहिले फर्गाना की कपड़ा-मिल में काम करता था। एक दूसरा मंत्री तम्बाकू के कारखाने में मजदूर था। उज्बेक पार्लियामेन्ट का एक प्रमुख सदस्य रेलवे का एक कर्मी था। खोकन्द जिला-सोवियत् का प्रधान पहले कोयला झोंकने का काम करता था।

अखिल सोवियत् पार्लियामेन्ट के मेम्बरों में कितने ही उज्बेक विद्वत्-वर्ग के प्रतिनिधि हैं। दो तो साइन्स-वेत्ता हैं—एक उज्बेक अकदमी का प्रेसिडेन्ट और दूसरा मेडिकल कालेज का प्रोफेसर। और प्रतिनिधियों में से दो इंजिनियर एक डाक्टर, एक अनुसन्धानशाला का डाइरेक्टर, एक लेखक-संघ का प्रधान और एक किसी बड़े खोज-खोज का डाइरेक्टर है। यह सारे साधारण मजदूरों, किसानों या शिल्पियों के पुत्र-पुत्रियाँ हैं, जिनकी शिक्षा सोवियत्-युग में हुई है। सोवियत्-शासन से पहले सारे रूस के तीन करोड़ मुसलमानों में सिर्फ १९० आदमी किसी प्रकार की उच्च शिक्षा पाये हुए थे और वह भी अमीरों, खानों तथा बायों की औलाद थे। आज तो सिर्फ ताशकन्द युनिवर्सिटी में ही १२,००० विद्यार्थी पढ़ते हैं।

११ स्वास्थ्य—

१९१३ में अस्पतालों में रोगियों के लिए ७३३ चारपाइयाँ थीं, जो सिर्फ रूसियों के लिए ही थीं। १९३३ में उनकी संख्या ९,७८८ हो गई। जारशाही के जमाने में शिशु-शालाओं और बालोद्यानों का नाम भी न था। १९२८ में इनकी तादाद ९३६ थी और १९३३ में ८१,५८६ हो गई।'

वर्त्तमान पंच-वार्षिक-योजना के अनुसार मलेरिया के लिए २२ नये अस्पताल २०० चिकित्सा-केन्द्र खोले जायेंगे। पहले ही से मौजूद पाँच साइन्स अनुसंधान-प्रतिष्ठानों के अतिरिक्त भिन्न-भिन्न बीमारियों और शिशुमती माताओं के लिए कितने ही अन्य प्रतिष्ठान खोले जायेंगे। बालोद्यानों की संख्या बढ़ाई जायेगी और १९५० तक कल-खोजी बालोद्यानों में पचास हजार और

शिशुओं के रखने की व्यवस्था की जायेगी। प्रजातंत्र के सभी भागों में आजकल बच्चों के सेनिटोरियम् स्थापित हैं, जिनमें नई योजना के अंत तक ५५,००० बच्चों के रहने की व्यवस्था हो जायगी। कितने ही नये सेनिटोरियम् और विश्रामागार जनता के लिए बनाये जा रहे हैं। १९४६ में ही क्रिमिया के याल्ता और काकेशस् के किस्लोवोद्स्क में उज्बेकिस्तान के अपने सैनिटोरियम् चालू थे। प्रजातंत्र के अन्दर भी अनुकूल जलवायु वाले कितने ही स्थानों में और स्थायी सेनिटोरियम्, खुल रहे हैं। १९४९ तक प्रजातंत्र के मेडिकल-कालेजों से २,००० डाक्टर और ७,००० लघु-डाक्टर निकलेंगे, जिससे चिकित्सकों की कमी पूरी हो जायगी।

सेनिटोरियम् और विश्रामागारों का प्रबन्ध सिर्फ सरकारी स्वास्थ्य-विभाग की तरफ से ही नहीं होता, बल्कि मजदूर-संघ अपनी ओर से भी प्रबन्ध करता है। प्रजातंत्रों के मजदूर-संघ अखिल-सोवियत्-मजदूर-संघ से सम्बद्ध हैं; इसलिए एक प्रजातंत्र का मजदूर संघ दूसरे प्रजातंत्र के अनुकूल स्थान में भी अपना सैनिटोरियम् स्थापित कर सकता है। १९४६ में अखिल सोवियत् मजदूर-संघ के उज्बेकिस्तान वाले सेनिटोरियम् तथा विश्रामागार प्रबन्ध-समिति के प्रमुख बरेनोफ ने उस साल के नौ महीने के बारे में बतलाया—"इन नौ महीनों में उज्बेक मजूर-संघ से सम्बद्ध २९२२२ मजूरों और आफिस-कर्म-चारियों ने अखिल-सोवियत्-मजदूर-संघ के सेनिटोरियमों और विश्रामागारों में अपनी छुट्टियाँ बिताईं। यह संख्या पिछले साल से ढाई गुनी अधिक थी। १९४६ के अन्त तक ६,००० और सदस्य विश्रामस्थानों से लाभान्वित होंगे। युद्ध के समय उज्बेक मजदूर-संघ ने अपने बहुत से सेनिटोरियम् और विश्रामागार सैनिक अस्पतालों के लिए दे दिये। लड़ाई के बाद वह फिर साधारण सदस्यों के लिए मिल गये। प्रजातंत्र की कितनी ही स्वास्थ्यप्रद जगहों में नये सैनिटोरियम् खुले हैं। उज्बेक मजदूर-संघ के पास ग्यारह सैनिटोरियम् हैं, जिनमें से कुछ स्नायु, फेफड़े आदि की बीमारियों के लिये

नियुक्त हैं। एक बहुत ही जनप्रिय सेनिटोरियम् सदा हिमाच्छादित पर्वतों के नीचे, किर्गिज पर्वत-माला में है। प्रजातंत्र के केन्द्रीय मजदूर-संघ के अतिरिक्त कितने ही सेनिटोरियम् स्थानीय मजदूर-संघों के और कितने ही प्रजातंत्र के स्वास्थ्य-विभागों की ओर से खुले हैं। आज जो इतनी संख्या सेनिटोरियमों और विश्रामागारों की देखी जाती है, उसका सोवियत्-शासन से पहले कहीं नाम भी न था। हाँ, इसकी जगह जारशाही अफसरों तथा सामन्तों के नगर के बाहर कुछ बगीचे जरूर होते थे।

ताशकन्द के पास त्यान्‌शान् के पहाड़ों से निकलकर आती चिर-चिक नदी के किनारे, एक बड़ी ही मनोहारिणी उपत्यका में एक विशाल सेनिटोरियम् अवस्थित है, जिसके अन्दर ८०० आदमियों के स्वास्थ्य तथा विश्राम-लाभ की व्यवस्था है। एक अच्छे अस्पताल के साथ भोजनशाला, विशाल क्लब-घर और मनोरंजन की अन्यान्य सामग्रियाँ मौजूद हैं। ताजी तरकारियों और मेवा आदि के लिए अपने खेत, अपने बाग अपना डेरी फार्म भी हैं। इन सेनिटोरियमों और विश्रामागारों में रहने के लिए, मजदूरों को सिर्फ तीस प्रतिशत खर्चा देना पड़ता है बाकी खर्च मजदूर-संघ के जिम्मे है। मजदूर-संघ के पास पैसा सामाजिक-बीमा और संस्थाओं तथा मेम्बरों की फीस से आता है। समरकन्द जिले के लिए भी इसी तरह कई सेनिटोरियम् और एक बहुत बड़ा विश्रामागार है, जो अंगूरों और मेवों के बागों के बीच बना है। १९४६ तक उज्बेक मजदूर-संघ के विश्रान्तिगृहों में प्रति वर्ष ७०,००० आदमियों के लिए जगह हो जायगी।

(१) म्युनिस्पलिटी के घर

वर्तमान पंच-वार्षिक योजना में वैयक्तिक बँगलों के अतिरिक्त उज्बेक प्रजातंत्र में ६,००,००० वर्गमीतर नये घर बन जायँगे। उज्बेक म्युनिस्पल-विभाग के मंत्री शाहमुरादोफ ने इस प्रसंग में कहा—'तृतीय पंचवार्षिक

योजना से ढाई गुना अधिक पैसा चतुर्थ पंचवार्षिक योजना में खर्च किया जायेगा। अधिकांश मकान ताशकन्द, समरकन्द और बुखारा केशहरों में बनेंगे। हमारे यहाँ मकान बनाने में पूर्वीय वस्तुकला और पश्चिमी आराम एवं सफाई का ध्यान रखा जाता है। चौड़ी और पक्की सड़कें, स्वच्छ विशाल सौध, यातायात के आधुनिक साधन, मैला बहाने की सिवेर की नालियाँ यह विशेषतायें हैं।" मंत्री ने फिर कहा—"उज्बेकिस्तान के नगरों का जो विकास वर्तमान पंचवार्षिक योजना में हो रहा है, उसमें उपयोगिता और सौन्दर्य दोनों ही पर लक्ष्य रखा गया है। हमारा मुख्य लक्ष्य है, कि गर्मी और बिजली सारे शहर में पहुँचाई जाय। युद्ध के समय बेगोवात और यंगीपुल जैसे कितने ही नये औद्योगिक केन्द्र तैयार हो गये। पहले के शहर बहुत बढ़ गये हैं, खास करके ताशकन्द यद्यपि साथ-ही-साथ बहुत से नये पन-बिजली-स्टेशन बने हैं, लेकिन उनकी वृद्धि जन-वृद्धि के अनुरूप नहीं हुई है, इसी लिये नई पंच-वार्षिक योजना में शहरों के उपयोग के लिए १३ नये पन बिजली-स्टेशन बनाकर चालू किये जायेंगे। इस प्रकार १९५० में शहरों की बिजली ७०% अधिक हो जायेगी।

१९४६ में उज्बेकिस्तान के नौ शहरों में जल-कल का प्रबन्ध था। जो कि पुराने रामत्र के नगरों में देखा नहीं जाता था। पंचवार्षिक योजना के पूर्ण होने तक उज्बेकिस्तान के सारे शहरों में पानी का बम्बा लग जायगा। ताशकन्द में एक और नई जल-कल तैयार हो रही है, जो प्रतिदिन डेढ़ लाख घन-मीतर पानी देगी।

उज्बेकिस्तान के नगरों में गैस का फैलाव बढ़ रहा है। अन्दिजान के कारखानों, होटलों, सार्वजनिक स्नानागारों, रसोई-घरों में ईंधन का काम वह देने लगी है। ताशकन्द के लिये कोयले से गैस बनाने का कारखाना बन रहा है। ताशकन्द में एक विशाल और कलापूर्ण प्रजातंत्र-प्रासाद-समूह बनाया जा रहा है। वहाँ की ट्राम लाइन को १० किलोमीतर और बढ़ाया जा रहा है। शहर

में बिजली से दौड़ने वाली अर्मा की व्यवस्था होने जा रही है।" शाहमुरादोफ ने अन्त में कहा—"उज्बेकिस्तान के नगर अपने बागों और नहरों के लिये सदा प्रसिद्ध रहे हैं और हम इस प्रसिद्धि को और बढ़ाने जा र हे हैं। पौधा तैयार करने के लिए, कितनी नई नर्सरियाँ बनाई जा रही हैं और पुरानी नर्सरियों की क्षमता को बढ़ाया जा रहा है। हम अपनी सारी सड़कों के किनारे वृक्ष लगाना चाहते हैं, जिसमें गर्मी में सूर्य की धूप पत्तियों से ढँक जाय।

(२) गर्म मुल्क के रोगों की चिकित्सा—

प्रोफेसर न. खोदुकिन ने ताशकन्द मेडिकल-कालेज में भाषण देते हुये कहा—"आज गिनिया कीड़ेवाले एक बीमार को भी आप नहीं पायेंगे। बीस साल पहिले उज्बेकिस्तान और मध्य-एसिया के और स्थानों में यह बीमारी आम थी, जैसा कि वह आज भी कितने ही एसियाई देशों और उत्तरी अफ्रीका में देखी जाती है। सोवियत-काल में प्रोफेसर न. इसायेफ के नेतृत्व में सोवियत् साइन्स-वेत्ताओं और चिकित्सकों ने जो लड़ाई इस बीमारी के खिलाफ छेड़ी, उसी का यह परिणाम है। डाक्टरों ने सिर्फ बीमारों की चिकित्सा ही नहीं की, बल्कि इस बीमारी के कीड़ों को निर्मूल करने का बड़े पैमाने पर आयोजन किया प्रोफेसर खोदुकिन् ने स्मरण करके कहा—मध्य-एसिया में गर्म मुल्कों की बीमारियाँ जनता का भारी अनिष्ट कर रही थीं। सोवियत-सरकार ने अपनी स्थापना के आरंभिक दिनों से ही इन बीमारियों से मोर्चा लेना आरंभ किया।

पुराने जमाने में मलेरिया उज्बेकिस्तान के लिये बड़ी भयंकर बीमारी थी और बहुधा महामारी की तरह फैल जाती थी। एक साल तो सिर्फ ताशकन्द जिले में ३०,००० आदमी मलेरिया से मरे। जारशाही सरकार को इन बातों की भला क्या परवाह थी? ताशकन्द में प्रैक्टिस करनेवाले रूसी डाक्टरों ने अपने व्यय से देहात में जाकर चिकित्सा का प्रबन्ध किया था।

बासठ लाख की आबादी वाले इस प्रजातंत्र में आज ५३० मलेरिया-विरोधी स्टेशन तथा केन्द्र हैं। यह सभी मलेरिया-मेडिकल कीटाणु-प्रतिष्ठानों

के अधीन काम कर रहे हैं। यहाँ मलेरिया की चिकित्सा के साथ मच्छरों के उद्गम स्थानों के विनाश एवं सफाई का काम भी बड़े पैमाने पर होता है। सिर-दरिया और आमू दरिया के निम्न भागों में अवस्थित हजारों एकड़ दलदलें सुखा दी गईं। दूसरी जगहों में, जहाँ ऐसी दलदलें थीं, वहाँ भी यही उपाय काम में लाया गया। यह मच्छर उत्पादन-केन्द्र युगों से चले आ रहे थे युद्ध से पूर्व प्रतिवर्ष तीन चार लाख एकड़ भूमि पर विमानों से मच्छर-ध्वंसक दवाइयाँ बरसाई जाती थीं, जिसमें मशक-शाव नष्ट हो जायें। खास जाति की मछलियाँ भी लाकर पाली गईं। यह मछलियाँ मशक शावों को खाती हैं। जिन जिलों में मलेरिया का प्रकोप रहा करता था, सरकार ने वहाँ अक्रिचिन् जैसी दवाओं का काफी जखीरा और चिकित्सा का प्रबन्ध कर दिया। आज बहुत से इलाके मलेरिया से पाक हो गये हैं। जहाँ कहीं उसका प्रभाव अब भी रह गया है, वहाँ प्रबन्ध उसी प्रकार चालू है। ताशकन्द, बुखारा जैसे मलेरिया केन्द्र इस बीमारी से मुक्त हो चुके हैं, और वहाँ शायद ही कभी मलेरिया का रोगी दिखलाई पड़ता है।

चमड़े की बीमारी, जिसे आमतौर से 'दिल्ली का फोड़ा' कहा जाता है, पहिले मध्य-एसिया में बहुत फैली हुई थी। इसी तरह कालाज़ार का भी बहुत प्रकोप रहता था। इस बीमारी का कारण १८९८ में रूसी प्रोफेसर प. बोरोव्स्की ने मालूम कर लिया था, किन्तु वह नहीं मालूम कर पाये, कि कैसे ये कीटाणु आदमियों के अन्दर प्रवेश कर जाते हैं। युद्ध से थोड़ा ही पहिले कुछ तरुण सोवियत अनुसन्धान-कारियों ने पकड़ पाया, कि इन दोनों रोगों के प्रसारक मच्छर ही हैं। "दिल्ली के फोड़े" के कीटाणुओं को मच्छर चूहे-नेवले आदि जानवरों के शरीर से ले जाता है और कालाज़ार के कीटाणु को कुत्ते के शरीर से मूल जानवरों के नाश और चिकित्सा से बीमारी हटाने में बड़ी सफलता हुई। "दिल्ली का फोड़ा" जल्दी भरता नहीं, और महीनों बना रहता है, लेकिन सोवियत डाक्टरों ने अक्रिचिन् के इन्जेक्शन से उसे दो सप्ताह में सुखाने में

सफलता प्राप्त की है। कालाजार तीन से सात साल के लड़कों पर बहुत बुरी तरह से चोट करता है और उनकी तिल्ली, फेफड़े और हड्डी की मज्जा तक में घुस जाता है। पहिले इसे अ-चिकित्स्य समझा जाता था। सोवियत् में आविष्कृत दवाइयाँ एक ही दो सप्ताह में उसे भली भाँति सुधार देती हैं, और थोड़े समय में बीमारी बिलकुल खतम हो जाती है। आज सोवियत्-एसिया में यह दोनों बीमारियाँ क्वचित ही दिखलाई पड़ेंगी।

एक और बहुत प्रचलित बीमारी पप्ताची ज्वर था। यद्यपि प्राणों के लिये यह उतना खतरनाक नहीं था, पर बहुत अधिक फैलता और कष्टप्रद तो था ही। सोवियत् डाक्टरों द्वारा निकाला टीका इसमें बहुत लाभदायक प्रमाणित हुआ। प्रोफेसर खुदकिन् और उनके साथियों ने बीमारी के कीटाणुओं द्वारा चूहे को रुग्ण बनाकर उसकी खोपड़ी से इस टीके के लिये रस निकाला।

प्रोफेसर न. खोदुकिन ने अपनी इस सफलता के प्रसंग में कहा – "उज्बेकिस्तान में गर्म मुल्क की बीमारियों से लोहा लेने में कामयाबी चिकित्सा और प्रतिरोधी प्रबन्धों द्वारा मिली। परन्तु साथ ही लोगों के जीवनतल का ऊँचा होना भी इस अनुष्ठान में भारी सहायक हुआ। अधिक पैसा हाथ में आने से आदमी अधिक अच्छा खाना और कपड़ा खा-पहिन सकता है और पुष्ट शरीर रोगों का मुकाबिला खूब डटके कर सकता है।"

हमारे भारत में एक तो बीमारियों के लिये ऐसी दवाओं का पर्याप्त प्रबन्ध नहीं है और बाकी बातों को शक्ति से बाहर की समझकर छोड़ दिया जाता है। यदि शहरों में सिवरेज या पाखाना बहाने की नालियों का प्रबन्ध हो जाये, सड़े गले कुंडों, कूड़ा-कर्कट के ढेरों और गन्दे झोपड़ों की सफाई कर दी जाय, तो बीमारियों के तीन-चौथाई कारण दूर हो जायँ और मच्छड़ फिर कहीं दिखलाई न पड़ें। बाकी एक चौथाई काम रह जाता है अच्छा खाने-पहिनने का यह उपाय कहने में ही आसान है। सोवियत मध्य-एसिया का भी यही हाल हुआ होता, यदि वहाँ लोगों की आय बढ़ी न होती। आय और जीवनतल बढ़ा

इसीलिये कि वह उद्योग-प्रधान देश हो गया और आज उज्बेकिस्तान की राष्ट्रीय आय में कारखानों की उपज का भाग दश-बारह प्रतिशत नहीं, बल्कि सत्तर प्रतिशत है। भारत में भी हमारी सारी स्वास्थ्य-योजनायें कागज पर ही रह जायेंगी, यदि अपने यहाँ उद्योग-धंधे बढ़ा कर राष्ट्रीय आय को हमने पूरी तरह बढ़ा नहीं लिया।

१२ शिक्षा—

१९१४ में स्कूल के विद्यार्थियों की संख्या १७,२०० थी और उनमें अधिकतर रूसी बच्चे ही थे। १९४० में विद्यार्थियों की संख्या १३ लाख हो गई और इसके अतिरिक्त २ लाख १९ हजार लड़के टेकनिकल स्कूलों-कालेजों में पढ़ रहे थे। उज्बेकिस्तान के शहरों और गाँवों में अब सब जगह स्कूल और कालेज खुल गये हैं। साक्षरों की तादाद दो या तीन प्रतिशत नहीं, बल्कि सिवाय बूढ़े-बूढ़ियों के करीब-करीब सभी शत-प्रति-शत साक्षर हैं। पहिले उज्बेक बच्चे पुराने ढंग के मदर्सों में वर्षों गँवा कर थोड़ा बहुत लिख पढ़ पाते थे, सो भी कोई-कोई। और इन मदर्सों में भी धार्मिक शिक्षा का ही जोर था, शिक्षा जनता की अपनी भाषा उज्बकी में नहीं होती थी। सोवियत सरकार ने इस ढंग को बेहूदा समझा और जन-भाषा उज्बेकी को शिक्षा का माध्यम बना दिया। इस तरह दश-पन्द्रह साल के भीतर वहाँ निरक्षरता हटाने में सफलता मिली। भारत में भी यदि हम निरक्षरता को शीघ्र दूर करना चाहते हैं, तो उसका रास्ता यही है कि शिक्षा का माध्यम लोगों की मातृभाषाएँ बना दी जायँ और प्रारम्भिक शिक्षा के लिये ब्रज, अवधी-भोजपुरी, मगही, मैथिली आदि को माध्यम मान लिया जाय।

उज्बेकिस्तान में सारे सोवियत-संघ की तरह स्कूल तीन श्रेणियों में बँटे हुए हैं। प्रारम्भिक शिक्षा बच्चों के सातवें साल पूरा होने के बाद शुरू होती है। वहाँ शिक्षालयों का वर्ष पहली सितम्बर से शुरू होता है। पहली चार क्लासें प्रारम्भिक शिक्षा मानी जाती हैं। ७वीं क्लास तक मिडिल स्कूल

और ८-९-१०वीं क्लासें हाई-स्कूल। जहाँ विद्यार्थियों की संख्या कम होती है वहाँ लड़के-लड़कियों की पढ़ाई इकट्ठा होती है, नहीं तो उनके स्कूल अलग-अलग हैं। तीसरी क्लास से दूसरे अ-रूसी बच्चों की तरह उज्बेकिस्तान के लड़कों को भी सारे सोवियत संघ की राष्ट्र-भाषा रूसी को अनिवार्य रूप से पढ़ना पड़ता है। मिड्ल-पास करने पर विद्यार्थी साधारण हाई-स्कूल में दाखिल हो सकता है, यदि उसे कालेज या युनिवर्सिटी में जाने की इच्छा है; नहीं तो टेक-निकल या दूसरे विशेष स्कूलों में सम्मिलित हो जाता है। हाई-स्कूल पास करने पर कालेज या युनिवर्सिटी का दरवाजा उसके लिए खुल जाता है। उज्बे-किस्तान के बड़े शहरों में एक से अधिक कालेज—मेडिकल कालेज, इंजिनिय-रिंगकालेज, ट्रेनिंग कालेज इत्यादि हैं। इनके अतिरिक्त समरकन्द और ताशकन्द में दो युनिवर्सिटियाँ हैं। सभी जगह शिक्षा का माध्यम उज्बेकी भाषा है। पिछले २० सालों के अन्दर सभी विषयों की पाठ्य-पुस्तकें उज्बेकी भाषा में तैयार हो चुकी हैं। वैसे विद्यार्थियों के लिये रूसी भाषा का विशाल-साहित्य सहायता देने के लिये मौजूद है। विद्यार्थी उससे लाभ भी उठाते हैं, क्योंकि सभी विद्यार्थी स्कूल में ८ साल तक रूसी को द्वितीय भाषा के तौर पर पढ़ चुके होते हैं। साइन्स के विद्यार्थियों को एक या दो युरोपीय भाषाओं का भी परिचय होता है। साइन्स एक अन्तर्राष्ट्रीय वस्तु है। अनुसन्धान करनेवाले हर एक साइन्स के विद्यार्थी के लिये अनिवार्य तथा आवश्यक है, कि वह अपने विषय में दूसरे देशों में जो खोजें हो रही हैं; उनका अभिनवतम ज्ञान रखें।

(१) साइंस-अकदमी—

युनिवर्सिटी और कालेजों से निकले विद्वानों में जो अनुसन्धान का काम करना चाहते हैं, उनके लिए साइन्स-अकदमी की जबर्दस्त संस्था है। उक्त अनुसन्धानों की एकाबद्धता के लिए साइन्स-अकदमी का काम बहुत ही महत्वपूर्ण है। सारे सोवियत् की साइन्स-अकदमी एक विशाल संस्था है। पहले उज्बेकिस्तान में उक्त साइन्स-अकदमी की शाखा काम कर रही थी। लेकिन

१६४४ में स्वतंत्र उज़्बेक साइन्स अकदमी की स्थापना हुई। पिछले ४ सालों में उज़्बेक अकदमी ने बहुत उन्नति की है। अब १० अनुसन्धान-प्रतिष्ठानों की जगह ७४ काम कर हैं और अनुसन्धान-कर्त्ता विद्वानों की संख्या २१६ से ४७० हो गई है। १६४७ में कृषि और प्राणिशास्त्र के दो और नये प्रतिष्ठान कायम हुए हैं। गणित, फिजिक्स, टेकनिकल साइन्स और समाज-विज्ञान के प्रतिष्ठान पहिले से ही काम कर रहे थे। प्रजातंत्र के कृषि-विज्ञान प्रतिष्ठान में सेर्गेई कनेश के नेतृत्व में बहुत सालों से अनुसन्धान का कार्य चल रहा है। कपास की फसल उज़्बेकिस्तान के लिए बड़ा महत्त्व रखती है। सोवियत् की कपास की पैदावार का ⅔ उज़्बेकिस्तान में होता है। प्रो० कनश को कपास-सम्बन्धी खोज के लिए स्तालिन-पुरस्कार मिला है। उज़्बेकिस्तान में छोटे रेशे और कम उपज वाले कपास की खेती बन्द हो गई और उसकी जगह लम्बे रेशे और अधिक उपज वाली कपास बोई जाती है। मिस्री कपास में और सुधार करके अब उसकी खेती बहुत ज्यादा की जाती है। उज़्बेकिस्तान के वैज्ञानिकों ने स्वाभाविक रंग वाले कपास का भी आविष्कार किया है और उसकी खेती बड़े पैमाने पर हो रही है। एक ऊन जैसी कपास भी निकाली गई है।

फलों की नई जातियाँ निकाली गई हैं, और लिसेंको के बीज-संस्कार प्रक्रिया का भी बहुत उपयोग होता है। इस प्रक्रिया के अनुसार संस्कृत बीजों की फसल दो तीन हफ्ते पहिले तैयार हो जाती है।

उज़्बेकिस्तान के बहुत से प्रदेशों के वृक्षों और पौधों की पूरी तौर से खोज नहीं हुई थी। पिछले चन्द सालों में उनकी बड़े पैमाने पर सर्वे हुई, तथा कई जाति के नये पौधों और वृक्षों का पता लगा। इनमें कितने ही औषध के तौर पर बड़े गुणकारी साबित हुए और चिकित्सा में उनका उपयोग होने लगा। अकदमी के प्रेसीडेन्ट ताशमुहम्मद सरिम्साकोफ़ एक अच्छे गणितज्ञ हैं। उन्होंने अपने एक निबन्ध में सम्भवता के सिद्धान्त और स्टेटिस्टिक्स् पर

काफी प्रकाश डाला, तथा सम्भवता के सिद्धान्त द्वारा मौसिम की भविष्य-द्वाणी तथा दूसरी भू-फिजिक्स-सम्बन्धी घटनाओं के प्राक्कथन के बारे में उपयोग बतलाया।

प्रो० ताशमुहम्मद ने यह भी बतलाया, कि अकदमी वर्तमान पंच वार्षिक योजना में सहायता देने के लिए तत्पर हैं, "अपनी अनुसन्धान-योजना बनाते वक्त हमने प्रजातंत्र की कृषि और उद्योग-सम्बन्धी उन्नति की ओर खास तौर से ध्यान रखा है'''उज्बेकिस्तान-सोवियत् के कपास का मुख्य उत्पादन-स्थान है। इसलिए कपास की अधिक से अधिक उपज सबसे बड़ा प्रोग्राम है। हमें थोड़े समय में कपास की उपज दूनी करनी है। इसके द्वारा कपड़े का उत्पादन बहुत बढ़ेगा, जिससे एक ओर सारी सोवियत् जनता को प्रचुर परिमाण में कपड़ा मिलेगा तो दूसरी ओर हमारे प्रजातंत्र की आमदनी और समृद्धि बढ़ेगी।"

कपास की उन्नति के लिए एक खास कपास-अनुसन्धान-प्रतिष्ठान कायम किया गया है। प्रतिष्ठान कपास के पौधे पर तजर्बा कर उसके विकास में कैसे नियंत्रण किया जा सकता है, इस पर विचार करेगा और भिन्न भिन्न जाति के कपासों से संकरण द्वारा अधिक उपयोगी जाति को पैदा करेगा।

प्रो० ताशमुहम्मद ने कहा "अगले चन्द सालों में उज्बेकिस्तान के कल-खोजों और सोवखोजों के पास १२½ लाख एकड़ नहर वाले नये खेत होंगे। बड़े पैमाने पर सिंचाई और नहर के बनाने के लिए, हम एक सिंचाई अनुसन्धान-प्रतिष्ठान स्थापित करने जा रहे हैं, दूसरे प्रतिष्ठान भी अपने अपने विषय में काम करते जायेंगे।"

कपास की उन्नति अकेले नहीं की जा सकती है, उसका सम्बन्ध और कितनी ही दूसरी चीजों से है। इसके लिए कृषि-मशीन के कारखानों को और बड़ा करना होगा, जिसके लिए और लोहे और फौलाद की जरूरत होगी। इसी तरह अधिक खनिज खाद की माँग को पूरा करने के लिए खनिज-खाद के

कारखानों को बढ़ाया जा रहा है। ट्रेक्टरों की संख्या अधिक बढ़ाने पर तेल की अधिक जरूरत होगी, जिसके लिए भी काम हो रहा है।

उज्बेक साइन्स-अकदमी सारी समस्याओं को हल करने के लिए बहुत सचेष्ट है। उसने कितने ही भूगर्भ शास्त्रीय अभियान प्रजातंत्र के भिन्न-भिन्न भागों में भेजे हैं। वे यहाँ की खनिज सम्पत्ति और तेल के बारे में जाँच-पड़ताल कर रहे हैं। स्थानीय धातु-पाषाणों और कोयले की निधियों द्वारा आवश्यकता-पूर्ति के लिए पर्याप्त लोहा, कोयला और रसायनी पदार्थों के उत्पादन की समस्या पर अकदमी लगी हुई है। उसको पता लग गया है, कि उज्बेकिस्तान में काफी खनिज पदार्थ हैं, धातु का उत्पादन बढ़ाया जा सकता है। कितने ही नये जिलों में तेल के चिह्न मालूम हुए हैं।

अकदमी की अनुसन्धान-योजना में आमू-दरिया के मध्य-भाग में नहर और पन-बिजली का विकास खास महत्व रखता है। एक योजना बनाई गई है, जिसके अनुसार आमू-दरिया की धार को ५०० किलोमीतर लम्बी नहर में डाल दी जायेगी, जिससे आजकल निर्जल किन्तु बहुत ही उर्वर २५ लाख एकड़ जमीन में खेती होने लगेगी। इस नहर के किनारे कितने ही पन-बिजली-स्टेशन खोले जायेंगे, जिनकी क्षमता १० लाख किलोवात होगी। यह योजना वर्तमान पंचवार्षिक योजना से आगे तक की है। इसके पूरा होने पर प्रजातंत्र की आर्थिक और प्राकृतिक अवस्था में भी परिवर्तन होगा।

अकदमी के प्रेसीडेन्ट ने आगे कहा—"अकदमी के सभी प्रतिष्ठान (इन्स्टीट्यूट) अंग्रेन-उपत्यका की प्राकृतिक निधियों का अनुसन्धान कर रहे हैं और यह भी सोच रहे हैं, कि किस तरह उसका उपयोग किया जा सकता है। इस उपत्यका का भविष्य बहुत ही उज्ज्वल है। वहाँ एक ताँबा-पिघालक कारखाना बनाया जायगा। दुर्लभ-धातुओं, कोयला तथा सीमेंट के भारी खजाने को भी निकालने का प्रबन्ध किया जायगा। उपत्यका में एक विशाल गैस-कारखाना बनेगा, जहाँ से पाइप द्वारा गैस ताशकन्द पहुँचाया जायेगा।"

अकदमी कराकल्पकिया के आर्थिक और औद्योगिक स्रोतों के बारे में भी अनुसन्धान कर रही है। जारशाही जमाने में यह अत्यन्त उपेक्षित प्रदेश था।

अकदमी का ध्यान सिर्फ व्यवहारोपयोगी साइन्स की ही तरफ नहीं है, बल्कि सैद्धान्तिक साइन्स के सम्बन्ध में भी वह खोज कर रही है। सैद्धान्तिक-फिजिक्स और गणित पर ताशकन्द का गणितीय स्टेटिस्टकस्-स्कूल (ताशकन्द) खास तौर से काम कर रहा है। इतिहास-पुरातत्त्व पर कितने ही महत्त्वपूर्ण काम हुए हैं। उज्बेक-भाषा और साहित्य के इतिहास और विकास पर अकदमी का कम ध्यान नहीं है।

(२) ताशकन्द युनिवर्सिटी—

१६२० में मध्य-एसिया की पहिली युनिवर्सिटी कायम हुई। १६४५ में मध्य-एसिया-राज-युनिवर्सिटी ने अपनी २५साला जुबली मनाई। जुबली में भाग लेने के लिए सोवियत के भिन्न-भिन्न प्रजातंत्रों से ही नहीं, बल्कि ईरान, चीन और अफगानिस्तान से भी विद्वान् आये थे।

सोवियत-क्रान्ति (१६१७) से पहिले मध्य-एसिया में कोई कालेज नहीं था, युनिवर्सिटी की तो बात ही क्या। १६१८ में लेनिन ने पहले पहल मध्य-एसिया में युनिवर्सिटी की बात चलाई और १६२० में सोवियत् सरकार की एक विशेष शासन-घोषणा द्वारा युनिवर्सिटी की स्थापना हुई। युनिवर्सिटी को अपने पैर पर खड़ा करने में मास्को और लेनिनग्राद की युनिवर्सिटियों ने सहायता दी। प्रसिद्ध रूसी अकदमिक, प्रोफेसर और अनुभवी अध्यापक ताशकन्द पहुँचे और उन्होंने अध्यापन का कार्य सँभाला। आजकल के युनिवर्सिटी के बहुत से प्रमुख प्रोफेसर उन्हीं के शिष्य हैं। शुरू से ही उन रूसी-विद्वानों का ध्यान इस ओर था कि स्थानीय लोगों में योग्य प्रोफेसर और अध्यापक तैयार किये जायें। जुबली के वक्त तक तिहाई से अधिक (६०) प्रोफेसर और लेक्चरर उज्बेक थे।

युनिवर्सिटी ने सोवियत एशिया के लिये विशेषज्ञ तैयार करने में भारी काम किया। इसके हजारों ग्रेजुयेट, अध्यापक, इञ्जीनियर, रसायन-शास्त्री प्राणि शास्त्री, भूगोल-वेत्ता आदि पैदा किये, जिन्होंने मध्य-एसिया के प्रजातन्त्रों के आर्थिक और सांस्कृतिक विकास में भारी भाग लिया।

युनिवर्सिटी के ग्रेजुयेट आर्थिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के प्रमुख हैं। युनिवर्सिटी की जुबली के वक्त १६०० विद्यार्थी भिन्न भिन्न विभागों में शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। १४२ विद्यार्थी पोस्ट-ग्रेजुयेट की पढ़ाई कर रहे थे, जिनमें आधे स्थानीय जातियों के थे; डाक्टर के निबन्ध पर काम करनेवाले ३० विद्यार्थियों में और भी अधिक स्थानीय विद्यार्थी हैं।

युनिवर्सिटी के कितने ही ग्रेजुयेटों ने अपने क्षेत्र में भारी नाम पैदा किया। १६२८ में ग्रेजुयेट हुए ताशमुहम्मद कारीनियाजोफ आज कल उज्बेक साइन्स-अकदमी के प्रेसीडेन्ट हैं। दूसरे ग्रेजुएट प्रो० ताश मुहम्मद सारमुसाकोफ अकदमी के उप-प्रेसीडेन्ट तथा एक ख्यातनामा गणितज्ञ हैं। प्रो० म० कानिश भी यहीं के ग्रेजुएट हैं। युनिवर्सिटी के वर्तमान रेक्टर (चान्सलर) प्रो० म० उमरोफ भी ताशकन्द युनिवर्सिटी के ही विद्यार्थी हैं।

युद्ध की कठिनाइयों के होते भी युनिवर्सिटी ने अपने काम को जारी रखा और देश को ६०० ग्रेजुएट दिये। भाषातत्व और प्राच्यविद्या के दो नये विभाग खोले गये। युनिवर्सिटी में कई नई अध्यापक-गद्दियाँ स्थापित की गई—आज उनकी संख्या ५६ हैं। युद्ध के समय युनिवर्सिटी के विभागों ने कई सैद्धान्तिक और व्यावहारिक अनुसन्धान चलाये, और पामीर की खनिज सम्पत्ति तथा स्थानीय तैल-स्रोत की खोजों में भाग लिया।

युनिवर्सिटी की प्रयोगशाला ने लड़ाई के वक्त दवाई की कमी पूरी करने में बड़ी सहायता की। युनिवर्सिटी के अभियानों ने कितने ही अज्ञात स्थानों का नाम नक्शे पर लिखवाया।

युनिवर्सिटी अपने ही भीतर नहीं बढ़ती रही, बल्कि उसने कई

कालेजों की स्थापना में मुख्य भाग लिया। औद्योगिक कालेज, मेडिकल-कालेज, कृषि कालेज, ट्रेनिंग-कालेज, सिंचाई-प्रतिष्ठान, यंत्रचालित-कृषि-प्रतिष्ठान इसी युनिवर्सिटी की सन्तानें हैं, जो कि अब स्वतंत्र शिक्षणालयों में परिणत हो गई है। ताशकन्द के इन कालेजों के अतिरिक्त समरकन्द का कालेज भी इसी युनिवर्सिटी की सन्तान है। ताशकन्द-युनिवर्सिटी ने सिर्फ उज्बेकिस्तान तक ही अपने काम को सीमित नहीं रक्खा, बल्कि ताजिकिस्तान और तुर्कमानिस्तान के कालेजों, और प्रतिष्ठानों की स्थापना में भी हाथ बँटाया। उज्बेकिस्तान में आज कल ३६ कालेज हैं, जिनमें से आधे ताशकन्द-युनिवर्सिटी के भिन्न-भिन्न भागों की प्रसूति हैं।

ताशकन्द में युनिवर्सिटी के साथ कुछ उच्च-विभागीय स्कूल हैं। जिनमें कुछ के नाम हैं—गणितीय-स्टेटिस्टिक्स-स्कूल, भू-वनस्पतिशास्त्र स्कूल, प्राणिज-रसायन-शास्त्र स्कूल, मानव-वंश-स्कूल, वनस्पति-प्राणि विद्या-स्कूल इत्यादि।

(२) हस्तलिखित ग्रन्थ—

ताशकन्द में उज्बेक साइन्स अकदमी के पुस्तकालय में हस्तलिखित ग्रन्थों की बहुत भारी संख्या है। प्राच्य हस्तलेख-प्रतिष्ठान के डायरेक्टर प्रो० अलेक्सान्द्र सेम्योनोफ ने इस महान् संग्रह के महत्व को बतलाते हुए कहा— "हमारे पुस्तकालय में प्राचीन पूर्वी ग्रन्थकारों के ८० हजार हस्तलिखित ग्रन्थ मौजूद हैं। इनका लेखन समय पिछले हजार वर्षों में फैला हुआ है। सबसे पुराना हस्तलिखित ग्रन्थ जिस पर तिथि लिखी हुई है, ६५५ ई० में लिखा गया था। हमारे संग्रह में प्राचीन मुसलिम-साहित्य के सभी विषयों के प्राचीन प्राच्य विद्या-सम्बन्धी सभी ज्ञान-शाखाओं के ग्रन्थ मौजूद हैं। संख्या और दुर्लभता को लेते यह प्रतिष्ठान दुनियाँ में अपनी तरह का सबसे बड़ा पुस्तकालय है।"

प्रोफेसर ने यह भी कहा "यहाँ के सभी ग्रन्थों में सबसे दिलचस्प हस्त

लिखित ग्रन्थ १६वीं सदी के आजुर्बयजानी कवि फिजूली का छोटे छोटे सुन्दर चित्रों से सुभूषित काव्य-ग्रन्थ है। इसका लेखक मध्य-एसिया का प्रसिद्ध सुलेखक पीर महम्मद था, जिसने कवि की मृत्यु के १६ साल बाद १५८१ में हिरात में इसे लिखा।"

दूसरा महत्त्वपूर्ण संग्रह यहाँ इब्रानी (यहूदी) भाषा के हस्त-लिखित ग्रन्थों का एक भारी संचय है। इन्हीं के लिए पुस्तकालय में इब्रानी का एक खास विभाग खोलना पड़ा है। फारसी के महान् कवि हाफिज के अपने हाथ का लिखा एक ग्रन्थ है। तैमूरवंश के राज्य को मध्य-एसिया से उच्छिन्न कर बाबर को वहाँ से भागने के लिए जिसने मजबूर किया, उस शैबानी खान के हाथ का लिखा हुआ भी एक लेख यहाँ मौजूद है। शैबानी ने १५०० ई० में मध्य एसिया को अपने अधिकार में लिया। मध्य एसिया के मशहूर विचारक खोजा अहरार (मृत्यु १४९२) के हाथ का लिखा एक पत्र यहाँ मौजूद है। इसी तरह कितने और प्रसिद्ध व्यक्तियों के हस्तलेख हैं, जो दुनिया में और किसी जगह नहीं पाये जाते।

इस पुस्तकालय की इतनी उन्नति सोवियत्-काल में हुई है। क्रान्ति से पहिले ताशकन्द के सार्वजनिक पुस्तकालय में सिर्फ २०० हस्तलिखित ग्रन्थ थे। इन्हीं को लेकर पुस्तकालय आरम्भ हुआ था। सोवियत् शासन की स्थापना के शुरू ही से हस्तलिखित पुस्तकों को खरीदने के लिए सरकार हर साल भारी रकम दिया करती थी, जिससे वैयक्तिक परिवारों में पड़े बहुत से हस्तलिखित ग्रन्थों को खरीदा जा सका और कितने ही अनमोल ग्रन्थ तो पहिली बार विद्वन्-मण्डली के सामने आए।

संग्रह के साथ-साथ इन ग्रन्थों के बारे में अनुसन्धान का काम भी बड़े पैमाने पर हो रहा है। विवरणात्मक चार विशाल सूची-पत्र बनाए जा चुके हैं और आगे काम जारी है। अधिक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का रूसी में अनुवाद भी हो रहा है और कितने छापे भी जा रहे हैं। प्रतिष्ठान के संगृहीत ऐतिहासिक

ग्रन्थों के आधार पर "उज्बेकिस्तान का इतिहास" दो जिल्दों में तैयार किया गया है।

चारों बृहत् सूची-पत्रों में साहित्य, कला, इतिहास और विज्ञान के सम्बन्ध के ३,५०० हस्तलिखित ग्रन्थों का विवरण दिया गया है। इनमें मध्य-एसिया और ईरान के १५वीं सदी के कितने ही जगद्विख्यात व्यक्तियों के पत्र-संग्रहों और स्व-हस्ताक्षरों का जिक्र आया है।

खीवा के खान (राजा) मुहम्मद रहीम ने १८६० के करीब बहुत से अरबी और फारसी हस्तलिखित ग्रन्थों का उज्बेक भाषा में अनुवाद कराया था। यह एक बहुत महत्वपूर्ण संग्रह था। रूसी सेना ने जब खीवा पर चढ़ाई की, तो यह संग्रह विलुप्त हो गया। कितने रूसी विद्वानों ने बहुत कोशिश करके कुछ ग्रन्थों को ढूँढ़ निकाला, किन्तु अधिकांश हाथ न आये। उज्बेक विद्वानों ने इसके लिए कोशिश की और लुप्त ग्रन्थों के अधिकांश भाग को प्राप्त कर लिया। १९४५ के अन्त में इस संग्रह की एक हजार अनमोल जिल्दें ताशकन्द लायी गईं। ये ग्रन्थ मोटे कागज पर लिखे और चमड़े की जिल्द में बँधे हैं। इनके साथ अरबी फारसी पुस्तकों के वह ४० उज्बेक अनुवाद भी प्राप्त हुये हैं; जिन्हें मुहम्मद रहीम ने अपने "लिथो छापाखाने" में छापा था —यह उज्बेक भाषा का पहिला छापाखाना था।

प्रतिष्ठान में वैद्यक और ज्योतिष के भी बहुत से दुर्लभ हस्त-लिखित ग्रन्थ हैं।

(४) इतिहास-अध्ययन—

एसिया की विशाल बालुका-भूमि वैसे तो मनुष्य के लिए काल सी मालूम होती है, लेकिन उसने लुप्त संस्कृतियों के इतिहास की जानकारी में बड़ी सहायता की। चीनी तुर्किस्तान की यह बालुका-भूमि ही थी, जिसने भारत के कितने ही विलुप्त ग्रन्थों और बौद्ध-ऐतिहासिक चिन्हों को अपने भीतर सुरक्षित रखा। सोवियत्-काल में केवल व्यवहारोपयोगी साइन्स की ओर ही ध्यान

नहीं दिया गया, बल्कि वहाँ की सरकार ने विद्वानों की ऐतिहासिक खोजों और पुरातात्त्विक अभियानों के लिए भी मुक्त-हस्त हो पैसा खर्च किया। पिछले कई सालों से मास्को-युनिवर्सिटी के महान् पुरातत्व-वेत्ता प्रोफेसर ताल्स्तोफ के नेतृत्व में कई अभियान ख्वारेज्म की बालुका-भूमि में गये हैं और उनकी खोजों ने साबित कर दिया है, कि ताम्रयुग में ख्वारेज्म और सिन्धु-उपत्यका की सभ्यताओं में बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था। उनके सहायक प्रो० मार्क ओर्लोफ ने १६४६ के अभियान के बारे में लिखते हुए कहा—

"हमारा कैम्प मध्य-एसिया के रेगिस्तान के बीच में तोप्रककला की दीवारों के पास गड़ा है! यहाँ एक प्राकार-बद्ध शहर था, जो कई सदियों से वीरान पड़ा है। पुराने प्रासाद के अवशिष्ट तीन मीनार-ध्वंसों को देखने पर यह मुश्किल से विश्वास हो सकता है, कि दो हजार वर्ष पहले इस निष्ठुर बालुका में मानव जीवन की चहल पहल थी। यह निर्जन रेगिस्तान—जिसके भीतर से हमारी मोटरें और लारियाँ मुश्किल से गुजरी थीं—कोई समय था जब कि बहुत ही उर्वर नहर-सिंचित खेतों की भूमि थी। प्रो० स० ताल्स्तोफ के नेतृत्व में हमारा अभियान एक कठिन समस्या का हल यानी प्राचीन ख्वारेज्म के इतिहास की कुंजी ढूँढ़ने के काम में लगा हुआ है। पिछली खुदाइयों में प्राप्त सामग्री के आधार पर ५००० वर्ष पीछे तक का इतिहास जोड़ा जा चुका है।

"प्रो० ताल्स्तोफ ने १६३७ में इस प्रदेश में काम शुरू किया। तब से युद्ध के कुछ वर्षों को छोड़कर बराबर उनका अभियान यहाँ आता रहा, और नई खोजों से हमारे ज्ञान की वृद्धि होती रही। इस साल हमारे सामने खास तौर से बड़ा काम है—तोप्रककला हमारे अभियान और खोदाई का मुख्य स्थान रहेगा, लेकिन साथ ही यहाँ से वास्तु शास्त्रियों, कलाकारों और विशेषज्ञों के कितने कारवाँ ऊँटों पर सवार हो इस महान् रेगिस्तान के दूसरे कितने ही स्थानों की वस्तुओं और बस्तियों का अध्ययन करने जायेंगे। पिछले चन्द सालों में कितने

ही ऐसे किले ढूंढ़ निकाले गये हैं, किन्तु अभी तक विशेषज्ञ उनका अध्ययन नहीं कर सके हैं। उज्बेक पुरातत्त्व-वेत्ता यहिया गुलामोफ के नेतृत्व में पिसल युग तक के कई ध्वंसावशेषों की खोदाई हो रही है। यह बस्तियाँ सुयर्गन-सभ्यता से सम्बद्ध समझी जाती हैं। इनका पता १९४५ में प्रो० ताल्स्तोफ ने लगाया था और उन्हीं ने यह नामकरण भी किया।

"इन टीलों और यहाँ की पुरानी नहर-व्यवस्था का बड़े पैमाने पर अनुसंधान करने के लिए हवाई-जहाज से फोटो लिये गये हैं।

"हम विमानों और मोटर-कारों द्वारा बहुत भीतर तक जाँच-पड़ताल कर रहे हैं। यहाँ से प्राप्त वस्तुओं से प्राचीन ख़ारेज्म और उसके यूरोप तथा एशिया के सम्बन्ध की बहुत सी समस्याओं की कुञ्जी प्राप्त होगी। आरम्भिक खोजों से पता लगा है, कि ऐसे सम्बन्ध थे, और वह बहुत विस्तृत तथा विभिन्न प्रकार के थे। इन जाँच-पड़तालों से हमें प्राचीन काल के वणिक्-पथों का भी पता लगेगा। साथ ही हमें याना-दरिया और उज्बोई की सूखी धारों के इतिहास की सामग्री मिलेगी। याना की सूखी धार किजिल-कुम (लाल रेगिस्तान) के पश्चिमोत्तर भाग में अवस्थित है और उज्बोई कास्पियन से शुरू होकर बहुत दूर तक चली गई है। पहली खोज की टोली आमू-दरिया के किनारे अवस्थित नुकुस शहर से किजिलकुम रेगिस्तान के बीच में होते याना-दरिया होते सिर-दरिया तक आयेगी। वह रास्ते के पुराने नगरों और बस्तियों के ध्वंसों को घूम फिर कर देखती जायेगी; साथ ही विमान सूखी नदियों का फ़ोटो लेते जायेंगे।

"विमान और मोटर-कार की सहायता से इसी तरह उस्त-उर्त की भी जाँच-पड़ताल की जायेगी। यह ऊँचा और विस्तृत मैदान अराल-सागर तथा कास्पियन समुद्र के बीच में है। यहाँ बहुत से दिलचस्प प्राचीन ध्वंसावशेष हैं, जिनके समय का अभी निश्चय नहीं हो सका है। बर्क-केल्मेस की कड़ुई नमकवाली विशाल दलदल के बीच में "शैतान-कला" का प्रसिद्ध दुर्ग है। इसकी प्रसिद्धि सिर्फ कथानकों में मिलती है, अभी तक उसके बारे में कोई पता

नहीं मालूम हुआ था। "बर्क-केल्मेस" का शब्दार्थ है—"जाकर फिर न लौटना।" अब इस रहस्य का उद्घाटन विमान करेंगे।

"इस साल हम एक तीसरे रास्ते का पता लगायेंगे और अराल-सागर से किजिल-कुम को पार करते उज्बोइ के रास्ते कास्पियन के तट पर पहुँचेंगे। उज्बोइ किसी समय विशाल नदी थी, जिसमें बहुत सी शाखा-नदियाँ गिरती थीं। इसमें शक नहीं, कि आँधी और बालू हमारे रास्ते की कठिनाइयों को बढ़ायेंगे। कठिनाइयाँ भले हों, पर वह अपने काम की लगनवाले अभियानिकों को उत्साहहीन नहीं बना सकतीं।"

× × ×

उज्बेकिस्तान के प्रतिनिधि ने दिल्ली में एसिया सम्मेलन के वक्त कहा था, कि भारत और उज्बेकिस्तान की सभ्यताएँ बहुत ही प्राचीन और यशस्वी संस्कृतियाँ हैं। उस वक्त शायद कितने ही भारतीयों को यह बात खटकी होगी, क्योंकि उज्बेक नाम आजकल के उज्बेकिस्तान के प्रजातंत्र की भूमि पर १५०० ई० में आया। यदि नाम का ख्याल छोड़ दें, तो उज्बेकी भाषा अपनी पूर्वज तुर्की भाषा को लेकर भी ईस्वी छठी शताब्दी में ही उज्बेकिस्तान में पहुँची। इस तरह भी उसकी प्राचीनता भारत के सामने कल की बच्ची है। किन्तु उज्बेक वक्ता ने दिल्ली में जो बात कही, वह तुर्क तथा उज्बेक के ख्याल से नहीं कही थी। उसने वह इसी ख्याल से कहा था, कि उज्बेक जाति खारेज्म और मध्य-एसिया की उसी प्राचीन सभ्यता की औरस सन्तान है, जिसका सम्बन्ध सिन्धु-उपत्यका की सभ्यता से था।

वर्तमान उज्बेकिस्तान की भूमि में ताम्र-युग में एक सभ्यता थी, एक खास जाति के लोग रहते थे। फिर आर्य-शक वहाँ आये और दोनों जातियाँ मिलकर एक हो गईं। फिर तुर्क और उनके वंशज शैबानी उज्बेक आये, वह भी पहले की मिश्रित जाति से मिलकर एक हो गए। तुर्क संख्या में कुछ

अधिक थे और शायद अपने शासक होने का उन्हें अभिमान भी अधिक था, इस लिए मिश्रितजाति की पहले की भाषा हट गई और लोग तुर्की बोलने लगे। भाषा परिवर्तन हुआ, लेकिन खून और हड्डी मौजूद रही। तुर्की भाषा ने अपना अधिकार करके भी उतना मूल से विच्छेद नहीं किया, जितना कि ७वीं सदी में आकर इस्लाम ने करने की कोशिश की। सोवियत्-क्रान्ति के पहले के उज्बेक के मुँह से वही बात नहीं निकलती, जो कि उस दिन एसिया-सम्मेलन में कही गई। लेकिन आज का उज्बेक अपने इतिहास को अवहेलना नहीं, बल्कि गर्व की चीज समझता है, इसीलिए वह खारेज्म की सभ्यता से अपनी सभ्यता का आरम्भ मानता है।

उज्बेकिस्तान में मनुष्य का निवास इससे भी बहुत पहले से रहा है। आज से पचास हजार वर्ष पहले नेअन्डरथल मानव तेशिक-ताश की गुफाओं में रहता था, जो कि दक्षिणी उज्बेकिस्तान में हैं। उसके कई हजार साल बाद ऊपरी पुराण-पाषाण-युग के मानव का भी पता दक्षिणी-उज्बेकिस्तान में उसके चित्रों से मिला है। अफगानिस्तान की सीमा से थोड़ा ही हट कर जरउत-साया के दर्रे की गुहाओं में ये चित्र मिले हैं। इन चित्रों की कापी अदा रोगिन्स्कया ने की है। इन चित्रों का पता पहलेपहल इवान लोमायेफको लगा। लोमायेफ सोवियत-प्राणि संग्रहालयों के लिये विषैले साँप जमा किया करता था। उसने चित्रों को देख कर इसकी खबर तिर्मिजम म्युजियम के डायरेक्टर ग० परफेनोफ को दी। परफेनोफ ने अपने साथियों के साथ जाकर उसे देखा। दूसरे अभियान में उनकी कापी की गई और पत्थरों पर अंकित रेखा-चित्र का भी अध्ययन किया गया। यह चित्र एक चट्टान के ऊपर कुछ सुरक्षित सी जगह में है। सबसे दिलचस्प चित्र एक चौमहले मकान जितनी ऊँचाई पर हैं। चित्रों में अधिकतर शिकार के दृश्य दिखलाये गये हैं और शिकारी बिसोन् पर आक्रमण करे रहे हैं। शिकारियों के हाथ में पत्थर के भाले जैसे हथियार हैं। वे जानवर को चट्टान के कोने की ओर भगाकर वहाँ से गिरने के लिए मजबूर कर रहे हैं। प्राचीन

मानव इस तरह शिकार किया करता था, इसका पता फ्रांस के इसी तरह के चित्रों से मालूम है। एक खास बात शिकारियों की पोशाक है, जिसके पहनने से वे पक्षी या पशु की शकल के मालूम होते हैं। यह तरीका आजकल भी अफ्रीका के बुशमेन इस्तेमाल करते हैं और वह अपने को शुतुरमुर्ग के भेष में बदल देते हैं।

पिछले समय के कुछ चित्रों में कुत्ते, फ़न्दे और कीड़ों के भी चित्रण हैं। यह तस्वीरें छोटी छोटी ५ से ३० सेन्टीमेतर की हैं। सभी तस्वीरें एक रंग में खींची गई हैं। प्रारम्भिक कलाकार अभी गहराई या छाया उत्पादन करने की कला को नहीं जानता था, किन्तु यहाँ के कोई-कोई चित्र स्पेन और फ्रांस के प्रागैतिहासिक-चित्रों से निम्न कोटि के नहीं हैं।

प्रारम्भिक कलाकर वहाँ पहाड़ में उपलभ्य लाल या पाण्डुवर्ण की मिट्टी को जानवर की चर्बी में मिलाकर रंग के तौर पर इस्तेमाल करता था। पाषाण-युग की यह तस्वीरें बहुत पुरानी हैं, तो भी उनके रंगों का इतने समय तक सुरक्षित रहना आश्चर्यकर है। कुछ दूसरे चित्र-समूह पीछे के हैं। परफ़ेनोफ़ का विचार है, कि वे पित्तल युग के हैं। इनके रंग की सामग्री निम्न कोटि की थी और चित्र भी बहुत भद्दे तथा उतने प्रभाव-शाली नहीं हैं।

अभियानियों ने अकस्मात् ही कुछ चित्र निचले भाग में भी खोज निकाले। अभियान का नेता परफ़ेनोफ़ एक तिमहले मकान जितनी ऊँचाई से फिसल कर नीचे कुछ आगे निकले पाषाण पर गिरा और वहीं कई घंटों घायल पड़ा रहा। लोग बचाने के लिए देर से पहुँचे, तब तक उसकी नजर चट्टानी दीवार पर अंकित कुछ दूसरे रेखा-चित्रों पर पड़ी।

परफ़ेनोफ़ ने उनमें से ४८ की कापी की। इनमें से कितने चित्र ऊपर वाले चित्रों से अधिक बड़े तथा दूसरे ढंग के थे। परफ़ेनोफ़ का ख्याल है, कि यह जरफ़्शन-साया के सबसे पुराने चित्रों में से हैं। इनचित्रों में सबसे दिलचस्प तस्वीर एक बैल की है। इसे कलाकार ने चट्टान के एक उभड़े भाग में सींग तथा

खुर लगा कर बनाया है। रंग के भी कुछ हलके से निशान इस चित्र में मिले हैं।

इन दो प्रमुख चित्रस्थानों के अतिरिक्त दर्रे में १½ किलोमीतर तक कितनी ही जगहों में चित्र अंकित हैं। प्राचीन शिकारी ऐसे चित्रों को सिर्फ मनोरंजन या कला के लिये नहीं बनाते थे, बल्कि उनके लिए ये चित्र शिकार सुलभ होने के लिए तांत्रिक-साधना जैसे थे।

अब तक वैसे चित्रों की छब्बीस जगहें इस दर्रे में मिल चुकी हैं। पुरातत्वज्ञों का विश्वास है, कि पास के पहाड़ों में और भी इस तरह के चित्र होंगे। स्थानीय लोगों के कथनानुसार वहाँ बहुत सी गुफाएँ हैं। आदिम मानव इनमें रहा करता था। लोगों का यह भी कहना है, कि वहाँ कुछ गुफाएँ संगमर्मर के पत्थरों में हैं, और उनकी दीवारों पर भी रेखा-चित्र अंकित हैं।

५. सोग्दीय-हस्तलेख—

अकदमिक इ. या० क्रचकोव्स्की सोवियत् के सबसे बड़े अरबी-भाषा वेत्ता हैं। उन्होंने १९३२ में समरकन्द के पास प्राप्त ७वीं शताब्दी के अनमोल ऐतिहासिक पत्रों के ऊपर लिखते हुए कहा :—

वह बड़ा ही सौभाग्यशाली विद्वान् है, जो अपने सामने साइन्स को एक नये क्षेत्र उत्पन्न और विकसित होते देख रहा है या जिसके सामने अकस्मात् एक ऐसा महान् आविष्कार हुआ और नई सामग्री प्राप्त हुई, जिसके अध्ययन से धीरे-धीरे एक विशाल चित्र खड़ा हो जाता है। यही अवस्था मेरी हुई, जब कि मैंने शताब्दियों पहले मध्य-एसिया में फूली-फली सोग्दीय भाषा और संस्कृति को देखा। इसकी शाखाएँ बहुत दूर तक फैली थीं, मध्य एसिया की सीमाओं से भी दूर तक। यद्यपि अरबों के प्रहार ने उसे नष्ट कर दिया, लेकिन बिना अपना निशान छोड़े वह नहीं मिटी और आज भी मध्य-एसिया की संस्कृति पर उसका प्रभाव दिखलाई पड़ता है।

मैं अरबी का पण्डित हूँ, मेरा क्षेत्र मध्य-एसिया के इतिहास से बहुत दूर है। मुझे कभी ख्याल भी नहीं आया था, कि मेरा काम सोग्दीय लेख-पत्रों के साथ होगा। अरबों के विरुद्ध सोग्दीयों का अंतिम भयंकर संघर्ष जो हुआ था, उससे सम्बन्ध रखनेवाले ये पत्र मुझे हाथ लगेंगे, इसकी क्या कभी सम्भावना थी? लेकिन होनहार ऐसा ही था। लेनिनग्राद् में सोग्दीय अरबी हस्तलेख एक ही मेज पर पड़े थे। एक अरबी का विद्वान् और एक ईरानी का विद्वान् दोनों बड़ी तत्परता से उन पत्रों को देख रहे थे। वे इस फिकर में थे, कि कोई नया आविष्कार, खोज की कोई नई किरण इन पुलिन्दों में से निकाली जाय।

१९३३ में लेलिनग्राद के ईरानीय विद्वानों में बड़ी उत्सुकता और सनसनी फैल गई, जब खबर लगी, कि ताजिकिस्तान में कुछ सोग्दीय लेख मिले हैं। तब तक कभी सोग्दीय भाषा का कोई पत्र सोग्द देश में नहीं मिला था। कुछ पत्र मिले थे, लेकिन वह पूर्वी-तुर्किस्तान की सोग्दीय बस्तियों में मिले थे। इसी बीच यह भी खबर उड़ी, कि जरफ्शां नदी के दक्षिणी तट पर मुग्-गिरि में एक दफ्तर निकला है। अन्त में १९३३ में वहाँ व्यवस्थित रूप से खुदाई करने के लिए खास तैयारी के साथ एक छोटा अभियान भेजा गया। बात ठीक निकली। सोग्दीय पत्रों का जो खजाना वहां मिला, उसके सामने पहले की सारी खोजें तुच्छ साबित हुईं। इससे भी आश्चर्यकारक बात तो यह थी, कि सोग्दीय पत्रों के साथ उनकी एक एक प्रति चीनी और अरबी लिपि में भी मिली। सातवीं सदी में मध्य-एसिया की राजनीतिक स्थिति ऐसी ही गहन थी। सोग्द-देश पर अरबों का प्राणान्तक प्रहार हो रहा था और सोग्द अपने पड़ोसी चीन से गुहार मांग रहा था। अभियानिकों के प्रत्यावर्तन से पूर्व ही अरबी हस्तलेखों की खबर लेनिनग्राद पहुँची, लेकिन खबर में कुछ ऐसी बातें थीं, जिन पर मुझे भारी संदेह था। कहा गया था कि यह लेख चर्म-पत्र पर हैं। लेकिन आज तक दुनिया में अरबी हस्तलेख के ६ ही चर्म-पत्र ज्ञात हैं। यह विश्वास करना कठिन था,

कि उनकी संख्या अरब-देशों से नहीं बल्कि ताजिकिस्तान से बढ़ाई जायेगी। मैंने सोचा कि शायद कुरान का एक पन्ना चर्म-पत्र पर लिखा हुआ हो। यह भी दिलचस्प चीज होती, किन्तु वह इतनी दुर्लभ नहीं। मेरा यह ख्याल और पक्का हो गया, जब कि अभियान के नेता तथा मेरे सतीर्थ्य फाइमान के पत्र में पढ़ा, कि अभियान को एक छोटा सा चमड़ा मिला, जिस पर अरबी लिपि में 'ला इलाहि' (नहीं ईश्वर) लिखा था। यह मुसलमानी कलमा का एक अंश है। यह भी अफवाह सुनी, कि अभियान के कुछ मेम्बरों ने मध्यएसिया के इन अभिलेखों में तरखून का नाम पढ़ा। अरबों की विजय के समय सोग्द (सुग्ध) के एक बड़े शासक नाम का तरखून ही था। लेकिन इसे भी मैंने खींच तान कर सोग्दीय इतिहास से जोड़ने का प्रयत्न समझा।

तो भी मेरी उत्सुकता बहुत बढ़ गई थी और मैंने एक फोटो पाने की कोशिश की, लेकिन किसी कारण से मध्य-एसिया से वह आ न सका। भिन्न भिन्न विभागों के सम्बन्ध की रुकावटें पेश आईं। यह भी सवाल उठा, कि किनके हाथ में यह लेख दिए जाँय? कहाँ उन्हें रखा जाय? कौन उनके पढ़ने का काम करे? खैर अन्त में वह लेनिनग्राद पहुँचे। यहाँ भी अभी निश्चय नहीं हो पाया था, कि कहां रखकर उन्हें पढ़ा जाये। जनवरी में १६३४ में मालूम हुआ, कि उन्हें अस्थायी तौर से साइन्स अकदमी के पुस्तकालय के हस्तलेख विभाग में रखा जाए। मुझे उस समय बहुत जोर का बुखार आया हुआ था, परन्तु मुझमें दूसरे दिन तक के लिए धैर्य नहीं था। मैं युनिवर्सिटी के बाँध के साथ साथ अकदमी की ओर चला। मेरी स्त्री भी साथ थी। पिछले दस सालों में अरबी पुरा लिपि के रहस्य में उसका अभ्यास इतना बढ़ गया है, कि वह कूफी अक्षरों को मुझसे भी अच्छा पढ़ सकती है। मुझे स्मरण करके हँसी आई, जब पाव सदी पहले काहिरा के भिन्न-भिन्न मस्जिदों के लेखों के बारे में पूछने पर वहाँ के अरबी-विद्वान सदा अनिच्छा से जवाब देते थे—"यह कूफी अक्षर में लिखा है,

पढ़ा नहीं जा सकता।" मेरी स्त्री का चित्रकला का अभ्यास और उसकी सावधान आँखें कितनी ही बार मुझे अरबी हस्तलेख पढ़ने में सहायक हुईं। वह ऐसी धूमिल पंक्तियाँ पढ़ देती थी, जिन्हें अरबी भाषा का इतना ज्ञान रखते हुए भी मैं पढ़ नहीं सकता था।

पुस्तकालय के पहले तल्ले पर हस्तलेख-विभाग में पहले ही से एक बड़ी मेज पर "पान" बैठा हुआ था—विद्यार्थी जीवन से ही हम अ० अ. फ्राइमान को इसी नाम से पुकारा करते थे। वह किसी सोग्दीय सामग्री पर ध्यान-मग्न था। वह जब तब बराबर अपने गोल चश्मे को लिलाट पर हटाता था, जिससे जान पड़ता था, कि कोई कुंजी मिल नहीं रही है। उसने अलग रखे एक लिफाफे में से एक पत्र निकाला और यह देखने के लिए मेरी तरफ ताकने लगा कि उसका मुझ पर क्या प्रभाव पड़ता है। पहली ही दृष्टि में मैं उछल पड़ा। नहीं जानता, कारण ज्वर था या उत्सुकता, सारा खून दिमाग की तरफ दौड़ा और स्थान आँखों के सामने नाचने लगा। मेरे हाथ में कीटभक्षित और सिकुड़न पड़े चमड़े का एक टुकड़ा था, जिसपर सिर्फ अलग-अलग अक्षर दिखलाई पड़ रहे थे, लेकिन मैं उनसे एक भी सार्थक अरबी शब्द नहीं बना पाता था। मेरा हृदय बोझ से फटने लगा और सबसे चिन्ताजनक ख्याल यही उस वक्त मेरे दिमाग में दौड़ने लगा—"मैं कोई बात इससे निकाल नहीं पाऊँगा!" लेकिन तुरन्त ही मुझे लज्जा आने लगी और दृढ़ संकल्प के साथ मैं फिर उस ओर देखने लगा। और देखा, कि मैं उसे नजदीक से नहीं पढ़ सकता, एक लाल पर्दा आँखों को ढाँकने लगा। मैंने फिर कोशिश की और पत्र में जहाँ तहाँ आँख गड़ा कर देखने लगा। फिर भी वही हालत। तो भी मैंने हिम्मत नहीं हारी और अपने आप से धीरे धीरे बोला—"हाँ, पहली पंक्ति में आरम्भ करने का प्रचलित कलमा 'बिस्मिल्ला' है। इसका अर्थ हुआ कि यहीं से लेख आरंभ होता है, यह कोई बीच से फाड़ा हुआ पन्ना नहीं है। और यहाँ पत्र के बीच में सचमुच ही 'तरखून' का नाम है""तो अवश्य यह कुरान

नहीं है···तो फिर यह है क्या ?" मेरा मन कहीं से प्रकाश पाने को छटपटा रहा था—"एक अक्षर ? यहाँ, दूसरी पाँती के आखिर में। यहाँ साफ लिखा है, उसके मुवक्किल से'···लेकिन नाम, हाँ नाम ? 'दीवा'···यहाँ 'दीवा' लिखा है। बिल्कुल साफ है। ईकार भी दीर्घ। आकार भी दीर्घ। कैसी बकवास, ऐसा भी कहीं नाम हुआ है ? दूसरी लाइन का आरम्भ और भी बुरी बात ···यहाँ साफ 'सित्ती' लिखा है। लेकिन 'सित्ती' यह कोई साहित्यिक शब्द थोड़ा ही है ? और बोली में इसका अर्थ होता है 'मेरी स्वामिनी'···। मेरी साँस रुकने लगी और सोचा—"शायद यहाँ एक शब्द का छेद हो गया है, और उसका आधा दूसरी पंक्ति में चला आया है। मिस्र से मिली अरबी पेपरी में ऐसा देखा गया है। तो दी वा सि त्ती···दिवस्ती···ऐसा कोई नाम नहीं है ? तरखून को ले लो। मध्य-एसिया सम्बन्धी साहित्य में यह नाम आया है, किन्तु किसी दिवस्ती का नाम नहीं देखा। परन्तु यहाँ तो साफ दिवस्ती लिखा हुआ है। मेरी स्त्री ने "अलेक्सान्द्र अर्नाल्दोविच" कहते फ्राइमान को सम्बोधित किया और पूछा—"सोग्दीय लेखों में 'दीवास्ति' का नाम तुम्हें मिला है ?" फ्राइमान चकित हो गया और उसका चश्मा ललाट पर चढ़ गया। चकित और शून्य आँखों से उसने कहा—"ना, लेकिन यहाँ कई जगह 'दीवाने स्तिच्' जैसा लिखा पड़ा है, जिसका सम्बन्ध दीवान—आफिस या शायद कोई उपाधि है···।"

"नहीं नहीं, यहाँ अरबी में 'न' जैसा कोई अक्षर नहीं है।।" निश्चित रूप से विरोध करते हुए मैंने कहा—"सिर्फ दीवस्ती।" इसी वक्त मेरे दिमाग में एक विचार आया, और मैं कुर्सी से उठकर दर्वाजे की ओर भागकर, बाहर चला आया, मेरी इस हर्कत पर दूसरे लोगों को आश्चर्य हुआ। मैं पिछवाड़ेवाली सीढ़ियों की ओर दौड़ा और आठवें तल्ले पर पहुँचा, जहाँ कि "प्राच्य-प्रतिष्ठान" के कमरे हैं। वहाँ अरबी के कमरे में हमारे प्रधान इतिहासकार तबारी की बारह जल्दें पुस्तकाधानी में रखी हुई थीं। मुझे विश्वास था, कि अवश्य इस

नाम का भेद वहाँ से प्रकट होगा। यह अच्छा हुआ कि सीढ़ियों पर या कमरे में कोई दूसरा आदमी मुझे नहीं मिला, नहीं तो उस वक्त मेरी शकल-सूरत ऐसी हो रही थी, जिसे देखकर कर वह सवाल पूछ बैठता; और मुझ में कुछ बोलने की क्षमता नहीं थी।

मैंने जाकर तबारी की शब्द-सूचीवाली जिल्द को उठाया और उसे उलटने लगा। सारे दकार को उलट गया, लेकिन दीवस्ती नहीं मिला। मेरा हृदय बैठने लगा। फिर एकाएक कुछ पक्तियों नीचे मेरी आँखें "दीवस्नी" पर ठिठक गईं। मैंने सोचा, "यह तो सिर्फ एक नुक्ते का अन्तर पड़ता है... जरूर यही है!" फिर पुस्तक के उस पन्ने को उलट कर देखा। वहाँ मध्य-एसिया का वर्णन था। काल भी हिजरी सन के सौवें वर्ष का आरंभ। मैं उसे ध्यान से पढ़ न पाया। लेकिन अब मुझे संदेह बिल्कुल नहीं रहा। हृदय में अपार आनन्द था। जिस तरह दौड़ा-दौड़ा ऊपर आया था, उसी तरह मैं दौड़ा-दौड़ा नीचे उतरा। यदि कहीं मेरी आयु बीस साल और कम होती, तो सीढ़ियों से उतरने की जगह मैं लकड़ी की बाँही पर फिसल कर नीचे आ जाता। हाँ, सच। मैं इतनी ही जल्दी में था उस वक्त। हस्तलेख-विभाग के भीतर जा बहुत थका हुआ अपनी कुर्सी पर गिर पड़ा। बोलने की शक्ति न थी। फ्राइमान ने अभी भी मेरे भागकर जाने का कारण जान नहीं पाया था। मैंने धीमी आवाज में कहा—"मैं 'दीवास्ति को पा गया।' तीन जोड़ी आँखें प्रश्न-सूचक मुद्रा में मेरी ओर घूरने लगीं। जब मेरी साँस जरा ठीक हुई, तो मैंने व्याख्या की। सारी मंडली में खुशी मनाई जाने लगी। लेखों के ऊपर एक बड़ा प्रकाश पड़ा और अब मार्ग-प्रदर्शक-सूत्र हमारे हाथ में था।

उस दिन पूर्वाह्ल में मैं और कुछ नहीं कर सका, तो भी मेरा हृदय शान्त था। अभी सामने बहुत सा काम था, लेकिन मुझे विश्वास था, कि मैं ठीक रास्ते पर चल रहा हूँ। दूसरे दिन मैं अब बाकायदा पत्र पढ़ने बैठा। लेकिन अब मेरी मानसिक स्थिति बिल्कुल दूसरी ही थी। मैंने तबारी के

तत्सम्बन्धी पृष्ठों को भी पढ़ डाला था। अब मेरे सामने एक-एक अक्षर का आकार भी प्रगट हो रहा था। मुझे लम्बून के सुलेखक के अक्षरों और पंक्तियों का सौन्दर्य भी पसन्द आने लगा। प्रतिदिन किसी जगह प्रसन्नता होती और किसी जगह साफ न पढ़े जाने पर चिन्ता भी। किन्तु अब वह पहले जैसी चिन्ता न थी। बारह सदियों तक जमीन के नीचे दबा पड़ा यह सिकुड़ा चमड़ा पुरालिपिज्ञ की पैनी आँखों से अपने रहस्य को छिपा नहीं सकता था। यह कैसे चुप्पी साधेगा, जब कि अनमोल नजीरों द्वारा सुराग लगाया हियों से इसका सामना हो रहा है।

"दीवाश्ती" का असल सारे लेखों की कुञ्जी थी। उसने अरबी लिपि को ही सुपठ नहीं बना दिया, बल्कि सोग्दीय हस्तलेख पढ़ने में बड़ी सहायता पहुँचाई। दीवाश्ती एक सोग्दी राजा था। मुग्-गिरि में मिले कागज पत्र उसी के दफ्तर का एक अंश था। इसके बाद यह समझना आसान था, कि किसको यह पत्र लिखे गये थे। इस नाम से पत्रों का समय भी ठीक मालूम हो गया, जो कि ७१८-१९ ई० था। अक्षर अक्षर करके पत्र की सभी बातें पढ़ी गईं, यहाँ तक कि उस हिस्से की भी बातें मालूम हो गईं, जो कुछ मलिन था। पंक्तियाँ बड़ी ही सफलता के साथ फिर से बना ली गईं। मुझे अपने साहस के लिये अभिमान हुआ। इसी के द्वारा कभी कभी ऐसी बातें भी हम मालूम कर सके, जो पहले पहल नजर डालने पर सदा के लिए लुप्त समझी जाती थीं।

यह अभिमान दूसरे क्षेत्र के विशेषज्ञों में भी देखा गया, जब दो सप्ताह बाद अकदमी की बैठक मुग्-गिरि के अभियान के बारे में रिपोर्ट पेश करने के लिए हुई। प्राच्यविद्याप्रतिष्ठान के वाचनालय में दूसरे समय बहुत कम पाठक आते हैं, परन्तु उस दिन कमरा भरा हुआ था। कमरे की कुर्सियाँ ही नहीं भर गई थीं, बल्कि बरांडे में भी भीड़ थी। अकदमी का स्थायी सेक्रेटरी उस समय पहुँचा, जब कि बैठक चल रही थी। उसने दरवाजा खोला

तो उसका पहला ख्याल हुआ, जगह न होने से पीछे हट जाने का सचमुच ही यह विजय महोत्सव था—एक ऐसे अभियान का विजय महोत्सव, जिसने साइन्स (विद्या) को बहुत महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रदान की और स्वयं उस साइन्स की विजय है, जिसने इस प्रकार अपनी क्षमता का परिचय दिया।

इन हस्तलेखों का काम न उस बैठक में समाप्त हुआ और न उनके बारे में उसी साल प्रकाशित हुए विवरण में ही। इस विवरण में अरबी अक्षरों के सुव्यवस्थित अनुशीलन पर विचार किया गया था। मुख्य व्यक्ति का नाम दीवास्ती नहीं बल्कि दीवश्ती पढ़ना चाहिए। उसने अरबों के साथ अन्तिम सम्बन्धविच्छेद के बाद मुगगिरि को अपना निवास बनाया। हम यह भी जानने में सफल हुये, कि किस जाति के बकरे का वह चमड़ा था। बहुत सम्भव है, हस्तलेख के और अध्ययन से कितनी ही और बातें मालूम हों, कितने ही और अस्पष्ट अक्षर अधिक अच्छी तरह पढ़े जा सकें; किन्तु यह छोटी छोटी बातें हैं। हस्तलेख की कुंजी तो उसी समय मालूम हो गई; जब कि यह विचित्र नाम दीवश्ती मालूम हो गया। आज वह ईरान-विद्या के सभी पंडितों और मध्य-एसिया के इतिहासवेत्ताओं के लिए सुपरिचित है। अरब-विद्या-विशारद इस पर प्रसन्न हैं, कि यह सोग्दीय पत्र उनके हाथ पड़ा जो अरबी पुरालिपि का एक प्राचीन लेख ही नहीं बल्कि प्रथम श्रेणी के इतिवृत्त का एक स्रोत है।

मैं अक्सर सोचा करता हूँ कि किसी दिन इसी प्रकार का महत्त्वपूर्ण, एक और अरबी प्राचीन हस्तलेख मध्य-एसिया में मिलेगा।

(६) शिक्षणालय और प्रकाशन

उज्बेकिस्तान में जो आर्थिक उत्क्रान्ति हुई है, उसका जनता के सारे सांस्कृतिक जीवन पर प्रभाव पड़ा है। उज्बेक-भाषा, जिसमें नवाइ और बाबर ने कविता की थी, सदियों तक उपेक्षित थी, अब वह प्रजातंत्र की सम्मान्य भाषा है।

इसका लिखित साहित्य तेजी से बढ़ रहा है। १६३६ में सत्तर प्रतिशत जनता लिख-पढ़ सकती थी। सात वर्ष की शिक्षा सार्वजनिक और अनिवार्य होने का यह परिणाम है। आज स्कूलों में १३ लाख लड़के पढ़ते हैं। जहाँ क्रान्ति के पहले एक भी कालेज या युनिवर्सिटी न थी, वहाँ दो युनिवर्सिटियाँ, २५ कालेज और १०० टेकनिकल-स्कूल हैं। गाँवों और शहरों में ३००० सार्वजनिक पुस्तकालय और वाचनालय हैं। १३० पत्र-पत्रिकायें उज्बेक भाषा में छपती हैं, और ७० ताजिक, रूसी आदि दूसरी भाषाओं में।

(७) अलीशेर नवाई (१४४१-१५०१ ई०)

अली शेरनवाई एक बहुत ही प्रतिभाशील कवि तथा राजनीतिज्ञ था। यही नहीं, वह कवियों और कलाकारों का महान् आश्रयदाता था। जब अलीशेर १५ साल का था, उसी समय उसकी प्रतिभा देखकर कवि लुत्फी ने उसके लिये भविष्यवाणी की। नवाई यद्यपि एक धनाढ्य जागीरदार था, लेकिन दरबारी दाव-पेचों के मारे उसे कितनी ही बार अपना निवासस्थान—राजधानी हिरात— छोड़ने को मजबूर होना पड़ा। कितनी ही बार तलवार हाथ में ले उसे खूनी लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं— वह कवि था और सैनिक भी। भव्य इमारतों का निर्माता था और दार्शनिक होते भी नवाई ने अपना सारा जीवन जनता के सुख और आनन्द के लिए उत्सर्जित किया। नवाई की जीवनी पर ऐबेक ने उपन्यास लिखा है, जिस पर उसे स्तालिन पुरस्कार मिला। नवाई के समय कविता और साहित्य के क्षेत्र में फारसी का सम्मान था, देश-भाषा (उज्बेक) को कोई पूछता न था, यद्यपि इस भाषा—जिसे उस समय चग़ताई तुर्की कहा जाता था—के बोलनेवालों का ही मध्य-एसिया में राज्य था और जनता भी अधिकतर इसी भाषा को बोलती थी। नवाई को कवि निजामी के 'काव्य-पंचक' (खम्सा) ने बहुत प्रभावित किया था और उसी की देखा-देखी इसने भी अपना 'काव्य-पंचक' लिखा। आज भी उज्बेक भाषा की यह अति-

पुरातन ही नहीं अपितु अत्युत्कृष्ट रचना है। हरेक उज्बेक पाँच शताब्दी पहले लिखे गये इन काव्यों को साभिमान पढ़ता है। नवाई की प्रतिभा सर्वतोमुखीन थी। प्रसिद्ध चित्रकार बेहज़ाद की प्रतिभा को उसने केवल ढूँढ़ ही नहीं निकाला, बल्कि उसे अपने आश्रय में ले आगे बढ़ाया। नवाई कहता था—"शिल्पियों में बहुत से योग्य उत्साही और परिश्रमी व्यक्ति हैं। फिर क्या यह असंभव है, कि हमारे यहाँ चीन के जैसे सुन्दर चीनी बर्तन, चीनी रेशम (चीनांशुक) और काश्मीरी शाल बनाये जायें?" उसने यह सिर्फ सपना ही नहीं देखा, बल्कि इस स्वप्न को साकार बनाने के लिए प्रतिभाशाली शिल्पियों को नियुक्त किया। नवाई की सभा के रत्न थे—ज्योतिषी सुल्तान मुराद, सुलेखक सईफुद्दीन और कवि निज़ामी। प्रसिद्ध चित्रकार बेहज़ाद एक गरीब घर में पैदा हुआ था, जिसे नवाई ने अपनी संरक्षकता में लिया। तरुण इतिहासकार खुन्दमीर को नवाई ने इतिवृत्त लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। खुंदमीर आज एक महान् इतिहास-लेखक के रूप में स्मरण किया जाता है।

१२२२ ई० में चिंगिज़ खान ने अपनी विजय-यात्रा में सिर और आमू-दरिया के बीच के भाग—आज के उज्बेकिस्तान—को ले लिया। और तब से १३७० तक वहाँ उसके पुत्र चग़ताई खान का वंश राज करता रहा। १३७० में तैमूर ने अपने राजवंश की स्थापना की। बाद, उसके पुत्र शाहरुख़ (१४०४-४७) ने राज संभाला, किन्तु उसने अपने पुत्र उलुगबेग (१४०९—४०) को समरकन्द में बैठा निजी राजधानी हिरात को बनाया। इस प्रकार हिरात के भाग्य ने पलटा खाया। शाहरुख़ के दीर्घ शासनकाल में हिरात सुन्दर प्रासादों, विशाल मस्जिदों, सरायों-मदर्सों और नगरोद्यानों से सुसज्जित हो उठा। शाहरुख़ के शासनकाल में ही उसके ज्येष्ठ तथा मेधावी पुत्र उलुगबेग ने समरकन्द को श्रीहीन नहीं होने दिया। वहाँ वह ज्योतिष, गणित विद्याओं और कला का संरक्षक बन समरकन्द की ख्याति को बढ़ाता रहा।

अली शेरनवाई का जन्म शाहरुख के शासन के अन्तिम काल (१४४१) में हुआ था। ५० साल की आयु में जब उसका देहान्त हुआ, तो उस समय तैमूर वंश का भी मध्य-एसिया में खात्मा हो चुका था। वस्तुतः नवाई का समय वह समय था, जब कि तैमूरी शाहजादे राज्य को टुकड़े-टुकड़े कर आपस में लड़ रहे थे। जहीरुद्दीन बाबर नवाई के समय अभी तरुणतर था।

१३. कला

जब से अरबों ने मध्य-एसिया की भूमि म पैर रखा, वहाँ की कला पर मानो अभिशाप पड़ गया। उमय्याद् खलीफा किसी कला को पनपने देने के लिए तैयार नहीं थे। यद्यपि अब्बासी खलीफों के जमाने में विद्याव्यसन बढ़ा और बहुत से दर्शन ग्रन्थ यूनानी भाषा से अरबी में अनूदित हुए; फिर भी मूर्तिकला की तो बात ही दूर, चित्रकला के लिए भी कोई गुञ्जाइश नहीं थी। ताहिरी (८१८-७२) और सामानी (८६२-६६३) ईरानी वंश थे, और इस समय फिर एक बार मध्य-एसिया में ईरानी संस्कृति को आगे बढ़ने का मौका मिला। लेकिन धार्मिक पक्षपात इतने अधिक थे, कि उससे कला के पुनरुज्जीवन में सहायता नहीं मिली। हाँ, फाराबी और बू-अली सेना के रूप में दो प्रकांड दार्शनिक यहाँ पैदा हुए। फाराबी का जन्म सिर-दरिया के पास फराब में और बू-अली सेना का बुखारा के पास हुआ था। पर अब भी इस भूमि में स्वतंत्र विचारों के लिए गुञ्जाइश नहीं थी। इसी से इन दोनों विश्वविश्रुत दार्शनिकों को भागकर इराक और ईरान में अपनी आयु बितानी पड़ी। सामानियों के उत्तराधिकारी कराखानी उइगुर अधिकतर अ-मुस्लिम थे। किन्तु इन तुमन्लू शासकों ने भी कला को अभिशाप-मुक्त नहीं किया। गजनवी (६६८-१०५०) और सलजू (१०३६-११५७) वंशों के शासन काल में भी काली घटायें वैसी ही छायी रहीं। महमूद गजनवी मूर्ति-

भंजक के नाम से मशहूर था, तो भी उसके काल में **फिरदौसी** जैसा महान् कवि शाहनामा जैसी अमर कृति रचने में समर्थ हुआ। **करा-खिताई** (११२४-१२१८) और ख्वारेज्मशाह (१०७७-१२३१) के बाद मंगोलवंश ने अपने शासन की स्थापना की। अधिकांश मंगोल सम्राट् मुसलमान न थे और उनके कठोर शासन में इस्लामिक धर्मान्धता को उतना हस्तक्षेप करने का अवसर न मिला। उनके उत्तराधिकारी तैमूरवंश (१३७०-१५००) का धर्म यद्यपि इस्लाम था, किन्तु राज-काज में उनकी नीति बड़ी उदार थी। यह वंश राजनीति में शरीअत से भी अधिक महत्त्व चिंगिज खान के राजनियमों को देता था। बाबर इसी उदार राजनीति को लेकर हिन्दुस्तान आया था और उसके वंशजों ने शाहजहाँ के समय तक अपने पूर्वजों का अनुगमन किया। मंगोल वंश की कला-सम्बन्धी उदारता ने ललितकला के विकाश में सहायता पहुँचाई और वह तैमूर वंश के समय कई दिशाओं में आगे बढ़ी। तैमूर के शासनकाल (१३७०-१४०४ ई०) में टेढ़ीमेढ़ी अरबी लिपि से एक सुन्दर लिपि का आविष्कार हुआ, जिसे हम फारसी या **नस्तालीक** कहते हैं। नवाई के समय चित्रकला अपनी पराकाष्ठा पर पहुँची और उसी को आगे हिन्दुस्तान लाकर मुगल-चित्रकला के रूप में विकसित किया गया।

(?) *नाट्यकला*—

नाट्यकला का समय तब तक नहीं आया, जब तक कि सोवियत की महाक्रान्ति ने मध्य-एसिया की काया पलट नहीं कर दी। महाक्रान्ति ने कला-क्षेत्र की सारी बाधाओं को दूर कर दिया, और तारा **ईशानतुरायेवा** जैसी कलाकार तरुणियों ने जान पर खेलकर उज्बेक-नाट्यकला की प्राणप्रतिष्ठा की। आज उज्बेकिस्तान में ४५ नाट्यशालायें हैं। ताशकन्द के **नवाई थियेटर** की इमारत समूचे मध्य-एसिया की कतिपय भव्य इमारतों में से है। उज्बेक थियेटर सिर्फ अपने ही नाटकों को नहीं खेलते, बल्कि रूसी तथा पश्चिमी यूरोप के प्रसिद्ध नाटकों का भी अभिनय करते हैं।

हमजा थियेटर ताशकन्द की एक प्रसिद्ध नाट्यशाला है। १९४६ में जब ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के प्रतिनिधि-मेम्बर ताशकन्द पहुँचे, तो उन दिनों वहाँ महाकवि शेक्सपियर का 'ओथेलो' चल रहा था। अबरार हिदायतोफ ने उसमें 'ओथेलो' का पार्ट लिया था और सारा ईशानतुरायेवा ने 'डेसडिमोना' का। ब्रिटिश प्रतिनिधियों ने अभिनय को बहुत पसन्द किया था, यद्यपि भाषा उज्बेकी होने से वह वार्तालाप को समझ नहीं रहे थे। रंगमंच की सजावट अभिनेताओं-अभिनेत्रियों के चुनाव, उनका अभिनय सभी उच्चकोटि का था। रंग का वातावरण बिल्कुल शेक्सपियर-युगीन था। दर्शकों को मालूम होता था, वह अभिनय नहीं बल्कि अपने सामने वास्तविक घटना को ही देख रहे हैं। ओथेलो और डेसडिमोना के रोल में एक तरह की सौन्दर्यपूर्ण नवीनता दिखलाई दे रही थी। अबरार ओथेलो की भूमिका में एक सच्चा प्रकृति-पुत्र प्रेमी बनकर उतरा था। वह धीर उदात्त नायक की तरह निम्न श्रेणियों की चालबाजी से अपने को ऊपर रखे हुए था। 'प्रकृति-पुत्र' से यह तात्पर्य नहीं कि ओथेलो जंगली था। नहीं सारा, डेसडेमोना की भूमिका में ओथेलो के प्रति अपना मादक प्रेम प्रकट कर रही थी---ऐसा मादक कि 'गणयन्ति नैव वनिता दयिताभिमुखेन हृदयेन'। बाधाओं की चट्टानें उसके रास्ते को रोक नहीं सकती थीं। इसके लिए वह अपने पिता की इच्छाओं की भी परवाह नहीं कर रही थी।

हमज़ा थियेटर १९२१ में स्थापित हुआ था। तब से उसने ओथेलो के अतिरिक्त सैकड़ों अन्यान्य सुन्दर नाटकों का अभिनय किया है। इस थियेटर का इतिहास मध्य-एसिया में नाट्यकला के क्रम-विकास का इतिहास है। उज्बेक जाति रूसी साम्राज्य की एक पिछड़ी हुई जाति थी। किन्तु क्रान्ति ने सभी दृष्टि से उसे एक समुन्नत प्रजातन्त्र बना दिया। १९४६ में वहाँ ४५ नाट्यशालाओं ४२० सिनेमाघरों का होना इसी उन्नति का परिचायक है। इस थियेटर का नाम संस्थापकों में से एक हमज़ा हकीमजादा नियाज़ी के नाम पर पड़ा। हमजा

उज़्बेक सोवियत साहित्य और नाटक-रचना का पिता समझा जाता है। हमज़ा थियेटर ने उज़्बेक नाट्यकला की सबसे अधिक सेवा की। इसी ने गफ़ूर गुलाम, आइबेक, उइगुन, यशीन जैसे नाटककार पैदा किये। हमज़ा ने अपनी कृतियों में क्रान्ति-विरोधियों के स्वार्थों पर निष्ठुर प्रहार किया और इसके लिये शत्रुओं ने हत्या करके उसका नाम तक मिटा देना चाहा। लेकिन हमज़ा अब भी अपनी कृतियों और अपने द्वारा स्थापित नाट्यशाला के रूप में जीवित है। उज़्बेकिस्तान के नाट्यकार और अभिनेता उसके काम को और आगे बढ़ा रहे हैं। यशीन उमरी का लिखा 'हमज़ा' (नाटक) इस थियेटर में खेला गया।

स्मरण रखना चाहिये कि हमज़ा और उसके साथियों के आने से पहले उज़्बेक भाषा की न कोई नाट्यशाला थी, न नाटक ग्रन्थ। हमज़ा थियेटर ने सिर्फ नये नाटकों का ही सृजन नहीं किया, बल्कि उसने विश्व के महान् नाटक-कारों से जनता का परिचय कराया। रंगमंच पर शेक्सपियर का 'ओथेलो', गोज़ी का राजकुमारी तुरानदात; दे-वेग का 'लोरेन्सिया, गोगल का 'इन्सपेक्टर जेनरल', ओस्त्रोव्स्की का 'तूफ़ान' वे दहेज़ की 'दुलहन' और गोर्की का 'ईगर बूलीचेफ' खेले गये। इसी रंग-मंच पर उज़्बेक-जनता ने पहले पहल शिलेर, बोमार्शे और मोलियेर की अमर कृतियों का दर्शन किया। हमज़ा थियेटर और उज़्बेकिस्तान की नाट्य-कला की २६ साल में इतनी उन्नति का एक बड़ा कारण रूसी कलाकारों का सहयोग भी है। प्रथम अभिनेताओं को मानियन उइगुर का पथ-प्रदर्शन प्राप्त था। थियेटर को इस बात का अभिमान है, कि उसने अखिल-सोवियत-जन-कलाकार हलीमा नासि-रोवा और कुदरत खोजायेफ जैसे उज़्बेक कला-जगत की महान तारकों को पैदा किया। उज़्बेक थियेटर इन्स्टीट्यूट (नाट्यप्रतिष्ठान) की स्थापना में भी हमज़ा थियेटर का हाथ है। यह नाट्यकला का उच्च शिक्षणालय है।

अखिल सोवियत सरकार ने दूसरी बातों की तरह थियेटर-निर्माण में भी उज़्बेक जनता की सहायता की। सबसे बड़ी सहायता यह थी जो कि मास्को के

बख्तनगोफ थियेटर ने अपने यहाँ उज्बेक अभिनेताओं के लिए ३ साल का कोर्स स्थापित किया। हमज़ा थियेटर के आज के सभी प्रमुख अभिनेता बख्तनगोफ़ स्कूल के छात्र रह चुके हैं।

ओपेरा-बैलेत-थियेटर—ताशकन्द में राजकीय ओपेरा-बैलेत-थियेटर एक नया सुन्दर थियेटर है। युद्ध के दिनों में भी इसके मकान का निर्माण स्थगित नहीं हुआ। उज्बेकिस्तान के कोने कोने से चतुर शिल्पी इसमें काम करने के लिये आये। हर एक जिले ने अपने यहाँ से सुन्दर निर्माण-सामग्री भेजी—खासकर संगमर्मर के शिलाखण्ड। मकान बन जाने पर जब भीतर सजाने का काम शुरू हुआ, तो उस वक्त भी हर जिले ने भाग लिया।

थियेटर की इमारत का नक्शा सोवियत् के प्रसिद्ध वास्तुशास्त्री अकदमिक स्चुशेफ ने बनाया। इमारत का ढंग प्राचीन उज्बेक इमारतों जैसा है, जिनमें तैमूर के समय के समरकन्द, बुखारा आदि नगरों से विचार लिये गये हैं। जहाँ यह थियेटर बना है, वहाँ कभी हाट का बहुत भद्दा दृश्य दिखलाई पड़ता था। किन्तु आज वह उज्बेक राजधानी का बहुत ही सुन्दर भाग है। नाट्यशाला के भीतर सजाने में, खासकर रंग-मंच को सजाने में उज्बेक कलाकार अपनी स्पृहणीय निपुणता का परिचय दे रहे हैं। मेहराबी छत से लेकर ऊपरी दर्शक-उपवेशनी तक अलबास्तर पत्थर पर सुन्दर भास्कर्य का परिचय दिया गया है, और हर जगह एक दूसरे से भिन्न रेखांकनों का अंकन हुआ है। सभी काम उन उज्बेक शिल्पियों ने किया है, जिनके कि कुल में वंश-परम्परा से यह शिल्प चला आ रहा था। उज्बेकिस्तान में भी यह शिल्प एक जिले से दूसरे जिले में अन्तर रखता है। बुखारा की शिल्प-शैली फर्गाना उपत्यका की शिल्प-शैली से भिन्न है। इसी तरह इन दोनों का खारेज्म के प्राचीन वास्तु-अलंकारों से अन्तर है। किन्तु तो भी सब में एकजातीयता के द्योतक कितनी ही बातें हैं।

एक स्थान पर अलबास्तर पर उत्कीर्ण अलङ्करण का काम बुखारा के सर्वश्रेष्ठ शिल्पियों में से एक सीरीं मुरादोफ के हाथ से हुआ है। सीरीं उज्बेक साइन्स-अकदमी का आनरेरी सदस्य है। बहुत साल पहले अमीर-बुखारा की आज्ञा से मुरादोफ ने अमीर के एक प्रसिद्ध ग्रीष्म-प्रासाद की शालाओं को अलंकृत किया था। नाट्यशाला के एक स्थान पर खारेज्म-शैली का प्रयोग किया गया है। नाट्यशाला के कुछ कमरों को कवि अलीशेर नवाई की कृतिओं से लेकर चित्रित किया गया है। फूल-पत्तियों का काम चित्रकार चिंगिज अहमरोफ ने किया है। इसके लिए रंग बनाने में प्राचीन उज्बेक-परिपाटी के अनुसार अंडे की सफेदी से काम लिया गया है।

इमारत के कुछ हिस्सों को रंगीन मजोलिका से ढाँका गया है। यह कला १५वीं १६वीं सदी की इमारतों में इस्तेमाल की गई थी, किन्तु पीछे लुप्त हो गई। अब अनुसन्धान द्वारा उसका फिर से पता लगाया गया और मजोलिका-पट्टी बनाने के लिए एक कारखाना खासतौर से इस थियेटर के वास्ते तैयार किया गया।

उज्बेक नारियों ने भी अपने सूई के काम से नाट्यशाला की शोभा बढ़ाने में भाग लिया है और रंग-मंच के लिये सुन्दर मखमल पर स्वर्ण-सूत्रों से बेल-बूटे निकालकर पर्दा तैयार किया। नाट्यशाला के भीतर कई सेर सोना अलंकार और चित्रण के काम में लगाया गया है।

नाट्यशाला के द्वार पर एक विशाल कुण्ड और फौवारा बनाया गया है, जिसके जल में नाट्यशाला की इमारत प्रतिबिम्बित होती है।

इस नाट्यशाला का उद्घाटन १९४६ के जाड़ों में हुआ।

(२) लोक-कला—

कला में पिछड़ी जातियाँ—जो साथ ही साथ अपने को सभ्य समझने

का दम भरती हैं—लोककला की महिमा को समझ नहीं सकतीं। उनके लिये लोककवि, लोकगायक, लोकनर्तक, लोक-कहानीवाचक, लोक संगीतकार, लोक-नाट्यकला सभी हेय और तुच्छ चीज हैं। कला की ओर अग्रसर होने का प्रथम प्रमाण है, लोककला के प्रति प्रेम।

उज्बेकिस्तान अपनी लोककला से बहुत प्रेम करता है। १९४६ में वहाँ एक विशाल लोककला-प्रदर्शन हुआ, जिसमें २,००० चुने हुए कलाकारों ने प्रजातन्त्र के भिन्न भिन्न भागों से आकर भाग लिया। बृहत् प्रदर्शन के पहले जिले-जिले में हजार से ऊपर टोलियों और २० हजार कलाकारों ने अपना कौशल दिखलाया था। इनमें से चुने गये २ हजार कलाकार ताशकन्द के बृहत्-प्रदर्शन में भाग लेनेके लिए आये थे। इस तरह की पहली प्रदर्शनी १९३८ में हुई थी। लड़ाई के आजाने से बीचमें दूसरी प्रदर्शनी न हो सकी। पहली प्रदर्शनी के फलस्वरूप ३०० कलाकारों को अपनी शिक्षा और योग्यता बढ़ाने का अवसर मिला। अखिल सोवियत की इस विषय की संस्था की तरह उज्बेकिस्तान का भी अपना प्रजातन्त्रीय लोककला भवन है। इसके डायरेक्टर मिर्जा अहमद हुसेनबयेफ ने इस दूसरी प्रदर्शनी के बारे में कहा था—"वर्तमान प्रदर्शनी ने सिद्ध कर दिया, कि युद्ध के कठिन दिन होते भी उज्बेक लोककला ने अपने विकास की तीव्रगति को कायम रखा ...।" उज्बेकिस्तान में लोक-नृत्य सब से मुख्य कला है। इन नृत्यों की जड़ अत्यन्त प्राचीनकाल तक जाती है। इनकी विशेषता है—आश्चर्यजनक कोमलता और लचक के साथ तान और तान पर नर्तन। इस प्रदर्शनी ने यह भी बतलाया कि आजकल की उज्बेक कला प्राचीन परम्परा की उत्तराधिकारिणी है।

प्रदर्शनी के प्रोग्राम में कितने ही मौखिक गान के प्रोग्राम भी थे। गाये गीतों में कितने ही पुराने गीत थे और कितने ही आजकल कारखानों और कल-खोजों में गाये जानेवाले लोगों ने सभी गीतों को पसन्द किया।

हुसेनबयेफ ने यह भी कहा "उज्बेक लोक-कला की एक विशेषता

यह है, कि वह गुड़ियों की कला की तरह रूढ़ि से बद्ध नहीं है और अपनी जातीय विशेषता को रखते हुए भी नये भावों और रूपों को ग्रहण करने में समर्थ है।"

प्रदर्शनी में शामिल होने वाली टोलियों में कुछ नाटक-टोलियाँ भी थीं; जिन्होंने उज्बेक नाटकों के अतिरिक्त कितने ही यूरोपीय-नाटकों का भी अभिनय किया। इनमें ताशकन्द कपड़ा-मिलों की नाटक-मण्डलियों ने गोर्की के "ईगर बुलिचेफ" शिलर के "प्रेम और ईर्ष्या" आदि नाटकों को खेला।

प्रदर्शनी के फलस्वरूप ५० प्रतिभाशाली कलाकार हाथ आये, जिनको सरकारी छात्रवृत्ति देकर विशेष शिक्षा के लिए कला-विद्यालयों में भेज दिया गया।

(३) कलाकारिणी तमारा खानम्--

तमारा खानम् सोवियत् लोकगीतों की गायिका है, इतना कहने से इस प्रसिद्ध कलाकारिणी के महत्व को नहीं समझा जा सकता। वह एक मधुर गायिका ही नहीं है, बल्कि नृत्यकला और अभिनय-कला में भी अत्यन्त कुशल है। आजुरबायजान के प्रसिद्ध संगीत-नाटक "अर्शिन मलालान" में उसका अभिनय कमाल का हुआ था। "गुल-अन्दाम" और "फरंजी" के प्रसिद्ध उज्बेक मूक नाटकों (बैलेत) में नृत्य का प्रमुख भाग उसका था।

१९४६ में ताशकन्द के ओपेरा-बैलेत-थियेटर ने अपना २५वाँ वार्षिकोत्सव मनाया। इसी साल तमारा ने भी अपने कला-जीवन की २५वीं वर्षगाँठ मनाई। २५ साल पहले कुछ उज्बेक तरुणों ने—जिनमें तमारा भी एक थी—एक लोक-नाट्य-मण्डली बनाई, जिसका विकास आगे चलकर राजकीयओपेरा-बैलेत-थियेटर के रूप में हुआ। तमारा नाटक-मण्डली की प्रधान नटी और मूक-नाट्य-संचालिका थी। ओपेरा-नाट्यकला के

अग्रदूतों में कारी याकूबोफ, हलीमा नासिरोवा और मुकर्रमा तुर्गुनबयेवा के साथ तमारा का नाम प्रथम आता है।

१९३६ के बाद से तमारा ने अपना सारा समय कंसर्त रंगमंच में लगाना शुरू किया। पिछले दस सालों में उसकी गीतों और नृत्यों में सोवियत् की बहुत-सी जातियों की कृतियाँ शामिल हुई हैं। अपने मध्य-एसिया की जातियों के गीतों और नृत्यों को ही अपने प्रदर्शन का रूप नहीं बनाया, बल्कि काकेशस की जातियों, रूसी, उक्रइनी और बेलोरूसी गीत-नृत्य भी उसने प्रदर्शित किये।

वाद्य के साथ अकेले या दो मिलकर गाना और नाचना उज्बेक-लोक-कला का एक बहुत प्राचीन और बहुप्रचलित रूप है। आज यह गीत-नृत्य गाँव की हरियाली तक ही नहीं रह गया है, बल्कि वह रंगमंच पर भी समादृत है। इस कला की एक विशेषता यह है कि गीत और नृत्य एक साथ नहीं चलते। गाये गीत से नृत्य एक अलग चीज है। तमारा ने एक नई शैली का आविष्कार किया है, जिसमें नृत्य और गीत एक ही कला-प्रदर्शन के अभिन्न अंश होते हैं। उसके मत से संगीत, शब्द, भाव-भंगी और वेश-भूषा सभी एक ही विषय की व्याख्या करते हैं।

नेपथ्य-परिवर्तन में तमारा का सूक्ष्म-परिज्ञान और अभिरुचि बड़ी ही महत्वपूर्ण होती है। नेपथ्य-परिवर्तन को तमारा ने उच्चकला का रूप दिया है। जब वह अपने वेष को बदलती है, तो उसका यह परिवर्तन ऊपरी नहीं होता, बल्कि सारा व्यक्तित्व परिवर्तित हो जाता है। जब वह उक्रइनी वेष धारण करती है, तो बिल्कुल उक्रइनी सुन्दरी बन जाती है और उसमें ताजिक या तुर्की समानता का लेशमात्र नहीं रह जाता। लेकिन तो भी तमारा की अपनी विशेषता उक्रइनी, ताजिकी या तुर्की भेष में भी बनी रहती है। प्राची का माधुर्य, आँखों की अद्वितीय लीला-भंगी, नृत्य में अत्यन्त मृदु लचक,

५५. उज़बेकिस्तान जनकलाकारिणी तामारा ख़ानम् (पृष्ठ १७१)
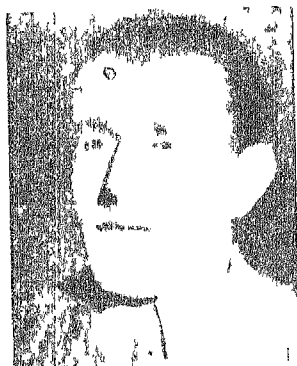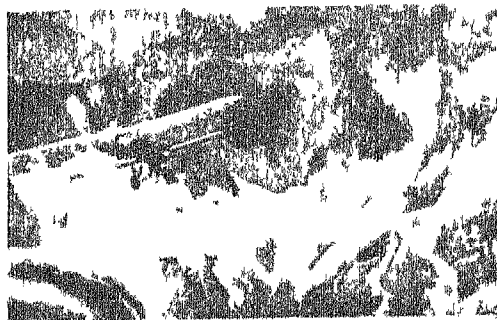
विशेषकर अँगुलियों और हाथों का चालन सभी मिलकर उसके नृत्य को एक अद्भुत सौन्दर्य प्रदान करते हैं।

तमारा खानम् पहले-पहल १९१९ के अन्त में मंच पर आई, लेकिन एक पेशेवर अभिनेत्री के तौर पर नहीं। इस्लामी शरीयत अपरिचित व्यक्ति के सामने उज्बेक स्त्री को आने की आज्ञा नहीं देती थी। उन दिनों उज्बेक लड़कियाँ घर की चहार-दिवारी में बन्द रहती थीं—पहले माँ-बाप के घर में, फिर पति के घर में। स्त्री के लिए विचार और कार्य-स्वतंत्रता अक्षम्य अपराध समझी जाती थी, उसे युगों से चले आये आचार-व्यवहार के विरुद्ध महापाप समझा जाता था। तमारा पहली उज्बेक स्त्री के तौर पर रंगमंच पर आ उस महान् अपराध की भागिनी हुई। शरीयत की अवहेलना करने का मतलब था, मृत्यु का आह्वान करना। तमारा ने उस वक्त अपने अदम्य उत्साह का प्रदर्शन किया। उज्बेकिस्तान में उस वक्त बहुत से प्रति-गामी थे, जो तमारा के जान के गाहक थे।

आज उज्बेकिस्तान की औरतें सोवियत्-संघ के दूसरे प्रजातंत्रों की औरतों की तरह समाज में एक सम्माननीय स्थान रखती हैं; वह कला तथा साइन्स के एक क्षेत्र में भाग ले रही हैं। आज यह समझना भी मुश्किल है, कि कला के हर इन अग्रदूतों को कैसे-कैसे संकटों से पार होना पड़ा। सोवियत् सरकार ने स्त्रियों को अधिकार और स्वातन्त्र्य प्रदान किये थे, किन्तु उससे लाभ उठाना इतना आसान नहीं था।

क्रान्ति के बाद कई साल तक तमारा अकेली उज्बेकिस्तान की अभि-नेत्री थी और उस वक्त के सभी नाटकों में स्त्री का पार्ट उसे लेना पड़ता था। पहिले उसने फर्गाना के एक रेशम के कारखाने की तीन स्त्रियों को संगीत-मण्डली में लाने में सफलता पाई; किन्तु उनमें से एक खलचा खानम तथा उसके पति को उनके सम्बन्धियों ने मार डाला—पति का अपराध यह था कि उसने

अपनी स्त्री को रंग-मंच पर आने की अनुमति दी। बाकी दो स्त्रियों ने डर-कर मण्डली को छोड़ दिया। उसके बाद थोड़े ही दिनों में उज्बेकिस्तान की संस्कृति और कला इतनी तेजी से आगे बढ़ी, कि दूसरी परिस्थितियों में उसे एक शताब्दी की आवश्यकता होती। तमारा भी उन आरंभिक दिनों से बहुत आगे बढ़ी। १९२१ में वह एक रूसी ओपेरा (पद्यमय-नाटक) में भाग ले रही थी। चन्द सालों बाद वह मास्को में वेरा में के स्टुडियो में अध्ययन कर रही थी। रूस के प्रसिद्ध कला-स्कूल की शिक्षा ने उसके नृत्य को पूर्णता प्रदान की, किन्तु साथ ही उसे अपने शुद्ध जातीय स्वरूप से भ्रष्ट नहीं होने दिया। रूसी वैलेत (मूक-नाट्य) से उसने बहुत-सी नृत्य की बारीक चीजें सीखीं। उसने मास्को और सोवियत् के दूसरे नगरों का कई बार चक्कर लगाया। १९२४ में उसने पेरिस की विश्व-प्रदर्शनी में अपनी कला का प्रदर्शन किया और लन्दन के अन्तर्राष्ट्रीय नृत्य-महोत्सव में १९३४ में उसकी बड़ी प्रशंसा हुई। देश विदेश के कलाकारों और उनकी कलाओं के परिचय से उसने बहुत लाभ उठाया।

तमारा खानम् यूरोपीय-कला से सीखने में संकोच नहीं करती। वह उनकी कुछ चीजों को लेती है, किन्तु सदा एक उज्बेक कलाकार की तरह अपनी मौलिकता को हाथ से नहीं जाने देती। अंगुलियों और बाहों के चालन में उज्बेक और ताजिक नर्तक की कोमलता सदा तमारा के नृत्य का एक भाग रहती है। तमारा के दिल में लोक-गीत और लोक-कला का अत्यन्त प्रेम है। वह लगातार अपनी कला को विकसित करने में लगी रहती है। उसने एक बार कहा था "कंसर्ट कर लेने के बाद तुम मुझे संतुष्ट नहीं पाओगे। हर बार इससे पहले कि मैं रंगमंच पर दौड़ूँ, घंटी बजे और दर्शक-मण्डली अपनी जगह पर आये, एक बार मैं फिर सारे पार्ट को फिर से दुहराती हूँ। मैं अपने गीत और नृत्य में कितने ही तरह का परिवर्तन करती हूँ। यह काम मैं हर एक अभिनय के बाद करना चाहती हूँ।"

यद्यपि तमारा को भिन्न-भिन्न तरह के बहुत से पार्ट और गीत-नृत्य याद हैं, तो भी वह नये-नये गीतों और नृत्यों पर काम करती रहती है। नई चीज के सृजन में उसे बड़ा आनन्द आता है।

तमारा के दिल में अपने सोवियत् देश के प्रति बड़ी भक्ति है। युद्ध के समय अपना सारा समय वह देश-रक्षा-सम्बन्धी कामों में लगाती थी। उसने युद्ध-क्षेत्र में जाकर सैनिकों के सामने अपनी कला का अनेक बार प्रदर्शन किया और देश में लोगों के सामने उत्साह का संचार किया। एक बार उसने ऊराल के एक टैंक कारखाने में अपनी कला दिखलाई कमकरों ने उसी वक्त तैयार होकर आये टैंक को तमारा-खानम् टैंक नं० ७७ नाम दिया।

तमारा खानम् ने नये बनते कारखानों, फैक्टरियों, मिलों और कलखोजों में अपनी कला द्वारा कर्मियों का मनोरञ्जन किया। वह ईरान, सुदूर-पूर्व काकेशस और मंगोलिया गई। उसने प्रशान्त महासागर, कालासागर और बाल्तिक सागर के नौसैनिकों, हंगरी और आस्ट्रिया के सैनिकों तथा अस्पतालों के रोगियों के लिये गीत और नृत्य किये। मातृ-मुक्ति-युद्ध में डेढ़ हजार से अधिक कला-प्रदर्शन तमारा ने किये।

तमारा को अपनी कला के लिये सर्वश्रेष्ठ स्तालिन-पुरस्कार मिला। वह उज्बेक पार्लियामेंट की दोबारा मेम्बर चुनी गई। तमारा ने एक बार कहा—'मेरी सारी कला और शिल्प-चातुरी मेरा सारा जीवन मेरी जनता का है। एक सोवियत कलाकार की तरह मेरे जीवन का उद्देश्य है सोवियत-प्राची की नारियों के सांस्कृतिक तल को ऊँचा करना, उनकी आध्यात्मिक रूचि को बढ़ाना और उनके जीवन को अधिक सौन्दर्यपूर्ण बनाना।

उस वक्त लड़ाई घमासान चल रही थी। मास्को-ताशकन्द की ट्रेन जुस्सली स्टेशन पर पहुँची। बैठे-बैठे ऊब गये मुसाफिर टाँग फैलाने के लिए प्लेटफार्म पर उतरे। एक सैनिक ट्रेन बगल में खड़ी थी, जिसमें उज्बेक, ताजिक, तुर्कमान तरुण सैनिक, युद्ध के मैदान में जा रहे थे।

स्टेशन के प्लेटफार्म पर एक लम्बी सुन्दर नारी टहल रही थी। एक उज्बेक तरुण सैनिक सामने से आ रहा था। नारी को देखते ही वह बोल उठा—'तमारा आपा (बहन)!' यह सुनकर दो और तरुण आ पहुँचे, फिर तीन और इस तरह ज़रा ही देर में नारी की चारों ओर एक मण्डली जमा हो गई। सभी सम्मान और उत्साह के स्वर में कह रहे थे—'ऐ तमारा आपा! ऐ तमारा जान!!' अन्त में एक तरुण सैनिक ने हिम्मत करके कहा—'सलाम, तमारा आपा!'

तमारा ने प्रति-अभिवादन किया और उनसे उनके जन्म-स्थान का नाम पूछा। 'मर्गेलान से' एक ने कहा, और 'मैं खोकन्द से' दूसरे ने कहा, 'मैं फर्गाना का हूँ' 'हम ताशकन्द के' 'मेरा जन्मस्थान लेनिनाबाद है; दूसरों ने उरातप्पे इस्कारी, समरकन्द और बुखारा का नाम लिया।

अब तक प्लेटफार्म पर काफी भीड़ जमा हो गई थी। किसी ने ऊँचे स्वर में कहा—'तमरा जान! कोई गाना सुनाओ' चारों तरफ से वही आवाज आई फिर तमारा ने कहा—बहुत अच्छा, मैं तुम्हें गाना सुनाती हूँ।

तमारा गाड़ी के पावदान पर चढ़ गई। एक काले बालों वाली सुन्दरी जिसके सीने पर कई सरकारी पदक लटक रहे थे, साथ ही एक छोटा सा लाल भण्डा लगा हुआ था, जो बतला रहा था, कि वह उज्बेक पार्लियामेंट की मेम्बर है। तमारा ने गाना शुरू किया। उसने उज्बेक, ताजिक और तुर्कमान लोक गीत गाये और बहुत ही भावपूर्ण मधुर स्वर में। सारी जनता का सिर झूम रहा था। स्टेशन-मास्टर झंडी हाथ में लिये हिलाना चाहता था, लेकिन श्रोतृ-मण्डली के भावों को देखकर उसे रुकना पड़ा। इंजन-ड्राइवर को इसका पता न था। वह देर के लिये अधीर हो सिगनल दे रहा था। अन्त में स्टेशन की घंटी बजने लगी और ट्रेन धीरे धीरे आगे बढ़ी।

'विदा प्रिय बन्धुओ, तमारा ने खिड़की से कहा, 'लौट के आना, बीरो हम जल्दी ही फिर मिलेंगे।'

लोग ट्रेन के साथ साथ हाथ हिलाते प्लेटफार्म के अन्त तक गये। कितनों ने फूलों के गुच्छे गाड़ी में फेंके।

१४. कराकल्पक स्वायत्त-प्रजातन्त्र

कराकल्पक स्वायत्त-प्रजातन्त्र आराल-समुद्र के किनारे उज्बेकिस्तान का एक स्वायत्त प्रजातन्त्र है। कराकल्पक लोग तुर्कों के "सुवर्ण-उर्दू" के नगाइ कबीले से सम्बन्ध रखते हैं और घूमते-घामते आकर इस २ लाख ६ हजार वर्ग-किलोमीतर के विशाल प्रदेश में बस गये। इनके देश का अधिक भाग रेगिस्तान है। क्रान्ति से पहले यह मध्य-एसिया की सबसे पिछड़ी जातियों में थे—संस्कृति और शिक्षा दोनों में बहुत ही पिछड़े हुए थे। इनकी भाषा की न कोई लिपि थी न कोई लिखित साहित्य ही। उज्बेक-भाषा से इनकी भाषा में अन्तर है, और सोवियत् सरकार की जातियों के प्रति साधारण नीति के अनुसार इनकी भाषा का अलग क्षेत्र मानकर उसे स्वायत्त-शासन का अधिकार मिला। अपने प्रजातन्त्र में उनके गाँव, इलाके और जिले की शासन-संस्थाएँ-सोवियतें हैं। उनकी अपनी पार्लियामेंट है, जो सारे प्रजातन्त्र का शासन करती है। इसके अतिरिक्त उज्बेक पार्लियामेंट में भी इनके मेम्बर जाते हैं। अखिल सोवियत् के महापार्लियामेंट के जातीय-भवन में इनके ११ मेम्बर होते हैं और संघ-भवन में भी संख्यानुसार मेम्बर चुने जाते हैं।

७ वर्ष की अनिवार्य-शिक्षा अपनी मातृ-भाषा द्वारा दूसरे प्रजातंत्रों की तरह यहां भी दी जाती है, और आजकल पुराने घुमन्तुओं की इन सन्तानों में बहुत कम ही नर-नारी अपढ़ हैं।

४० हजार कराकल्पक कल-खोजियों ने मिलकर लेनिन-नहर बनाई। कपास यहाँ की मुख्य खेती है, जिसकी फसल पिछले २० वर्षों में तीन गुनी हो गई। यहाँ इतना अनाज पैदा होता है, कि खाने से अधिक होने से उसे दूसरे प्रजातन्त्रों में भेजा जाता है। पिछले चन्द वर्षों में यहाँ ढोर दुगने और भेड़-बकरियाँ तीन गुनी हो गईं।

फलों के टिन में बन्द करने और मक्खन निकालने के यहाँ कई कारखाने हैं। आमू दरिया के मुहाने पर अराल-समुद्र के तुइनक द्वीप में सोवियत् की एक बहुत बड़ी मछली-मांस की फैक्टरी काम कर रही है।

राजधानी नुकुस में जूते-पोशाक के कारखाने और एक बड़ी कपड़ा-मिल है।

कराकल्पकों में अब अध्यापक, इंजीनियर और डाक्टर बड़ी संख्या में हैं। १९४५ में उज्बेक साइन्स-अकदमी की एक बैठक नुकुस में हुई थी, जिसमें प्रजातंत्र के आर्थिक और सामाजिक विकास पर कई निबन्ध पढ़े गये, जातीय इतिहास, भाषा और साहित्य के सम्बन्ध में बहस की गई। उज्बेक साइन्स-अकदमी ने उस्त उर्त के निर्जनप्राय महामैदान की सर्वे के लिये अभियान भेजे। जिससे मालूम हुआ कि वहाँ बहुत विशाल चरागाहें हैं। विद्वानों ने इस सम्मेलन में आमू-दरिया के जल पर भी विचार किया और हानिकारक बाढ़ के रोकने के लिये बाढ़ के पानी को जमा करने के तरीके पर सोच-विचार किया। पुरातत्त्व सम्बन्धी अन्वेषकों से मालूम हुआ, कि प्राचीन समय में उस्त-उर्त में भारी जन संख्या में लोग बसते थे, किन्तु पीछे कबीले के युद्धों और शासन की दुर्व्यवस्था से पुरानी बस्तियाँ उजाड़ हो गईं। वहाँ पशुओं के लिये अपार घास-राशि ही नहीं है, बल्कि जमीन के नीचे पर्याप्त पानी भी है। आमू-दरिया की समस्या पर विचार करते वक्त खासतौर से बहुतायत से आनेवाली बाढ़ों और डेल्टा में नदी के प्रवाह-परिवर्तन पर विचार किया गया। साइन्सवेत्ताओं ने बतलाया, कि आमू-दरिया प्रतिवर्ष ८ करोड़ ६० लाख घन-मीतर मिट्टी अपने मुँह पर लाकर छोड़ती है, जिससे नदी की धार अधिक उथली और उसका प्रवाह अस्थिर होता गया है। इसके लिये विशाल बाँध बँधाने का सुझाव पेश किया गया; किन्तु यह बहुत खर्चीली चीज तुरन्त काम में नहीं लायी जा सकती, इसलिये दूसरे कामों पर बहस हुई। एक योजना यह है, कि आमू-दरिया के ऊपरी भाग में कराकल्पक से २५०० किलोमीतर दूर एक

प्रकाण्ड जलनिधि बनाई जाय। दूसरा सुझाव यह है, कि बाढ़ के पानी को कराकुम रेगिस्तान में ले जाकर एक कृत्रिम झील बनाई जाय, जिससे निर्जल बयाबान को खेत के रूप में परिणत किया जा सके।

सम्मेलन में कराकल्पक-भाषा पर भी कितने ही निबन्ध पढ़े गये आधुनिक खोजों से मालूम हुआ है, कि कराकल्पक भाषा का मध्य-एसिया की पड़ोसी उज्बेक, किरगिज और कजाक भाषाओं से नजदीकी सम्बन्ध है। जनता में प्रचलित मौखिक साहित्य से कुछ बहुत ही सुन्दर विशाल वीर-गाथाओं का पता लगा है। कराकल्पक-भाषा का आधुनिक साहित्य बड़ी तेजी से बढ़ रहा है। कितने लेखकों और कवियों के ग्रंथ रूसी और दूसरी भाषाओं में अनूदित हुए हैं। एक अच्छा कराकल्पक थियेटर तैयार हुआ है, जो सफलता-पूर्वक काम कर रहा है। कराकल्पक लोगों की सर्वतोमुखीन उन्नति हो रही है। क्रान्ति से पहले यह जाति अनपढ़ थी और जन्म से मृत्यु की संख्या अधिक होने से मरणोन्मुख समझी जाती थी।

सोवियत्-काल में लेनिन-नहर और बहुत सी दूसरी नहरें बनाई गयी हैं। अकेली लेनिन नहर ने लाखों एकड़ जमीन को आबाद कर दिया है। पिछले २० सालों में खेत तिगुने हो गये हैं और ट्रैक्टरों तथा मशीनों ने उपज बहुत बढ़ा दी है।

कराकल्पक की जन-संख्या के २½ लाख आदमियों पर क्रान्ति से पहले सिर्फ एक डाक्टर था। आज वहाँ बहुत से डाक्टर और कितने ही अस्पताल हैं।

उस्त-उर्त—यह विशाल मैदान १ लाख ६५ हजार वर्ग-किलोमीतर क्षेत्र में फैला हुआ है। पास के समुद्री तल से यह ३०० मीतर (हजार फीट से अधिक) ऊँचा है। १९वीं सदी में रूसी यात्री करेलिन, बोश्चॉफ और सेवेत्सॅफ इस मैदान से गुजरे थे। वर्तमान शताब्दी के आरंभ नेउस्त्रूयेफ़

भी गया था, किन्तु हाल तक इस मैदान के बहुत से भाग अज्ञात थे और समझा जाता था, कि यह सारा रेगिस्तान ही रेगिस्तान है।

१९४६ में उज्बेक साइन्स-अकदमी का जो अभियान गया था, उसने बतलाया, कि यह रेगिस्तान नहीं है। साल के अधिक भागों में और खास कर वसन्त में सारा त्पेटो हरियाली से ढँक जाता है, लेकिन गर्मियों में घासें सूख जाती हैं। घासों के अतिरिक्त वहाँ छोट-छोटी झाड़ियाँ भी बहुत हैं। अभियान ने यह भी सिद्ध किया, कि वहाँ पर पहले बहुत सी मानव बस्तियाँ थीं। त्पेटो के उत्तरी भाग में नव-पाषाण-युग के मानव के चिह्न मिले हैं। और जगहों पर पीछे के भी कितने ही चिह्न हैं। कुछ छोटी-छोटी समाधियाँ मिली हैं, जो अपने ढंग की नई चीज हैं। यह चौकोर दीवार पर मेहराबदार छत डाल कर बनाई गई हैं। इनके बनाने में रंगीन चूना-पत्थर की अनगढ़ पट्टियाँ इस्तेमाल की गई हैं। मध्य-एसिया में इस तरह का वास्तु-शिल्प और कहीं नहीं पाया गया।

निरभ्र नीले आकाश के सामने यह समाधियाँ बहुत दूर से दिखलाई पड़ती हैं। इन पर खुदे अभिलेखों से यह भी पता लगता है, कि घुमन्तू होने पर भी इन कबीलों ने संस्कृति में कुछ प्रगति की थी। त्पेटो में बहुत से कुँये भी मिले हैं, जिससे मालूम होता है, कि इससे होकर कितने ही कारवाँ-पथ उत्तर से दक्षिण को जाते थे।

उपलब्ध सामग्री से पता लगता है कि यहाँ के निवासी पशु-पालक थे। वह अपनी भेड़ों और ढोरों को लिये गर्मी में उत्तर की तरफ जाते, तथा बाकी समय में दक्षिण की ओर। हर साल वह इस तरह सैकड़ों किलोमीतर की यात्रा करते थे।

उस्त-उर्त में अब फिर जीवन-संचार हो चला है। वर्तमान पंच-वार्षिक योजना में यहाँ के लिये कराकल्पक प्रजातन्त्र ने एक बड़ा प्रोग्राम

बनाया है। यहाँ के चरागाहों में इतनी घास है, कि जिससे बहुत भारी संख्या में पशुओं का पालन किया जा सकता है। योजना में अपनी कीमती खाल के लिये प्रसिद्ध कराकुल भेड़ों को बड़े पैमाने पर पालने का प्रोग्राम बनाया गया है। ऊँटों के पालने के लिये भी यहाँ सुभीता है।

सबसे पहले यहाँ एक विशाल सरकारी फारम खोला जा रहा है, जिसके तजर्बे को पीछे बनानेवाले कलखोज इस्तेमाल करेंगे। भूँटो का कुछ भाग खारेज्म और बुखारा जिले के पशुपालों को भी उपयोग के लिये दिया जायेगा।

उस्त-उर्त्ता के विकास के लिये वहाँ कई नये ढंग की बस्तियाँ बसाई जा रही हैं। अच्छे अच्छे घर, स्कूल, अस्पताल आदि बनाये जा रहे हैं, जिनमें पशुपाल रहा करेंगे। मकान बनाने के लिये अधिकतर सामग्रियाँ यहाँ मौजूद हैं। यहाँ पर कुछ थोड़ी सी खारी झीलें हैं, जो तेजी से सूखी जा रही हैं। पानी एक समस्या है, लेकिन वह जमीन के नीचे मौजूद है। वहाँ बहुत से नये ढँग के कूयें बनाये जा रहे हैं। उस्त-उर्ता के विकास के लिये सड़कों की बहुत जरूरत है और प्रजातन्त्र सरकार ने इस काम को भी अपने हाथ में ले लिया है। अराल-समुद्र से कास्पियन-समुद्र तक फैले इस निर्जन भूँटो का भाग्य फिर जगने-वाला है।

१५. नवीन पंचवार्षिक योजना—

उज्बेक सोवियत् समाजवादी रिपब्लिक—उज्बेक स. स. र. की औद्योगिक उपज के मुख्य अंशों की योजना १९५० में निम्न प्रकार पूर्ण होगी।

फौलाद (टन)	८६,०००
कोयला (”)	११,३०,०००

पेट्रोल (")	१०,६६,०००
बिजली (हजार किलोवात)	२१,३५,०००
सुपर-फोस्फेट (टन)	३,००,०००
सीमेंट (टन)	२,७०,०००
सूती कपड़ा (मीतर)	१६,०८,००,०००
रेशमी कपड़ा (")	१,४०,००,०००
जूता (जोड़ा)	६१,५०,०००
खाद्य-तेल (टन)	१,७३,०००
दानादार चीनी (टन)	५५,०००
कच्चा-मद्य (दस-लितरा)	१३,००,०००
माँस (टन)	२०,०००
मक्खन (")	१,६०००
मछली (टन)	२२,५००

उज्बेक स० स० र० में १९४६-५० में ३ अरब ६० करोड़ रूबल की पूँजी लगाई जायेगी, जिसमें १ अरब २६ करोड़ ६० लाख रूबल ऐसे कारखानों में लगेंगे, जो प्रजातंत्र के अधीन हैं।

३ लाख ३ हजार किलोवात की क्षमतावाले बिजली के पावर-स्टेशन—जिनमें २ लाख ६ हजार किलोवात पन-बिजली के स्टेशन भी होंगे—बनाकर चालू किये जायँगे। एक फौलाद-मिल बनाकर तैयार की जायगी। एक कृत्रिम फाइबर-मिल बनाई जायेगी और दो सुपर-फोस्फेट के कारखाने बनाकर चालू किये जायँगे। फरगाना कपड़ा-मिल में २८ हजार तकुए लगाकर चालू किये जायँगे और ताशकन्द की कपड़े की मिलों में ६० हजार तकुए दी जायँगे।

कृप-मशीन के कारखानों की कार्य-क्षमता बढ़ाई जायेगी। कपड़ा-मिल की मशीनों का उत्पादन संगठित किया जायगा, और मध्यम तथा छोटी जलीय टरबाइनों और रसायनिक यंत्र-साधनों का उत्पादन बढ़ाया जायेगा। एक नये निट्रेट-खाद का कारखाना और एक ताँबे का कारखाना, तथा एक रांगे का कारखाना बनना शुरू होगा। अंग्रेन् कोयला-क्षेत्र में खान खोदने का काम तेजी से किया जायगा।

पेट्रोल के औद्योगिक स्रोतों को ६६५ नये ट्यूब बेलों द्वारा बढ़ाया जायगा। तुंगस्तेन त्रिऑक्साइड और स्वाभाविक गन्धक के व्यापारिक-स्रोतों को भी बढ़ाया जायेगा। अलमालिक ताम्र-पाषाण क्षेत्रों को काम करने के लिये तैयार किया जायगा।

प्रजातंत्र की अधीनता वाले उद्योगों में १० हजार ९ सौ किलोवात के म्युनिस्पल-बिजलीघर और ३½ लाख टन की क्षमता की कोयला-खानें चालू की जायेंगी। १९५० में प्रजातन्त्र की अधीनता वाले कारखानों की औद्योगिक उपज २ अरब ८० करोड़ रूबल निश्चित की गई है, जिसमें स्थानीय अधिकार-के राजकीय-कारखानों और औद्योगिक-सहयोगसमितियों की उपज काफ़ी बढ़ाई जायेगी।

१९५० में ३३ लाख १३ हजार हेक्तर जमीन में फसल होगी, जिसमें २९ लाख ८५ हजार हेक्तर कल-खोज के होंगे; १३ लाख ७१ हजार हेक्तर अनाज बोई जमीन में १२¾ लाख हेक्तर कल-खोज के होंगे; ११ लाख ३१ हजार हेक्तर की औद्योगिक फसल में कल-खोज का १० लाख ८७ हजार हेक्तर होगा। १ लाख २० हजार हेक्तर तरबूजा, आलू और दूसरी तरकारियों के खेतों में ७३ हजार हेक्तर कल-खोजों का होगा। ६ लाख ८५ हजार हेक्तर में घास-चारा बोया जायगा, जिसमें ६ लाख हेक्तर कल-खोजों का होगा।

मेवा और अंगूर के बाग तथा रेशम पालने में और उन्नति होगी।

कपास की उपज बढ़ाई जायेगी, और उसका खेत बढ़कर ६ लाख ५५ हज़ार हेक्तर हो जायेगा।

सांस्कृतिक विकास और स्वास्थ्य रक्षा के क्षेत्र में मुख्य करणीय निम्न प्रकार है:

१६५० तक स्कूलों की संख्या बढ़कर ४,७४० और छात्रों की संख्या १०,८५,००० हो जायगी। अस्पतालों में २६,६०० रोगियों के लिये चारपाइयाँ होंगी।

४

तुर्कमानिस्तान प्रजातंत्र

क्षेत्रफल—१,८७,००० वर्ग-मील

जनसंख्या—१२,५४,०००

राजधानी—अशकाबाद, जनसंख्या—१,२६,६००

१. भूगोल—

तुर्कमानिस्तान प्रजातंत्र कास्पियन-समुद्र से आमू-दरिया तक फैला हुआ है। इसकी दक्षिणी सीमाएँ अफगानिस्तान और ईरान से मिलती हैं। इसके ८०% भूमि में करा-कुम (काला-बालू) महारेगिस्तान है। इस विशाल रेगिस्तान को पहले बिलकुल निरर्थक और भूले पान्थों के लिये भयानक समझा जाता था; लेकिन सोवियत् साइन्स-वेत्ताओं ने इस रेगिस्तान की जो खोज की है, उससे मालूम होता है, कि वहाँ जमीन के नीचे पानी है और घास इतनी है, कि जिसमें ५० लाख ढोर पाले जा सकते हैं। भूगर्भ-शास्त्रीय खोजों ने यह भी बतलाया है, कि वहाँ गंधकीय सोडियम, तेल, ब्रोमाइड, कोयला, गन्धक, पोटास और साधारण नमक के बहुत से जखीरे हैं। जिप्सम् और काच बनाने का बालू भी बहुत भारी परिमाण में है। कराकुम के दक्षिण में ऊँची पर्वत-माला है, जिसके निचले तल पर जंगली बादाम, पिस्ता, पदुमकाठ आदि के बन हैं। इन पहाड़ों से निकली नदियाँ नीचे उतर कर आगे रेगिस्तान में बिनष्ट हो जाती हैं। इन्हीं नदियों के किनारे प्रजातन्त्र की अधिक बस्तियाँ हैं।

क्रान्ति से पहले नदी और नहरों वाले इलाके में किसान रहते थे, जो पुराने तरीके से कपास की खेती या मेवादारी करते थे। घुमन्तू कबीले अपने पशुओं को लेकर रेगिस्तानी चरागाहों में घूमा करते थे। सभी ढंग पुराना था। नहरें भी पुराने ढंग से निकाली जाती थीं, जिनमें पानी का बहुत अपव्यय होता था और किसान बहुत कम लाभ उठा सकते थे। जो पानी उन्हें मिलता भी था, उस पर स्थानीय सरदार मनमाना कर वसूल करते थे। स्थानीय सरदारों और ज़ारशाही अफसरों के अत्याचार से बहुत से तुर्कमान परिवारों को गाँव छोड़ कर घुमन्तू जीवन स्वीकार करना पड़ता था, जिससे बहुत से पहले के अंगूर और मेवों के बाग उजाड़ हो गये थे।

२. *इतिहास*—

तुर्कमान-जाति भाषा की दृष्टि से टर्की और आज़ुर्वायजान के तुर्कों से सम्बन्ध रखती है। इसका पिछला इतिहास ५वीं सदी के तुर्कों से जा जुड़ता है। इन्हीं तुर्कों के कबीले गुज़ या आ-गुज़ ने सलजूकियों को जन्म दिया। सलजूक वंश १०३६-११५७ तक मध्य-एसिया और ईरान का शासक रहा। १०वीं सदी में यह कबीला निम्न सिरदरिया के तट पर था और उसी समय इसने इस्लाम-धर्म स्वीकार किया था। ११वीं सदी में यह दक्षिण की तरफ बढ़े और राजनीतिक दुर्व्यवस्था से लाभ उठाकर इनके सरदार अपने समय के इस्लामी जगत के सबसे बड़े शासक बन गये। आधुनिक तुर्कमान भी उसी विशाल कबीले के अंग थे। दूसरे कबीले संस्कृति में अधिक बढ़े हुये दूसरे प्रदेशों में बसकर धीरे धीरे उनमें मिल गया, लेकिन रेगिस्तान के पास बँचे हुये घुमन्तू लोग बहुत कुछ अपने व्यक्ति को कायम रखने में समर्थ हुए। यही पीछे चलकर तुर्कमान के नाम से मशहूर हुए। वंश-परम्परा से इनका सम्बन्ध एक ओर टर्की से जुड़ता है तो दूसरी ओर हैदराबाद के निज़ाम भी इन्हीं से सम्बन्ध रखते हैं।

तुर्कमानिस्तान-प्रजातन्त्र

१६वीं सदी में रूसी-साम्राज्य एसिया की तरफ बढ़ा और १८वीं सदी के अन्त तक वह पैसफिक के किनारे तक पहुँच गया। मध्य-एसिया में उसका हाथ पहले कजाकस्तान पर पड़ा। जार की सरकार का बहुत ध्यान मध्य-एसिया के ख़ोकन्द की तरफ था। १८६७ में ख़ोकन्द ज़ार के हाथ में चला गया। १८७३ में ख़ीवा के खान ने भी ज़ार की अधीनता स्वीकार की। इससे कुछ पहिले १८६९ में ज़ार की सरकार ने कास्पियन-समुद्र के पूर्वी तट पर आज के तुर्कमानिस्तान की भूमि पर क्रास्नवोद्स्क का दुर्ग स्थापित किया। यहीं से तुर्कमानिया की ओर पैर बढ़ाना शुरू हुआ। तुर्कमानों ने इसका बड़ा विरोध किया। तुर्कमान नई दुनिया का सब से कम ज्ञान रखते थे। उन्हें अपनी वीरता तथा लड़ाकू प्रकृति का बहुत अभिमान था। उनके पड़ोसियों में ख़ीवा-राज्य ज़ार के अधीन था। बुख़ारा की भी वही हालत थी। अफगानिस्तान अंग्रेजों का सामन्त बन गया था। ईरान के काकेशस को रूस ने और बलूचिस्तान को अंग्रेजों ने धर दबाया था। इस तरह उनके पश्चिम में रूस का शक्तिशाली साम्राज्य था। वह अपने कबीलेपन की कट्टरता तथा इस्लामी धर्मान्धता पर विश्वास किये हुए थे। तुर्कमान अब भी अपनी लूट और जहाद में तत्पर थे। कभी वह ईरान की तरफ लूटने को आते, तो कभी अफगानिस्तान की तरफ, और कभी खीवा पर भी। १८७३ में जब रूस के सामने खीवा को परास्त हो कर दाँत दिखलाना पड़ा, तो इसका प्रभाव तुर्कमानों पर भी पड़ा। इतना ही नहीं, बल्कि तुर्कमान समुद्री डाकुओं से बचने के लिए ही रूस ने क्रास्नोवोद्स्क में अपना किला बनाया और तुर्कमान उसका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते थे। उन्होंने अपनी घड़ी नजदीक देखी और १८७७ में तुर्कमानों के प्रमुख कबीले तेकके ने ईरान के आधीन होना चाहा। लेकिन रूस इसे क्यों बर्दाश्त करने लगा।

इसी साल १२ अप्रैल को जेनरल लोमाकिन ने तुर्कमानों पर धावा बोल दिया, और यह युद्ध फिर उसके बाद बारबर ही, बीच-बीच

में रुक कर चलता रहा। रूसी सरकार अपनी पूरी ताकत नहीं लगाना चाहती थी। शायद उसे अभी अंग्रेजों का भी कुछ ख्याल था। अन्त में १८८१ की जनवरी में रूसी सेना ने भीषण प्रहार किया। तेक्के वीरों ने बड़ी बहादुरी से सामना किया; किन्तु आधुनिक सेना के आगे कोरी बहादुरी किस काम की? तुर्कमानों को परास्त हो अपनी स्वतंत्रता खोनी पड़ी। फिर अगले २६ वर्षों तक उन्हें जारशाही शासन का मजा चखना पड़ा। सोवियत् महाक्रान्ति से जैसे रूसी साम्राज्य की दूसरी जातियों के भाग्य ने पलटा खाया, वैसे ही तुर्कमानों का भी भाग्य चमका। १९२४ में तुर्कमानिस्तान का अपना प्रजातंत्र कायम हुआ।

तुर्कमानिस्तान में तुर्कमान लोगों के अतिरिक्त कितने ही उज्बेक, कजाक और ईरानी ही नहीं, बल्कि बलोची भी बसे हुए हैं, कितने रूसी भी हैं। आज सभी जातियाँ परस्पर भ्रातृभाव से रहती हैं।

२. कृषि—

तुर्कमानिस्तान की जनता का ९/१० भाग उसके दक्षिणी हिस्से में बसता है। हम बतला आये हैं, कि कैसे जारशाही राज की स्थापना के बाद कितने ही किसानों को गाँव छोड़कर घुमन्तू जीवन स्वीकार करना पड़ा। तुर्कमानिस्तान की सारी खेती नहर के पानी पर निर्भर है। क्रान्ति के पहले किसानों को न खेती से जीविका का निर्वाह होने का रास्ता था और न खेती के लिये पानी का प्रबन्ध। क्रान्ति के बाद सरकार ने नहरों की ओर ध्यान दिया, किन्तु किसानों की दशा में भारी परिवर्तन तब हुआ, जब कि उन्होंने अपनी पंचायती खेती (कल-खोज) आरंभ की। अब ट्रैक्टर और कम्बाइन जैसी मशीनें खेतों में पहुँचीं। सरकार ने नहरें बनाने के लिये बड़ी बड़ी रकम निकाली। किसान अब अच्छे खुशहाल हैं। १९३९ में यहाँ अस्सी से अधिक ऐसे कलखोज थे, जिनकी वार्षिक आय १० लाख रूबल से अधिक थी। आज १५ सौ कृषि

विशेषज्ञ तुर्कमानिस्तान के कलखोजों में काम करते हैं। नई नहरें निकाली गई हैं। १९३७ में ३ लाख ७५ हजार एकड़ जमीन में कपास बोई गई। १९३९ में तुर्कमानिस्तान ने २ लाख ४० हजार टन कपास पैदा की, जो कि १९१४ की अपेक्षा ४.६ अधिक थी।

तुर्कमानिया अपने अंगूरों और मेवों के लिये मशहूर है। चारजुइ के मर्दे और तरबूजे विदेशी बाजारों तक में अपने स्वाद और गंध के लिये प्रसिद्ध हैं। आज वह पहले से भी अधिक परिमाण में पैदा होते हैं। उनकी मांग लेनिनग्राद और कियेफ तक है। तेल और रबर पैदा करने वाले पौधों की खेती हो रही है। रामी के पौधे की छाल नकली रेशम बनाने के काम में आती है। १९१३ में ७ लाख ५९ हजार एकड़ में गेहूँ की खेती हुई थी। तब खाद और पानी की कमी, पुराने तरीके की खेती थी, इससे उस समय उपज कम होती थी आज उसकी उपज बहुत अधिक है। १९३९ में १० लाख ३७ हजार एकड़ में गेहूँ की खेती हुई थी। कृषि बल्कि कराकुम के रेगिस्तान की तरफ भी बढ़ रही है। तुर्कमानिया रेशम के कीड़े पालने, रेशमी वस्त्र बुनने के लिये पहले भी प्रसिद्धि रखती थी, किन्तु अब उसकी सुसंगठित रूप से वृद्धि हुई है।

४. रेल के किनारे के प्रदेश—

कास्पियन तट पर क्रास्नोवोद्स्क का बंदरगाह बना, इसका जिक्र हम कर आये हैं। १९वीं सदी के उत्तरार्ध में जब यह नगर बसा, वहाँ मीठा जल एक समस्या थी। उसे समुद्र के पानी को भाप और पुनः जल बनाकर हल किया गया। अब भी क्रास्नोवोद्स्क से पूर्व की ओर चलने वाली ट्रेनों में मीठे पानी की टंकियाँ चलती हैं। इस रेल का आरंभ १८८१ में खतम होने वाले युद्ध के लिये ही हुआ था। और आगे चलते वह पूरब की तरफ बढ़ते बढ़ते उज्बेकिस्तान की रेलों में मिल गई। पानी कहीं कहीं भूमि के भीतर जाती नहरों द्वारा भी जाता है, जैसा कि ईरान और क्वेटा की तरफ भी किया जाता

है। इस लाइन में भाप की जगह डीजेल इंजन से रेल चलाई जाती है। आइये, इस रेल से तुर्कमानिया के सबसे बने इलाके की सैर करें। गाँव के स्टेशनों पर अब भी लम्बे तगड़े आदमी गहरे लाल रंग का जामा और सिर पर काले रंग की भारी टोपी पहने दिखलाई पड़ेंगे। यह इलाका गर्मियों में काफी तपता है। ऐसे समय इतने बड़े बालोंवाली चमड़े की टोपी कुछ विचित्र-सी प्रतीत होगी। परन्तु यदि आप स्वयं लगाकर देखें, तो मालूम होगा, कि वह हलकी है, और धूप से सिर को बचा सकती है। स्त्रियों के सिर पर भी ढोल के आधे मेखले की आकृति की टोपी या पगड़ी दीख पड़ेगी, यद्यपि यह फैशन दिन पर दिन कम होता जा रहा है। स्त्रियाँ भी लाल रंग के जामा को अधिक पसन्द करती हैं।

कुछ घंटों की यात्रा के बाद दक्षिण तरफ कोपेत्दाग पर्वतमाला की काली रेखा दिखलाई पड़ेगी। इसी की उपत्यकाओं में कितनी ही सुहावनी बस्तियां बसी हुई हैं। कोपेत्-दाग से अनेक नदियां निकलती हैं, किन्तु वह सभी कराकुम के रेगिस्तान में जाकर विलीन हो जाती हैं। यहां सुम्बर नदी के तट पर बड़ी अच्छी जात के जैतून, अनार और अंजीर के बाग हैं। रबर पैदा करने वाले वृक्षों के भी कितने ही बाग हैं। पहले पहल यहां छोहाड़े का वृक्ष लगाया गया और अब उसके बाग खूब फल दे रहे हैं। सोवियत्-संघ में इससे पहले छोहाड़ा और खजूर नहीं होते थे।

आगे पहाड़ और नजदीक आ जाता है। रेल कोपेत्-दाग के किनारे किनारे चलती है। पहाड़ से निकलनेवाली प्रत्येक नदी अपने किनारे बस्तियों की शृंखला बनाती है। पहाड़ की तलहटी तक पहुँचते पहुँचते नदियों की गहराई कम हो जाती है, और वह कई शाखाओं में बट जाती हैं। फिर रेगिस्तान उन्हें निगल जाती है। जहां जहां पानी पहुँच जाता है, वहां कपास और किशमिश लगे दिखलाई पड़ते हैं। अब तुर्कमान सड़े-गले तम्बू में नहीं, अच्छे मकानों में रहते हैं। पगडंडियों की जगह सड़कों ने ले ली। छोटी-क्यारियों के बदले

अब बड़े-बड़े खेत हैं, जिनमें किसान लकड़ी के हलकी मुठिया पकड़ने की जगह ट्रैक्टर के चक्के को घुमाता है—पीछे-पीछे डोलते हुए नहीं, उसी पर बैठकर। जगह जगह तुर्कमानों के गांव हैं। सदियों से तुर्कमान स्त्रियां कालीन बुनने में मशहूर थीं। उनका कालीन नरम और बिनावट तथा रंग अति-सुन्दर होता है। एनिलाइन के सस्ते रंग के कारण तुर्कमानिस्तान से रंग बनाने की कला उठ गई थी, और पुराने बढ़िया पक्के रंग की जगह घटिया और कच्चा रंग इस्तेमाल किया जाता था। सोवियत्-काल में फिर परीक्षा करके वनस्पति और खनिज पदार्थ के पुराने रंग बनाये जाने लगे हैं। अश्काबाद के राजकीय कालीन-संग्रहालय में प्रजातन्त्र के भिन्न भिन्न जगहों में बुने कालीनों के बेहतर से बेहतर नमूने रखे हुये हैं। दो तुर्कमान स्त्रियों ने हाल ही में कालीन बुनने की कला में कमाल किया है। अच्छे कालीनों में भी प्रतिवर्ग मीटर २ लाख ३० हजार ग्रंथियां पर्याप्त समझी जाती थीं, किन्तु उन्होंने ७ लाख ५६ ग्रंथियां दी हैं। बिनावट और रंग दोनों में उनके कालीन सुन्दरतम हैं

पहाड़ के किनारे रेगिस्तान के छोर पर तुर्कमानिस्तान की राजधानी आश्काबाद बसी हुई है। १८८१ के पहले यहाँ कभी कभी तुर्कमान लोग आकर अपना तम्बू डाला करते थे। रूसियों के अधिकार में आने पर यहां एक छोटा सा कसबा बस गया। और अब यह १,२६,६०० की आबादी का यानी पटना और इलाहाबाद से बड़ा शहर हो गया है। इसकी चौड़ी सड़कें सीधी चली गई हैं। उनकी दोनों ओर लम्बे वृक्षों की पाँतियाँ हैं। बगल से बहती छोटी नहरों को सीमेंट से बाँधा गया है, ताकि बालू पानी को सोखने न पाये। आश्का-बाद की श्रीवृद्धि सोवियत् शासनकाल में हुई अब वह एक औद्योगिक केन्द्र है। यहाँ कपड़े की बड़ी मिलें, जूते और रेशमी धागों के कारखाने हैं। एक माँस-टिनबंदी का और एक काच का भी विशाल कारखाना है। युद्ध के समय सिगरेट का कारखाना चालू किया गया।

अश्काबाद आज तुर्कमान संस्कृति का केन्द्र है। कहाँ ·०७ प्रतिशत शिक्षा और कहाँ आज की सार्वजनिक शिक्षा। स्त्रियों का दर्जा बहुत नीचा था, गवाही में दो स्त्रियों को एक पुरुष के बराबर समझा जाता था। आज तुर्कमान स्त्रियां डाक्टर, इंजीनीयर, पार्लियामेंट की मेम्बर भी हैं।

अश्काबाद से एक सड़क सैकड़ों मील उत्तर रेगिस्तान की ओर चली गई है। यह सड़क कुछ साल पहले बनाई गई थी, जब कि कराकुम के रेगिस्तान में गंधक का पता लगा। लारियाँ और मोटरें ही इस पर नहीं दौड़तीं, बल्कि हवाई जहाज पानी और दूसरी चीजें लेकर उड़ते हैं, और गंधक लेकर वापस आते हैं। बहुत समय नहीं हुआ, जब कि अश्काबाद से निम्नस्थ आमू-दरिया पर अवस्थित तास-औज़ तक कारवाँ बीस दिनों में पहुँचता था। अब हवाई जहाज तीन घंटों में वहाँ पहुँचा देता है।

अश्काबाद से फिर रेल आगे पूरब की ओर बढ़ती है। तेजन नदी की उपत्यका पार कर मुरगाब नदी की उपत्यका में पहुँचती है। यहीं मेर्व का प्राचीन नगर है। मेर्व से एक लाईन दक्षिण तरफ अफगानिस्तान की सरहद पर कुश्क तक पहुँचती है। यदि किसी समय भारत से यूरोप जानेवाले रेल-पथ को मिलाना हो, तो सबसे सुभीते की वही लाईन होगी, जो कि चमन (बलोचिस्तान) से कुश्क को मिलाने पर बनेगी। इस रास्ते में कोई उतनी ऊँची पहाड़ियाँ नहीं हैं, और रेल की लाईन बनाना आसान है। कुश्क मेर्व से ३०० किलोमीतर दक्षिण है।

मेर्व कई बार बना और उजड़ा। आखिरी बार चिंगिज खान की सेना ने इसे ध्वस्त किया और फिर वह कभी सँभल नहीं सका। बैरमअली मेर्व का सबसे पिछला संस्करण है। मेर्व की उन्नति हो रही है। यहाँ तेल, कपास और साबुन के कई कारखाने बने हैं। अब भी वहाँ पुराने मेर्व की निशानियाँ बाकी हैं। सूखी पीली मिट्टी के ऊपर किले की दीवारें, मीनार, मस्जिदों के गुम्बद अब भी दिखलाई पड़ते हैं। पुरानी नहर की ध्वस्त धार में नर्कट का

जंगल लगा है। पुराने महलों के अवशेष ईंटों के ढेरों के रूप में मौजूद हैं। बालू में जहाँ-तहाँ बर्तनों के रंगीन और चमकीले टुकड़े दिखलाई पड़ते हैं। चीन और यूरोप के मध्य-पथ पर यहीं खुरासान की राजधानी थी। १२२० में चिंगिज के पुत्र ने मेर्व के १३ लाख आदमियों का कत्लेआम किया। आज भी १०० वर्ग किलोमीतर के घेरे में प्राचीन मेर्व नगर का ध्वंसावशेष फैला पड़ा है।

कपास उपजाने में तुर्कमानिस्तान का सोवियत्-संघ में दूसरा नम्बर है। लम्बे रेशेवाले मिस्री कपास की खेती होती है। नहरों की वृद्धि के साथ कपास की कृषि में भी बढ़ती हुई है। नई पंचवार्षिक योजना में और भी नई जमीन जोत में आयेगी।

मुर्गाब-उपत्का से रेल की लाईन उत्तर-पूरब की ओर मुड़कर आमू-दरिया के किनारे चारजूय नगर में पहुँचती है। चारजूय भी एक औद्योगिक केन्द्र है। यहाँ सूती और रेशमी कपड़ों की मिलें हैं। आमू-दरिया पर यहाँ जो रेलवे का पुल है, वह सोवियत्-संघ के बड़े पुलों में से है। चारजूय से पहले रेल को बहुत दूर तक कराकुम के रेगिस्तान से गुजरना पड़ता है। गर्मी के दिनों में यह यात्रा अच्छी नहीं मालूम होती। फटी जमीन में जगह-जगह कँटीली घासें दिखलाई पड़ती हैं। जहाँ तहाँ झाऊ (सकसौल) के दरख्त भी मिलते हैं। कितनी ही जगह बालू के टीले धूप में चमकते हैं।

५. कराकुम रेगिस्तान

पहले पहल देखने पर मालूम होता है, कि इस रेगिस्तान में जहाँ गर्मी में तापमान ८५° (१२० डिग्री से भी ऊपर) तक पहुँचता है, सिवाय नंगे बालू के और कुछ नहीं होगा। लेकिन बात ऐसी नहीं है। जहाँ पशुओं के खुरों से जमीन रौंदी नहीं गई है, वहाँ जगह जगह घास भी है; यद्यपि घनी नहीं होती, तो भी वह ऊँटों और कराकुल-भेड़ों का मधुर चारा है। पहले तुर्कमान अपने

पशुओं के लिये एक कुयें से दूसरे कुयें होते इसी रेगिस्तान में घूमा करते थे और जाड़ों के लिये चारा का जखीरा न जमा कर सिर्फ चराई पर निर्भर करते थे। आजकल तुर्कमान पशुपालक बस्तियों में बस गये हैं। मशीन-ट्रैक्टर स्टेशनों की मदद से जाड़ों के लिये चारा जमा रहता है। नये ढंग के कुयें खोदे गये हैं। हवाई मिल की मदद से पानी ऊपर निकाला जाता है। कितनी ही जगहों पर जमीन से निकलनेवाले खारे पानी को बर्फ बनाकर मीठा करने का भी प्रबन्ध किया गया है। बड़े बड़े सीमेंट के तालाबों में पानी भर दिया जाता है। जाड़े की सर्दी पानी को जमाकर बर्फ बना देती है, नमक नीचे बैठ जाता है। इसी बर्फ को दूसरे तालाबों में इकट्ठा करते जाते हैं और इस तरह लाखों गैलन मीठा पानी आदमी और पशुओं के साल भर पीने के लिये जमा हो जाता है।

खेतों को जहाँ रेगिस्तान के बालू के बढ़ाव से डर था, वहाँ वृक्षों की रक्षापंक्तियाँ लगा दी गई हैं। अब कराकुम के गाँवों में भी ऐसी बस्तियाँ बस गई हैं, जहाँ दूकानें, स्कूल, अस्पताल, डाकखाने और सिनेमाघर हैं। घरों और सड़कों में बिजली जलती है। पानी के नलों का प्रबन्ध है।

यद्यपि अब भी पशुपालन ही रेगिस्तान में जीविका का मुख्य साधन है, लेकिन अब खेत भी प्रकट होने लगे हैं। सारी बाधायें हटाकर साइंस ने बालू में फसल पैदा करने के तरीके निकाले हैं। रेपेतेक के प्रयोगक्षेत्र में गड्ढों के अन्दर डेढ़ मीटर (चार हाथ) गहरे अंगूर लगाये गये हैं। प्रति-हेक्टर (२.४७ एकड़) दर्जनों टन मीठे खरबूजे और तरबूजे पैदा किये जा रहे हैं। यह भी प्रयोग से सिद्ध हुआ है, कि कराकुम के मैदान में तूत के दरख्त लगाये जा सकते हैं।

कराकुम के बहुत से भागों में जल का बिल्कुल अभाव है। लेकिन वहाँ पानी लाया जा सकता है। पानी लाने का मतलब है जीवन का लाना। कहा

जाता है, चार सदी पहले आमू-दरिया (वक्षु) कराकुम होते कास्पियन में गिरती थी। पीछे नदी ने धार बदल दी और वह अराल-समुद्र में गिरने लगी। यदि आमू-दरिया की धार को फिर कास्पियन की ओर लौटाया जाय, तो कराकुम का पुनरुज्जीवन फिर हो सकता है। यह सिर्फ स्वप्न नहीं है। कुछ साल पहले नदी की धार को बदलने का प्रयत्न किया गया। केलिफकी सूखी धार अब भी मौजूद है। यह दक्षिणी तुर्कमानिया के बस्सग-केर्की की नई नहर द्वारा किया जा रहा था। इस तरह बनी नदी की नई धार ने कई किलोमीतर जमीन रेगिस्तान से छीनी। कुछ थोड़ी खुदाई करके प्राकृतिक गति को तीव्र किया गया, और नदी रेगिस्तान के भीतर १०० किलोमीतर तक पहुँच गई। पहले बालू ने पानी को सोख लिया, और उस पर आधा मीतर मिट्टी पड़ गई। इस पर सरकंडे और सफेदे खूब अच्छी तरह उगने लगे। नई हरितावली में पक्षियों ने घोंसला बनाया। खेत तैयार कर वहाँ गेहूँ, अलफाफा और कपास की फसल बोई गई, परन्तु इसी बीच में लड़ाई शुरू हो गई और काम वहीं रुक गया।

लड़ाई के बाद अब फिर काम शुरू हुआ है। आमू-दरिया का पानी दक्षिणी कराकुम की सिंचाई के लिये केलिफ की सूखी धार में से होकर बहेगा। एक विशाल कराकुम नहर बनने जा रही है, जिसका पानी मुर्गाब और तेजन नदियों तक पहुँचेगा। जब यह काम पूरा होगा, तो सारे दक्षिणी तुर्कमानिस्तान की कायापलट हो जायेगी।

१९४६ में बड़े अभियानों का काम खतम हो गया। इसका उद्देश्य था रेगिस्तान के भीतर कहाँ कितनी गहराई में कैसा पानी मौजूद है, यह मालूम करना। कई सालों की कड़ी मेहनत के बाद तुर्कमानी भूगर्भ-शास्त्रीय प्रबन्ध-विभाग ने कराकुम रेगिस्तान के दक्षिण-पूर्वी जिलों तथा कोपेत्-दाग इलाके के १ लाख १० हजार वर्ग-किलोमीतर भूमि की जाँच-पड़ताल करके नक्शे और आँकड़े तैयार किये। इस अनुसन्धान में जगह जगह ट्यूबवेल धँसाकर पानी का पता लगाते भिन्न भिन्न भूगोलशास्त्रीय युगों के स्तर और रासायनिक

सम्मिश्रण को भी मालूम किया गया है। तुर्कमानिया जैसे प्रदेश के लिये ऐसे आँकड़े और नकशे की बड़ी आवश्यकता थी, क्योंकि उसकी साढ़े तीन लाख वर्ग-किलोमीतर भूमि में रेगिस्तान है।

तुर्कमानिया के रेगिस्तानों और पर्वत-सानुओं पर अब भी २० लाख पशु चरते हैं। रेगिस्तान पर विजय प्राप्त करने के लिये जो विशाल आयोजन हो रहे हैं, उससे वहाँ पशुओं की संख्या कई गुनी हो जायगी।

पुरुष अकिंचन नहीं है। उसके पास अपार शक्ति है। प्रकृति उसकी स्वामिनी नहीं है। तुर्कमानिया में वह प्रकृति पर विजय पाने का भीषण संकल्प कर चुका है। कुछ ही सालों में रेगिस्तान में २०० किलोमीतर घुस जाना उसकी विजय का परिचायक है। हमारे देश में भी प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का ऐसा ही आयोजन करना है। कभी हमारे यहाँ भी राजपूताने के रेगिस्तान में यही बातें करनी होंगी।

६. उद्योग-धंधा

प्रकृति के साथ युद्ध करने, सामाजिक निर्बलताओं को हटाने और जनता के आर्थिक तथा सांस्कृतिक तल को ऊँचा करने के लिए सभी तरफ से काम आरंभ करना होता है। वस्तुतः सारे काम एक दूसरे से सम्बद्ध हैं। आज किसी एक को अलग लेकर पूरा नहीं कर सकते। तुर्कमानिस्तान में एक तरफ कृषि और पशुपालन के लिए बड़ी बड़ी योजनायें काम में लाई जा रही हैं, दूसरी ओर उद्योग-धंधे को पीछे नहीं रक्खा गया। आज वहाँ औद्योगिक प्रगति तेजी से हो रही है। लाखों साल से रेगिस्तान में पड़ी गन्धक आज निकाली जा रही है। लम्बे रेगिस्तान और पानी के अभाव की बाधायें कुछ नहीं बिगाड़ सकतीं। रेशम, कपड़े और जूते के कारखाने पहले भी तुर्कमानिया में खुल चुके थे, लेकिन मातृभूमियुद्ध के समय रूस कारखाने इस प्रजातंत्र में तेजी से बढ़े। कई रासायनिक कारखाने भी स्थापित हुए। तुर्कमानिया के सपूतों ने

सीधे जाकर जर्मनों से लोहा ही नहीं लिया, बल्कि उनके भाई-बहनों ने सैनिक आवश्यकता की बहुत सी सामग्री पैदा करके उन्हें दिया। नई पंचवार्षिक योजना में उद्योग धन्धा और बढ़ाया जा रहा है। १ अरब ६० करोड़ रूबल की पूंजी उसमें लगाई जा रही है। मिट्टी के तेल की उपज इन पाँच वर्ष में दुगुनी हो जायेगी। नये कल-कारखानों में एक तेल-शोधनी, एक सुपर-फास्फेट कारखाना एक नई कपड़ा-मिल, कितने ही बिजली पैदा करने के स्टेशन, एक सीमेन्ट का कारखाना, कोयले की कितनी ही खानें, पोशाक बनाने की एक फैक्टरी और तरकारी सिझाकर टिन में बंद करने की एक फैक्टरी बन रही है। युद्ध पूर्व की अपेक्षा १६५० में औद्योगिक उपज ७६ प्रतिशत अधिक हो जायगी।

क्रास्नोवोदस्क नगर में पहले की पंचवार्षिक योजनाओं में मछली का कारखाना बना था। कास्पियन समुद्र अच्छी जाति की मछलियों से भरा पड़ा है। कितनी ही नई तरह की मछलियाँ कालासागर से हवाई जहाज पर लाकर डाली गई हैं। अब मछुए उन पुरानी दरिद्र नावों में बैठकर मछली का शिकार नहीं करते और न अब उनकी आमदनी पहले की तरह अल्प तथा अनिश्चित है। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय क्रास्नोवोदस्क में तेल-शोधन-उद्योग आरम्भ हुआ। तुर्कमानिस्तान के लिए यह बिल्कुल नई चीज थी। नगर से दक्षिण-पूर्व नेबित्‌दाग का तेल क्षेत्र है, जिसका उद्घाटन सोवियत्‌-काल में हुआ। तेल के अतिरिक्त क्रास्नोवोदस्क के पड़ोस में आइडिन, ब्रोमाइट और ओज़ोसेराइट मिला है। नगर की उत्तर तरफ रासायनिक उद्योग बढ़ाया जा रहा है।

१६४६ में एक और तेल-शोधन-कारखाना चालू किया गया। डेढ़ महीने के काम से वहाँ के कमकरों ने अपने प्रोग्राम से दो ट्रेन अधिक पेट्रोल पैदा किया।

ताशन्केप्रिन जलनिधि में १९४६ में जल-प्राणिशास्त्रीय स्टेशन स्थापित किया गया। सोवियत् का यह सबसे दक्षिणी स्टेशन है, जो मुर्गाब उपत्यका के इस भाग में खोला गया है। यह स्टेशन उपत्यका और जलनिधियों के प्राणियों और वनस्पतियों का अनुसन्धान करेगा। इसके अनुसन्धानों के आधार पर भविष्य की कराकुम नहर के बारे में प्रोग्राम बनाने में आसानी होगी। यह नहर कराकुम-रेगिस्तान को सींचने के लिए बनाई जा रही है, यह हम कह आये हैं।

७. स्वास्थ्य

क्रान्ति से पहले सारे तुर्कमानिस्तान में ६ से अधिक डाक्टर नहीं थे, और अब उनकी संख्या १,००० से अधिक है। मलेरिया से पहले यहाँ की जनता तबाह थी और अब उसका करीब करीब नाम तक भी नहीं रह गया है। तुर्कमानिस्तान में जहाँ प्राकृतिक सम्पत्ति बहुत भारी परिमाण में मौजूद है, वहाँ स्वास्थ्यकर स्थान भी बहुत हैं। तुर्कमानिस्तान और ईरान की सरहद पर कोपेत् दाग और परापमिज की पर्वतमाला है। कोपेत्-दाग एक तरह यहाँ का हिमालय है, जहाँ गर्मी के दिनों में, जब नीचे की जमीन भाड़ की तरह तपती है, तब भी यहाँ दार्जिलिंग और मसूरी का सा मौसम रहता है। जारशाही जमाने में भी यहाँ कुछ स्वास्थ्य-विश्राम बने हुए थे, लेकिन उनकी संख्या बहुत कम थी और वह भी सिर्फ रूसियों के लिए सुरक्षित थे। लेकिन अब स्वास्थ्य-विश्राम चंद शौकीनों के लिए नहीं बनाये जाते हैं। अब उन्हें सारी जनता के ख्याल से बनाया जाता है, जिसमें कि सभी उनसे फायदा उठा सकें। नूहुर, फीरोजा, खैराबाद, उफ्रा जैसे ठंडे स्थान बड़े पैमाने पर बढ़ाये जा रहे हैं।

मुल्ला-कारा जेबेल रेलवे स्टेशन से ५ किलोमीतर और अश्काबाद से ५५५ किलोमीतर पर है। यह एक खारे पानी की झील के किनारे है। स्वास्थ्य के लिए यह बहुत अच्छा समझा जाता है। इसके पानी में कई

तरह के रासायनिक पदार्थ हैं, जो स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयोगी माने जाते हैं।

(१) अर्चमान

कोपेत्-दाग के नीचे अश्काबाद से १२० किलोमीतर पर है। यह समुद्र-तट से १,२०० मीतर या प्रायः ४ हजार फीट ऊपर है। यहाँ के जल में धातु का सम्मिश्रण है। इसके पास करीब १ मीतर गहरी एक झील है।

(२) फीरोज़ा

फीरोज़ा का ग्रीष्म-विश्राम-स्थान अश्काबाद से ३७ किलोमीतर दक्षिण कोपेत्-दाग पर्वत में है। यहाँ से ईरान की सीमा नजदीक है। इसकी ऊँचाई ६०० मीतर या २,००० फीट के करीब है। प्रजातंत्र की राजधानी के करीब होने से यहाँ बहुत लोग जाते हैं। राजधानी से यहाँ तक जाने की बहुत अच्छी सड़क बनी है। मई से अक्तूबर तक का समय यहाँ रहने के लिए बहुत अच्छा समझा जाता है।

(३) खैराबाद

खैराबाद ग्रीष्म-विश्राम अश्काबाद से दक्षिण-पश्चिम ७५ किलोमीतर दूर है। ईरान की सीमा से बहुत नजदीक है और सीमा-पार खैराबाद नाम की बस्ती है। कास्पियन-समुद्र-तल से यह १९५० मीतर या ६,००० फीट के करीब ऊँचा है। फीरोज़ा से यह ३५ किलोमीतर पर है। यह भूकंप-क्षेत्र में है, इसीलिए मकानों के बनाने में इसका खासतौर से ध्यान रक्खा जाता है। गर्मी में यहाँ की आब-हवा बहुत सुखद एवं स्वास्थ्य-अनुकूल होती है। यहाँ सुन्दर पहाड़ी दृश्य है। क्षय-रोग, कास रोग, अल्परुधिरता के लिए यह अच्छा समझा जाता है।

(४) उफा

यह क्रास्नोवोद्स्क के पास कास्पियन-समुद्र के तट-पर है। कास्पियन-

समुद्र विश्व-समुद्र से २५ मीटर (८० फीट) नीचे है। इसका पानी अधिक नमकीन है। तट के पास समुद्र गहरा नहीं है। समुद्र-स्नान स्वास्थ्य और आमोद दोनों दृष्टि से अच्छा है। उष्मा में समुद्र-स्नान और स्वच्छ सामुद्रिक समीर की बहार है। यहाँ नहाने के बहुत से घाट हैं।

(५) बैरमअली-

यह अश्काबाद से ३७० किलोमीतर और मेर्व से २८ किलोमीतर पर अवस्थित है। बैरमअली पहले जार की अपनी खेती का केन्द्र था। यहाँ की आबोहवा मिस्र जैसी है, इसलिए मिस्री कपास की खेती का प्रसार किया गया है। साथ ही यह स्वास्थ्यवर्द्धक स्थान भी है और यहाँ पर रहने के लिए मकान बने हुए हैं।

इनके अतिरिक्त और कितने ही स्वास्थ्य और विश्राम के स्थान तुर्कमानिया में हैं। नूहुर (अर्चभान स्टेशन से २२ किलोमीतर दूर) कोपेत्-दाग पहाड़ पर समुद्र-तल से ८४० -करीब २,७०० फीट - ऊपर है। चिकिश्लर (कास्नोवोद्स्क से ३०० किलोमीतर दक्खिन) ईरान की सीमा से नातिदूर, समुद्र तट से दो किलोमीतर दूर ढाई किलोमीतर लम्बी, तिहाई किलोमीतर चौड़ी झील है। कूली (कास्नोवोद्स्क से ४५ किलोमीतर दूर, समुद्र से कुछ हटकर) में समुद्र के समानान्तर ६०-७० किलोमीतर लम्बी और आधी किलोमीतर चौड़ी झील है। शोरकुल (केर्किचि रेलवे स्टेशन के पास, आमू-दरिया के दक्षिण तट पर अवस्थित) में नमकीन झील है, जिसमें गंधक भी मिश्रित है। बहारदीन झील (बहारदीन रेलवे स्टेशन से २० किलोमीतर दक्खिन, कोपेत्-दाग के ऊपर पास में एक गुफा भी है। इनके अतिरिक्त गंधक की और भी कितनी झीलें हैं, जिनका स्वास्थ्य के लिये बड़ा ही महत्त्व है।

८. *शिक्षा*—

(१) *साहित्य*—"सर्वे पदा हस्तिपदे निमग्ना" के अनुसार मनुष्य की

सारी उन्नतियों की जड़ उसकी आर्थिक उन्नति है। तुर्कमानिस्तान की आर्थिक उन्नति, उसकी कलखोजी खेती और राष्ट्रीकृत उद्योगधंधे से हुई है। इसका प्रभाव हम वहां की प्रजावृद्धि पर देख सकते हैं। तुर्कमान जनता की तादाद १६२७ से १६३६ में सवा गुनी बढ़ गई। १६३६ में बच्चों के लिए १४,०० स्कूल थे। इन स्कूलों में जनता की भाषा में शिक्षा दी जाती है। यहां कितने ही रूसी, उज्बेक, कज़ाक, ईरानी और बलूची परिवार और गाँव बस गये हैं। उनके लिए अपनी अपनी मातृभाषा के स्कूल खुले हुए हैं। साधारण स्कूलों के अतिरिक्त ३३ टेकनिकल स्कूल और ४ कालेज हैं। स्त्रियां भी शिक्षा में आगे आई हैं, देश के नवनिर्माण में बराबर भाग ले रही हैं। ६० समाचार पत्रों में ४० तुर्कमानी में निकलते हैं। इनके अतिरिक्त ७ मासिकपत्र भी हैं। किताबों के बड़े बड़े संस्करण होते हैं। तुर्कमान जाति अब शिक्षा में पिछड़ी नहीं है। ५,००० से अधिक तुर्कमान अध्यापक हैं, और डाक्टरों, इंजिनियरों तथा साइन्सवेत्ताओं की संख्या हजारों तक पहुँच गई है। अखिल सोवियत् साइन्स-अकदमी के तीस से अधिक प्रतिष्ठान यहां काम कर रहे हैं। प्रजातंत्र में ३७ थियेटर, ७०० पुस्तकालय और ६०० वाचनालय हैं। लोक-कला को पुनरुज्जीवित किया गया है, साथ ही आधुनिक ढंग के कवि और लेखक अपनी सुन्दर कृतियों से तुर्कमान-साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं। ज़ारशाही जमाने में तुर्कमान-भाषा की कोई प्रतिष्ठा नहीं थी। रूसी स्कूल थे, किन्तु उनकी संख्या ५८ से अधिक नहीं थीं।

(२) साहित्यकार—

तुर्कमान भाषा का प्रथम कवि मखदूम कुली फ़ाग़ी (१७३३-८२ ?) था। उसने कितनी ही कवितायें अपनी भाषा में रचीं, किन्तु प्रोत्साहन के बिना वह परम्परा आगे नहीं बढ़ी। तो भी मखदूम कुली को 'तुर्कमानी साहित्य का पिता' माना जाता है। मखदूम कुली का दृष्टिकोण वस्तुवादी था। उसके बाद मुल्ला नेपेस ने रचनायें कीं। वह ७० साल की उम्र में मरा। मुल्ला नेपेस को

रूमी भाषा का ज्ञान था। उसकी प्रेम कवितायें ऊँचे दर्जे की हैं। उसकी 'जोहरा और ताहिर' नामी प्रेमकविता प्रसिद्ध है।

'कमीना' एक दूसरा कवि था, जिसका जन्म १८वीं सदी के अन्त में दक्षिणी तुर्कमानिस्तान के मरव्स नगर के करीब के एक गाँव में हुआ था। उसका मूल नाम मुहम्मद वली था। वह गरीब घर में पैदा हुआ और आजन्म गरीब ही रहा। रचनायें भी उसने गरीबों के ही जीवन के सम्बन्ध में कीं। उसकी एक रचना 'दरिद्रता' बहुत प्रसिद्ध है। उसने अपनी कविताओं में मुल्लों, सूफियों और बेगों की बड़ी खबर ली है। कमीना की सारी सहानुभूति गरीबों के साथ थी। आजकल उसकी रचनायें खूब लोकप्रिय हैं।

पुरानी कविताओं में कितनी ही लोकप्रिय वीर-गाथायें भी हैं, जिनका सोवियत्-काल में अच्छा संकलन हुआ है।

तुर्कमान कवि दुर्दी किलच तुर्कमानिया का जम्बुल समझा जाता है। सोवियत्-काल के तुर्कमान कवियों में रहमत सईदोफ का स्थान काफी ऊँचा है। रहमत का जन्म १९१० के आसपास हुआ था। उसका बाप एक बेग (जमींदार) का नौकर (कामिया) और माँ मालिक के लिये कालीन बुनने का काम करती थी। बाप पहले ही मर गया। माँ बच्चे को छोड़कर चली गई। रहमत बाय का दासी-पुत्र बनकर रहा। १९२३ में क्रान्ति से भयभीत बाय अफगानिस्तान भागा। रहमत को भी वह साथ ले गया। १९२५ तक रहमत बाय के साथ घूमता रहा और नहीं जान पाया, कि दुनिया में कहाँ क्या हो रहा है? पुस्तकें देख देखकर पढ़ने को उसका मन मचलता था, लेकिन इसके लिए उसे मौका नहीं मिला।

इसी साल (१९२५) रहमत को पता चला, कि बोल्शेविक प्रत्येक औल (गाँव) में बच्चों के लिये स्कूल खोल रहे हैं। वह भागने की सोच रहा था। बाप ने खुद मौका दे दिया। उसने रहमत को आटा लेकर रेगिस्तान में भेड़वालों के पास भेजा। यह जगह सीमान्त के नजदीक थी। रहमत सीमा

पार हो सरख्स में सोवियत् अधिकारी के पास पहुँचा। उसने उसे पढ़ने के लिए बैठा दिया। उस समय रहमत १६ साल का था। परीक्षा लेते हुए अध्यापक ने पूछा—'गिन सकता है ?'

'सकता हूँ !'

'मुर्गी के कितने नख होते हैं ?'

'दस नख'

खैर, रहमत को पढ़ने का मौका मिला और पढ़ाई अपनी भाषा द्वारा थी, इसलिए ४ साल पढ़ने के बाद वह २० साल की उमर में अध्यापक बन गया। शिक्षा के प्रचार पर तुर्कमान सरकार का बहुत ज़ोर था और बस्तियों से दूर रहनेवाले भेड़पालों की पढ़ाई का भी इन्तिज़ाम किया जा रहा था। रहमत को सिरम्-कुइ के कुएँ पर भेड़पालों को पढ़ाने के लिए भेज दिया गया।

सीमान्त पर डाकू (बसमाची) पैदा हो गये थे। रहमत को वहाँ अवस्थित फौजी चौकी के पास पढ़ाने का काम मिला। फौज के कमीसर (राजनीतिक अफसर) ने भिन्न-भिन्न तरह की पुस्तकें पढ़कर सुनाईं और दूसरे देशों के बारे में बातें बतलाईं। इससे रहमत की जिज्ञासा बढ़ गई।

रहमत ने पहिली कवितायें स्कूल में पढ़ते वक्त लिखी थीं, जो दीवार-पत्रों में प्रकाशित होती थीं। इसी वक्त उसने स्कूल की नाटक-मण्डली के लिए भी एक गीत "युद्ध" लिखी। उसने अपनी कविता मासिक पत्र "तोकमक" में भेजी। यह कवितायें अभी उतनी अच्छी नहीं थीं। रहमत ने एक जगह लिखा है—"मैं नहीं जानता था कि कैसे कविता और गीत लिखना चाहिए। लेकिन मैं समाचारपत्र नियम से पढ़ता था और देखता था कि वहाँ कवितायें कैसे लिखी जाती हैं।"

१९३१ में रहमत अश्काबाद में जा वहाँ के पत्रों के लिए आन्दोलन-कारी कवितायें लिखने लगा। यहाँ इसे उज्बेक और तातार लेखकों की पुस्तकें पढ़ने को मिलीं, जिससे उसे कवित्व-कला का परिचय मिला। पहली

नये ढंग की कविता उसने वस्स-कर्की नहर के उद्घाटन के वक्त लिखी और उसका पहला काव्य-ग्रन्थ १९३८ में छपा।

दूसरा आधुनिक तुर्कमान कवि पोम्मा नूरबर्दियेफ है। इसका जन्म १९०९ के आस-पास हुआ था। उसे बाप-मा का स्मरण नहीं है। वे छुटपने ही मर गये थे और लोगों ने बकरी के दूध पर उसे पाला था। जब वह घोड़े पर बैठने लायक हुआ, तब उसे एक बाय के हाथ में दे दिया गया। १९२६ तक वह बाय के साथ रहा। उसे कविता सुनने का बहुत प्रेम था और मख्दूम, कुली तथा कमीना की कविताएँ उसे बहुत पसन्द थीं। उसे अक्षर का परिज्ञान न था, इसलिए लोगों के मुँह से उन्हें सुना करता था। इसी वक्त सुना कि बोल्शेविक बच्चों के लिए बिना फीस के स्कूल खोल रहे हैं। वह बाय के हाथ से भागकर स्कूल में दाखिल हो गया।

इसी तरह की जीवन-कथाएँ बहुत से तुर्कमान लेखकों और राजनीतिक कर्मियों की हैं।

मोहम्मद किलच "बेचारा" एक दूसरा तुर्कमान कवि है। १९१७ में इसकी उमर ३० साल की थी। इसका पिता ब्यउर्म गाँव का किसान था। अभी बच्चा ही था, कि अश्काबाद के पास अनऊ में अपने चचा के यहाँ काम करने चला गया। चचा को लड़का पसन्द आया और उसने किलच को गायदशेर आकुन के मदरसे में पढ़ने के लिये बिठा दिया। मुहम्मद वहीं पढ़ता रहा, इसी बीच सोवियत क्रान्ति हुई। अश्काबाद में अध्यापकों के लिए ट्रेनिंग स्कूल खुला। किलच वहाँ चला गया और फिर अपनी मृत्यु के समय (१९२२) तक गाँव के स्कूलों में अध्यापकी करता रहा। बचपन से ही किलच को कविता से प्रेम था। "कमीना" की परम्परा के कवि ख्वाजी से उसकी बड़ी समीपता थी। किलच ने क्रान्ति के पहले से ही कविता लिखनी शुरू की थी। गरीबों की जिन्दगी से वह बड़ा दुखी था और सहानुभूति उन्हीं के साथ थी। वह स्वयं

भी गरीब था, इसलिए उसने अपना उपनाम "बेचारा" रखा। उसकी कविता में बड़ा दर्द है। उसकी १६१७-२१ की कविताएँ बहुत ही पुष्ट और भावपूर्ण हैं, किन्तु कवि को जब अपने पूरे जोहर दिखलाने का समय आया, उसी वक्त जीवन ने साथ छोड़ दिया।

मुल्ला मुर्त "बेचारा" के ही पीढ़ी का था। उसका जन्म "कमीना" के जन्म-स्थान सरेख्स में १८७६ में हुआ था। किसानी करते हुए वह बायों और मुल्लों के अत्याचारों की कहानियाँ अपनी कविताओं में कहता था। उसे जनता से बहुत प्रेम था। मुल्ला मुर्त पुराने ढंग के कवि-शिल्प कसीदा आदि से परिचित था और क्रान्ति से पहले वह इस तरह की कविताएँ करता भी था; लेकिन सोवियत्-क्रान्ति के आरम्भ ही में उसने समझ लिया, कि उसका स्थान कहाँ है। मुल्ला मुर्त अब अपनी नई कविताएँ शहरों, गाँवों और सभाओं में पढ़ने लगा और सोवियत् के हर सुधारों के सम्बन्ध में जनता को प्रेरित करने के लिए उसने कवितायें लिखीं। मुल्ला मुर्त तुर्कमानिया का मायाकोव्स्की समझा जाता है। उसने तुर्कमानी भाषा के दैनिक "तुर्कमानिस्तान" और मासिक-पत्र "तोकमक" का बड़ी योग्यता से सम्पादन किया। मुल्ला मुर्त के जीवन ने भी साथ नहीं दिया और कुछ ही वर्षों बाद उसका देहान्त हो गया। सोवियत्-काल में लिखी उसकी कृतियाँ हैं "तुर्कमान कन्या", "स्वतंत्रता", "लाल सेना," "अस्तो," "लेनिन"।

दुर्दी क्लिच तुर्कमान का जन-कवि १६वीं सदी के अन्त में खीवा के एक औल (गाँव) में एक बाय के कमियों के घर पैदा हुआ था। वह निरक्षर और अन्धा था। लेकिन बचपन ही से उसे बख्शी (भाट) लोगों की कविता सुनने का बहुत शौक था। इस तरह हजारों पंक्तियाँ उसे याद हो गईं। कितने ही समय तक वह उनके साथ औलों (तम्बूवाले गाँवों) और किशलकों (घरवाले गाँवों) में घूमता रहा। कुछ ही समय बाद वह स्वयं ही कविताएँ जोड़ने लगा। उसकी कविताएँ इतनी जन-प्रिय हुईं, कि लोग उसे द्वितीय

"कमीना" कहने लगे। अपनी कविताओं में वह छोटी छोटी कहानियाँ लाता है। उसकी कविताओं में भी दरिद्रों का दर्द भरा होता है। उसकी कविताओं का जनता में इतना आदर होने का कारण यह है, कि उसे कभी निराशावाद की ओर झुकना नहीं पड़ा। क्रान्ति के वक्त "दुर्दी किलच" ख्वारेज्म में था और क्रान्ति का स्वागत करते वह जनता के पक्ष में हो गया। बसमाचियों (डाकुओं) के सरदार जुनैद खाँ ने दुर्दी की जन-प्रियता देखकर उसे अपनी तरफ खींचना चाहा। उसके पास भेंट भेजी और अपनी तरफ आते न देखकर उसे पकड़ मँगाया। जुनैद ने उससे पूछा—"क्या तू फिर बोलशेविकों और सोवियत् सरकार के पक्ष में हो हमारे विरुद्ध कविताएँ लिखेगा"? दुर्दी चुप रहा। उसे कोड़ों से मारा गया, वह फिर भी चुप रहा। तब उसे अँधेरी कोठरी में बन्द कर दिया गया। ५२ दिन तक कवि उस अँधेरी कोठरी में पड़ा रहा। रोज उसे साँसत दी जाती थी। एक दिन अन्धा कवि वहाँ से भाग निकला, और जाकर लाल सेना के पास पहुँचा। फिर वह लाल सेना के ही साथ ताशकन्द, किरगिज और कजाकस्तान घूमता बसमाचियों और बायों के विरुद्ध अपनी कविताओं द्वारा प्रचार करता रहा।

गृह-युद्ध के बाद दुर्दी अपने जन्म गाँव में लौट आया और अपनी सारी शक्ति से जनता के नवजीवन के निर्माण में लग गया। आज दुर्दी का नाम सारे तुर्कमानिस्तान में प्रसिद्ध है। दुर्दी का स्थान अब्दुल, सुलेमान स्तालस्की, फ़ेकला, बेज्जुबोफ़, स्तुग, लेउन्चेज, इस्लाम शायर, शोलीबी, तोक्तोगुलु, सातिलगानोफ़, फर्रोख जैसे महान् जन-कवियों में है।

अता सालेह दूसरा आधुनिक तुर्कमान कवि है। इसके अतिरिक्त बैरमशायर, बेदीनियाज दोलीखान ओगली, शाहनियाज ओगली, इयाज़ कुली सरुखी, कुर्बान मामेद ओरअस्तोफ़, खोजा कुली भी आजकल के प्रसिद्ध तुर्कमान कवि हैं। पिछले दिनों कवि नूरी अन्ध बिलन्द का नाम आगे बढ़ा है। अब तुर्कमान कविता ने लिखित साहित्य का रूप लिया है, जिसमें बेर्दी केर्बाबायेफ़,

करासेइतलियेफ का नाम खास तौर से मशहूर हुआ है। अतासाए की कृतियाँ बहुत रुचि के साथ पढ़ी जाती हैं।

"तुर्कमानिस्तान" समाचार-पत्र १९२४ से तुर्कमान भाषा में निकलने लगा। १९२७ में "तोकमक" मासिक पत्र का प्रकाशन आरम्भ हुआ। इसमें साहित्यिक लेखों और कविताओं के साथ साथ परिहास की काफी पुट रहती है। मुल्ला मुर्त इसके जन्मदाताओं में से थे। अता शुकुरोफ एक बहुत ही प्रतिभाशाली कवि था। उसकी कविताएँ "तोकमक" में निकलती रहीं। लेकिन वह तरुणाई में ही मर गया। शकुरोफ के शिष्य पोरमा नूरबर्दीयेफ की कविताएँ "तोकमक" में छपती रहीं। रहमत सईदोफ की कविताएँ भी इसमें छपती थीं। बहुत से तुर्कमान कवियों की कृतियाँ इस पत्र में निकलती रहीं। आज उन कवियों के नाम सारे तुर्कमान में मशहूर हैं, जिनमें दुर्दी आगा मामेदोफ, बेर्दी सुल्तानिया-जोफ, अतनियाजोफ, कमाल ईशानोफ, शाली, अमन केकिलोफ, तौशन एसेनोवा, अ-अखुनदोफ, गुरुनगेल्ली, बेकी सयितालोफ के नाम खास तौर से स्मरणीय हैं।

स्त्री कवियों में अलामिशेवा का नाम प्रसिद्ध है। इसकी पहली कविता १९२८ में छपी थी।

तुर्कमान भाषा के अपने कवियों और लेखकों ने जहाँ मौलिक ग्रन्थ लिखे हैं, वहाँ पुश्किन, लेर्मोन्तोफ, ताल्सताय, शेवचेंको और मायाकोव्स्की की कविताओं का अनुवाद हुआ है। तुर्कमानी में बहुत से दूसरे आधुनिक और प्राचीन रूसी ग्रन्थों के भी अनुवाद हैं।

तौशन एसेनोवा तुर्कमान कवयित्री का जन्म एक औल में हुआ था। क्रान्ति के समय अभी वह बच्ची थी। बचपन में उसने अपने एक सम्बन्धी से लेनिन की कथा सुनी थी। उसने लेनिन का वचन सुना "स्वतंत्रता का सूर्य सदा संस्कृति की किरणें फैलाता है।" एसेनोवा ने अपने आत्मचरित में लिखा है "यह वाक्य मेरे हृदय में बैठ गया।" यद्यपि तब वह दस वर्ष की

थी। उसने अपनी सखियों से कहा : "अगर मैं चाहूँ तो कअहका (गाँव) छोड़कर शादी करके चली जाऊँ, किन्तु मेरे लिए अकेला आकाश का सूर्य काम है।"

एसेनोवा ने अपना गाँव छोड़ प्रजातन्त्र की राजधानी अश्काबाद का रास्ता पकड़ा। उस वक्त वह १४ साल की थी। ज्ञान-सूर्य ने पहली किरण इस बालिका के ऊपर डाली और १९३० में पहली बार उसकी कविता पत्र में छपी। कविता लाल-सेना के बारे में थी। जल्दी ही उसकी कविताएँ "तुर्कमानिस्तान", "याश-कमूनिस्त" और दूसरे पत्रों में छपने लगीं। उसकी पहली कविता-पुस्तक "फौलाद कन्या" १९३८ में छपी। युद्ध से पहले उसने अपना नाटक "शेमशात" (शमशाद) लिखा।

तुर्कमान उपन्यासकारों में दुर्दी किलच का नाम पहले आता है। आगा साले ने भी बहुत सी कहानियाँ लिखी हैं। कमाल ईशानोफ, बेकी सइताकोफ, नूर मुराद सारीखानोफ और नरी आशिरोफ के नाम प्रसिद्ध हैं। सबसे पहिला उपन्यास "कमागिल निचिया" को आशिरोफ ने लिखा। इसमें अभी कविता का प्रभाव बाकी था। बेकी साइताकोफ की पहली कहानी "कमूनार" थी। आगा खान दुर्दीयेफ की कहानी "मिथानल" भी प्रसिद्ध है। सारीखानोफ के उपन्यास "सबसे पिछला किबितका" (तम्बूघर) और "इच्छा" (१९३८-३९) ज्यादा जनप्रिय हैं। ब केर्बाबयेफ का बड़ा ऐतिहासिक उपन्यास "अनिक" (निश्चित पग) उपन्यास-परम्परा को आगे बढ़ा रहा है। मौलिक उपन्यासों के साथ-साथ पुराने नये बहुत से रूसी उपन्यासों के अनुवाद तुर्कमानी भाषा में छपे हैं।

तुर्कमान साहित्य तो कुछ पहले से भी आरम्भ हो गया था, किन्तु नाटक तो उपन्यास कहानी की तरह सोवियतकाल की देन है। संस्कृति के बढ़ने के साथ नाट्यकला का भी प्रचार बढ़ा, और १९२६ में पहला थियेटर अश्काबाद में स्थापित हुआ। बाजार अमानोफ ने "जोहरा और ताहिर" तथा दूसरे नाटक

लिखे। फिर मरद किलचयेफ़ ने 'प्रकाश' (१९३२) और "कराकुम" नाटिकायें लिखीं। सबसे बड़े तुर्कमान नाटककार अलती कर्लियेफ़ ने "आईना" और 'सोलहवाँ वर्ष' लिखा। काउशूतोफ़ का "जुमा" भी अच्छा नाटक है। मौलिक नाटकों के अतिरिक्त कितने ही रूसी तथा यूरोपी भाषाओं के नाटकों का तुर्कमान भाषा में अनुवाद हुआ है। "१६वाँ वर्ष" में १९१६ के तुर्कमान-विद्रोह का वर्णन है। एसेनोवा के "शमशाद" में एक करोड़पति के लड़की का जीवन लिया गया है। "जुमा" में सोवियत्-शासन-विरोधी बसमाचियों के उपद्रव के बारे में लिखा गया है। मौलिक तुर्कमान नाटकों में "शमशाद" बहुत ही जन-प्रिय है। युद्ध के दिनों में दुर्दी किलच, बेर्दी केर्बाबयेफ़, अतासालेह, करा सइतलियेफ़, रूही अलीयेफ़, लोशन एसेनोवा, द अगा मामेदोफ़ ने कई अच्छी कविताएँ की हैं।

जब १९४१ में कुर्बान दुर्दीयेफ तुर्कमान सैनिक को सोवियत् का सर्वोच्च सैनिक-पदक "सोवियत-संघवीर" मिला, तो बहुत से तुर्कमान कवियों ने उस पर कविताएँ लिखीं।

९. कला—

क्रान्ति से पहले तुर्कमानिस्तान में कोई थियेटर न था, किंतु १९३९ में उनकी संख्या २७ थी अश्काबाद के ओपरा-बैलेत-थियेटर का यश बहुत दूर तक फैला हुआ है और उसकी कीर्ति व ममेदोवा और दूसरे तुर्कमान-कलाकार बढ़ा रहे हैं।

१०. अश्काबाद

कराकुम रेगिस्तान और कोपेत्-दाग पर्वत-माला के बीच। में तुर्कमानिस्तान की राजधानी अश्काबाद बसी है। यह सूखा प्रदेश है, सूर्य का ताप गर्मियों में बहुत होता है और वर्षा कभी कभी देखने में आती है। अश्काबाद वस्तुतः इश्काबाद यानी प्रेमनगरी है। अब तो ऐसा नाम रखने का उसे हक हो

सकता है। यह हम कह चुके हैं, कि तुर्कमान घुमन्तुओं की बस्ती की जगह पर १८८२ में यह नगर बसाया गया। १८८५ में कास्पियन से आनेवाली रेल, यहाँ तक पहुँच गई और १९०६ में रेल आगे बुखारा और मध्य एसिया तक चली गई। तो भी सोवियत्-शासन से पहले यह एक छोटा सा व्यापारिक कस्बा और शासन-केन्द्र था। यहाँ कोई उद्योग-धन्धा न था। लेकिन जब से यह तुर्कमान प्रजातंत्र की राजधानी बना, तब से इसकी आर्थिक और सांस्कृतिक उन्नति तेजी से हुई। १९२० में इसकी जन-संख्या २६ हजार थी, लेकिन १९३९ में बढ़कर १,२६,६०० हो गई। शहर में सोवियत्-संघ के कोने कोने से आये हुए लोग पहले ही से थे। सोवियत्-काल में तुर्कमानों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ी। १९२६ की अपेक्षा १९३९ में अश्काबाद के नागरिकों में तुर्कमान ५½ गुना बढ़े। शहर में तुर्कमानों के अतिरिक्त रूसी, उक्रइनी, अर्मेनियन, आज़र्बाय-जानी, कज़ाक और तातार भी रहते हैं।

अश्काबाद अब एक बड़ा औद्योगिक केन्द्र है। यहाँ सूती रेशमी कपड़ों के कारखाने, मशीनियाइन, जूता, पोशाक, कान्च, अँगूरी मदिरा, मांस और आटे के कारखाने हैं। विशेषकर कान्च का कारखाना और मांस पैक करने का कारखाना बहुत विशाल है। रेशम और सूती कपड़े के लिए अब तुर्कमानिया को दूसरी जगह हाथ पसारने की जरूरत न होगी। तुर्कमानिस्तान के खेतों की कपास और तुर्कमान कीड़ापोषकों का रेशम यहीं कपड़े के रूप में परिणत किया जाता है। अश्काबाद का बिजलीघर तेल से चलाया जाता है और तेल की खान शहर से बहुत दूर नहीं है।

राजधानी अब सोवियत् तुर्कमानिस्तान का सांस्कृतिक केन्द्र भी बन गयी है। यहाँ ३२ हाईस्कूल, २० टेकनिकल स्कूल, ट्रेनिंग कालेज, कृषि-कालेज, मेडिकल कालेज और साहित्य-कालेज के चार कालेज तथा बहुत से वैज्ञानिक अनुसंधानशालाएँ और प्रयोगशालाएँ हैं। अश्काबाद में अपना सिनेमा स्तुदियो है, जिसमें तुर्कमान सामाजिक जीवन के फिल्म बनाये जाते हैं।

वैज्ञानिक संस्थाएँ, उद्योग और सार्वजनिक स्वास्थ्य की समस्याओं के हल करने में लगी हैं। इन अनुसन्धान-संस्थाओं के सामने एक खास महत्त्व-पूर्ण अनुसंधान है नमकीन पानी से भाप द्वारा मीठा जल बनाना और कारखानों के लिए सूर्य की धूप का इस्तेमाल करना।

तुर्कमानिस्तान के रेगिस्तानों में जहाँ पानी भी है, वह अधिकतर खारा है। कास्पियन-तट पर भी मीठे पानी का अभाव है, इसलिये किसी भी जगह की राष्ट्रीय उन्नति के लिए मीठे पानी का सवाल हल करना जरूरी है। वहाँ खारे पानी को भाप बनाकर नमक से अलग कर फिर मीठे जल में उतारना जल-प्राप्ति का एक मुख्य साधन है। तुर्कमानिस्तान सोवियत् का सबसे अधिक गर्म-स्थान है। आज वहाँ धूप से कारखाने चलाये जा रहे हैं। बड़े बड़े आग्नेय काचों से सूर्य की किरणों को संचित कर उससे कारखाने के लिये आग का काम लिया जाता है।

जिस तरह तेजी से अश्काबाद की आबादी बढ़ी है उसी तरह वहाँ घरों को बनाना भी आवश्यक था और आज जारशाही जमाने का वह पुराना कस्बा एक बड़ा यूरोपीय नगर सा मालूम पड़ता है। पत्थर, सीमेंट और फौलाद के उसके चौमहले, पँच-महले विशाल मकान और बीच में चलती चौड़ी सड़क नगर की शोभा ही नहीं, बल्कि लोगों के स्वास्थ्य और सुख को भी बढ़ा रही हैं। वहाँ की सड़कों पर अस्फाल्ट बिछा हुआ है और किनारे तूत और दूसरे छायावाले वृक्षों की पंक्तियाँ चली गई हैं। जगह जगह प्रशस्त चौरस्ते और विशाल उद्यान हैं। अंगूर और मेवों के बगीचे तो शहर में प्रायः गज-गज पर दिखलाई पड़ते हैं। सड़क के किनारे सीमेंट की पतली नहरों से पानी बहता रहता है। इसके अतिरिक्त नल के पानी का इन्तजाम घर-घर में है। अश्काबाद से कराकुम और कोपेत्-दाग की ओर मोटर की सड़कें गई हुई हैं।

११. नवीन पंच-वार्षिक योजना

तुर्कमानिस्तान सोवियत समाजवादी रिपब्लिक (तुर्कमान स. स. र.) की औद्योगिक उपज के मुख्य अंशों की योजना १९५० तक निम्न प्रकार से पूरी होगी :—

कोयला (टन)	६०,०००
पेट्रोल (")	११,०४,०००
बिजली (हजार किलोवाट)	१,५०,०००
सुपरफोस्फेट (टन)	५०,०००
सीमेंट (")	४०,०००
खिड़की-काच (वर्गमीतर)	२०,००,०००
सूती कपड़ा (मीतर)	२,२०,००,०००
ऊनी " (")	८,२०,०००
रेशमी " (")	८,२५,०००
मोजा (जोड़ा)	३१,००,०००
जूता (")	१४,७०,०००
मांस-टिन (डिब्बा)	४०,००,०००
मांस (टन)	७,०००
मक्खन (")	४००
खाद्य-तेल (")	२०,०००
नमक (")	१,६०,०००

तुर्कमान स. रा. र. के लिए १९४६-५० में १ अरब ६० करोड़ रूबल की

पूँजी लगाई जायगी, जिसमें प्रजातन्त्र के अधिकार वाले कामों में ३५ करोड़ ६० लाख रूबल लगाये जायेंगे।

३३,००० किलोवात की क्षमतावाले बिजली-पावर स्टेशन चालू किये जायेंगे, जिसमें ८,००० किलोवात क्षमता का एक भाप-टर्बाइन-स्टेशन और ४,००० किलोवात की क्षमता के कई छोटे छोटे पन-बिजली-स्टेशन तैयार होंगे। एक पेट्रोल की पाइप-लाइन बनेगी और करानाउ के फोस्फोराइट का इस्तेमाल किया जायगा। अश्काबाद कपड़ा-मिल का दूसरा विभाग और ५०,००० टन क्षमता का एक सीमेंट-कारखाना बनाकर चालू किया जायगा।

प्रजातंत्र के अधिकारवाले उद्योगों में ११,७०० किलोवात क्षमता-वाले बिजली-स्टेशन, ५०,००० टन क्षमतावाली कोयलाखानें, सूती कपड़ा मिलों में २२,००० तकुए, ४,००० तकुए की एक ऊनी मिल और २२ लाख स्टैन्डर्ड डिब्बों की क्षमतावाला एक तरकारी-कारखाना बनाकर चालू किया जायगा।

प्रजातंत्र के अधिकार के उद्योगों की उपज १९५० में ४६ करोड़ रूबल होगी, जिसमें स्थानीय अधिकार तथा औद्योगिक सहयोग-समितियोंवाले राजकीय उद्योगों की उपज १० करोड़ २० लाख होगी।

१९४६-५० में ४६५ कूप-स्थानों को तैयार कर पेट्रोल के औद्योगिक स्रोतों को बढ़ाया जायगा और इसी तरह गोर्दक क्षेत्र की स्वाभाविक गन्धक को १,३०,००० टन तक बढ़ाया जायगा; ओज़ोसेराइट भू-निधि की सर्वे की जायगी।

तुर्कमान स. स. र. में १९५० में ४,३३,००० हेक्तर में फसल बोई जायेगी, जिसमें ४,०६,००० हेक्तर कल-खोज के होंगे। अनाज की फसल १,५८,००० हेक्तर जिसमें कल-खोज के १,३८,०००; औद्योगिक फसल १,६१,०००, जिसमें कलखोज के १,४५,००० हेक्तर; तरबूजा, आलू और

दूसरी तरकारियाँ २६,०००, जिसमें कल-खोज के १८,००६ हेक्तर, और चारा-चारा की फसल ६५,००० हेक्तर, जिसमें कल-खोज के ६२,००० हेक्तर होंगे।

मुर्गाब और तेजेन नदियों की कछारों में अधिक जमीन की सिंचाई के लिए नहर का काम पूरा किया जायगा। १५,००० हेक्तर सिंचाई की जमीन बढ़ाई जायगी और २०,००० हेक्तर खेतों के लिए स्थायी जल मिलने का प्रबन्ध किया जायगा।

१६५० के अन्त में पशुओं की संख्या निम्न प्रकार होगी; घोड़े ६४,००० जिनमें कल-खोज के ५४,०००; ढोर २,०५,००० जिनमें कल-खोज के ४५,०००; भेड़-बकरियाँ ३४,३०,००० जिनमें कला-खोजों की २६,००,०००। कराकुल भेड़ों के बढ़ाने पर खास तौर से जोर दिया जायेगा।

तुर्कमान स. रा. र. के शहरों में योजनानुसार १६४६-५० में २,१०,००० वर्गमीतर फर्शवाले राज्यस्वामिक घर तैयार होंगे, जिनमें ३२,००० वर्गमीतर स्थानीय सोवियतों द्वारा बनाये जायेंगे। अश्काबाद की जल-कल बढ़ाई जायेगी। सेवेरेज (पाखाना-मोरी) का पहला विभाग चालू हो जायेगा और ट्रोली बसें भी चलने लगेंगी।

सांस्कृतिक विकास और स्वास्थ्य-रक्षा के क्षेत्र में मुख्य करणीय हैं— १६५० तक स्कूलों की संख्या १, १०२ और विद्यार्थियों की २,०३,००० पर पहुँच जायेगी। अस्पतालों में ८,००० चारपाइयाँ होंगी।

५

ताजिकिस्तान प्रजातंत्र

क्षेत्र-फल	५५,००० वर्गमील
जन-संख्या	१४,८५,०००

राजधानी—स्तालिनाबाद, जन-संख्या—१,००,०००

१. भूगोल

सारा ताजिकिस्तान कश्मीर की तरह का पहाड़ी इलाका है और है भी यह कश्मीर की सीमा से करीब-करीब मिला हुआ। दोनों की सीमाओं में सिर्फ ७ मील का अन्तर है। वस्तुतः यह अन्तर भी जान-बूझकर रखा गया है। रूसी और ब्रिटिश-साम्राज्य की सीमा एक दूसरे से मिल न जायँ, इसीलिए बीच की पतली चिट अफगानिस्तान को दे दी गई थी। उस वक्त जनता (ताजिक) की कोई पूछ नहीं थी, इसलिये मालिक लोग मनमाना बटवारा करते थे। ताजिकिस्तान की पूर्वी सीमा चीनी तुर्किस्तान से मिलती है और दक्षिणी सीमा पर अफगानिस्तान है। थ्यान्शान् और पामीर पर्वत-मालाओं का यहीं मिलन होता है और पामीर-प्रदेश तो सारा ताजिकिस्तान के भीतर आता है। पामीर कहने से मालूम होता है, कि यह कोई दूसरी ही पर्वत-माला होगी, किन्तु है यह वस्तुतः हिमालय का ही पश्चिमांश।

सारा ताजिकिस्तान पहाड़ी इलाका है। पहाड़ तह पर तह ऊँचे होते चले गये हैं। इन पहाड़ों के भीतर कहीं गहरी उपत्यकाएँ हैं, कहीं कहीं रेगिस्तान जैसी चौरस जगह है। कितनी ही जगह पर्वत-वक्ष मेवों के बागों और अंगूर की

लताओं से ढँका है। पर्वत-सानुओं पर कपास के बड़े बड़े खेत लहराते हैं। कितने ही पहाड़ नंगे हैं, उन पर वृक्ष वनस्पतियों का नाम नहीं है। कितने ही पर्वत हैं, जिनके निम्न भाग पर पिस्ता, बादाम, तूत आदि के बाग हैं, बिचले भाग पर जंगल और ऊपरी पठार में घास की चरागाहें हैं अधित्यकाओं में कहीं रेत के मैदान हैं, तो कहीं वृक्षों के जंगल, और कहीं घास के मैदान। कितनी ही २३ हजार फ़ुट ऊँची चोटियाँ हैं, जिनके पास विशाल हिमानियाँ फैली हुई हैं। त्यान्-शान् पर्वत-माला में स्तालिन-शिखर है, जिसकी ऊँचाई २४ हजार फीट है, वह सोवियत् का सर्वोच्च पर्वत-शिखर है। उससे कुछ दूर पर लेनिन शिखर है, जिसकी ऊँचाई २३,४०० फीट है। ताजिकिस्तान में ही फेदचेंको हिमानी (ग्लेसियर) है, जिसकी लम्बाई ४८ मील है और पड़ोस की हिमानी को ले लेने पर वह ८८ मील हो जाती है। यह दुनिया की सबसे बड़ी हिमानियों (ग्लेशियरों) में से है।

२. इतिहास

ताजिक ईरानी जाति से सम्बन्ध रखते हैं। हिन्दी-आर्यों के ये नजदीक के सम्बन्धी हैं। हम अन्यत्र बतला चुके हैं, कि कैसे शकार्य वंश की एक शाखा आर्य वोल्गा-उपत्यका से दक्षिण और पूरब की तरफ बढ़ी। एक ओर उन्होंने काकेशस से पामीर तक को अपने हाथ में कर लिया था और सिन्धु-सभ्यता की भगिनी ख्वारेज्म-सभ्यता को पराजित कर तथा स्वयं उस सभ्यता द्वारा पराजित हो वहाँ बस गये। इन्हीं की एक शाखा भारत आई, जिसे भारतीय आर्य या हिन्दी-आर्य कहा जाता है।

दूसरी शाखा ईरान तक फैल गई। शायद एक बीच की शाखा थी, जो कहीं पामीर में रह गई। पीछे सुग्ध (सोग्द) या जरफशाँ की उपत्यका बहुत समृद्ध हुई और वहाँ के निवासी सोग्दीय नाम से प्रख्यात हुए। सिकन्दर के मध्य-एसिया पर आक्रमण करते वक्त (३२६ ई० पू०) सोग्दीय लोग बड़े,

पराक्रमशाली थे। उन्होंने सिकन्दर को चैन न लेने दिया। सोग्दीय जाति का दुर्भाग्य था, कि उसके उत्तर में सिरदरिया के पार शक घुमन्तू रहते थे। हूणों के प्रहार के बाद ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी में जब शक सोग्द की तरफ भागने के लिए मजबूर हुए, तो घुमन्तू हूणों और उसके बाद उनकी घुमन्तू सन्तान तुर्कों ने सिर-दरिया के पार को अपनी विचरण-भूमि बनाया जहाँ से टिड्डी-दल की तरह वह जब तक सोग्द-देश पर पड़ते थे, इसके लिए सोग्दों को बहुत सजग रहना पड़ता था।

ईसा की पाँचवीं सदी के अन्त तक जरफशाँ की उपत्यका में सोग्द-जाति बसती रही। यद्यपि उसमें शक भी आ मिले थे, किन्तु ये दोनों जातियाँ एक दूसरे से इतनी समीप थीं, कि उनके मिश्रण से कोई जाति-भेद नहीं हो सकता था और आगन्तुक भी उन्हीं में मिलकर सोग्द हो जाते रहे—उसी तरह जिस तरह पंजाब में शक, जाट, गूजर, गद्दी —हिन्दुओं में मिल एक जाति बन गये। बल्कि इतना फर्क था, कि सोग्द में जाति-भेद-व्यवस्था इतनी कठोर नहीं थी।

किंतु छठीं सदी में जब तुर्कों का काफिला सिर-दरिया पारकर दक्षिण की ओर बढ़ा, तो एक नई भाषा और नई जाति का समागम हुआ। तो भी सातवीं सदी में अरबों के राज्य की स्थापना तक तुर्क इतनी कम संख्या में आये थे और घुमन्तू जीवन बिता रहे थे, कि अब भी सिर और आमू-दरिया के बीच के ग्रामों, नगरों में सोग्दीय जाति का ही बाहुल्य था। अरबों ने यद्यपि अरबी भाषा को महत्त्व दिया, लेकिन अब्बासी वंश की स्थापना के बाद खुरासानी ईरानियों का वहाँ प्रभाव बढ़ा और बड़े बड़े पदों पर खुरासानी नियुक्त होने लगे। दसवीं सदी में सामानी वंश का राज्य मध्य-एसिया में स्थापित हुआ। वह मूलतः खुरासानी था। इस तरह धीरे-धीरे जरफशाँ उपत्यका में सोग्दीय भाषा का स्थान खुरासानी पारसी लेने लगी। तेरहवीं सदी तक सोग्दीय भाषा बहुत कम रह गई और अब तो जिसे हम ताजिकी भाषा कहते हैं, वह वस्तुतः सोग्दीय नहीं, बल्कि खुरासानी पारसी का ही आधुनिक रूप है।

सोग्दीय भाषा के सातवीं सदी के बहुत से हस्तलेख १९३२-३३ में समरकन्द के पास मुग् पर्वत में मिले। यह समरकंद के तुर्क शासक तग्शन दीवास्ती के दफ्तर के पत्र हैं। दीवास्ती ने अरबों से अपनी स्वतंत्रता सुरक्षित रखने के लिए आखिरी लड़ाई लड़ी। उसने चीन से मदद लेने की बहुत कोशिश की। किंतु अंत में सोग्द-देश अरबों के हाथ में जाके रहा। अरब इतनी कम संख्या में बुखारा आदि शहरों में बसे थे, कि इस्लाम की पूर्ण विजय होने पर भी वहाँ की भाषा में कुछ हजार शब्द देने के अतिरिक्त वह और कोई प्रभाव नहीं डाल सके। लेकिन सामानी वंश की समाप्ति के साथ फिर उत्तर से तुर्की (कराखानी) कबीलों का आगमन शुरू हुआ और जातियों का मिश्रण बढ़ने लगा, और आगे वहाँ की भाषा तुर्की हो गई, और फारसी-भाषा-भाषी आधुनिक सोग्द संतानें समरकंद-बुखारा जैसे कुछ शहरों तथा कितने ही गाँवों तक ही में सीमित रह गईं।

लड़ाइयों में हर पराजय के बाद आत्म-रक्षा और संस्कृति-रक्षा के ख्याल से सोग्द-निवासी बराबर पहाड़ों की तरफ भागते रहे और पहाड़ों में बसे अपने पहले के बंधुओं को प्रभावित करते रहे। आज वही लोग इन पहाड़ों में ताजिक के नाम से पुकारे जाते हैं। ताजिक वस्तुतः ताज़ी शब्द का अपभ्रंश है, जो कि अरबों के लिए इस्तेमाल होता था। संभव है पहाड़ी सोग्द ताज़ी (अरब) इलाके से आये तथा अपने से कुछ भिन्न-भाषा बोलते अपने सोग्दीय बंधुओं को इस नाम से पुकारने लगे। और पीछे यही उनका नाम हो गया। ऊपरी ज़रफ़शां में गलचा भाषा बोलनेवाले लोग बहुत कुछ पुराने सोग्द की भाषा और रूप रंग को सुरक्षित रक्खे रहे, लेकिन उन पर भी ताजिक प्रभाव इतना पड़ता गया, कि आज उनके थोड़े से गाँव यग्नाब नदी के किनारे रह गये हैं। और वह भी दोभाषिया बनकर ऐसी स्थिति में पहुँच गये हैं, कि डर है कि कुछ समय बाद कहीं उनकी पुरानी भाषा लुप्त न हो जाये। इसमें शक नहीं, सोवियत् के भाषा-शास्त्रियों ने उनके

भाषा-व्याकरण एवं लोक-कथाओं को जमा करके सुरक्षित करने की कोशिश की है। उनकी भाषा द्वारा स्कूलों में पढ़ने का प्रबन्ध भी किया गया है, किन्तु शिक्षा संस्कृति और औद्योगिक तल जितनी तेजी से सारे ताजिकिस्तान का ऊपर उठ रहा है, और खुद यग्नाबी लोग जिस तरह से शिक्षा आदि में बढ़ रहे हैं, उससे सन्देह होता है कि यह चंद गाँव अपनी भाषा की रक्षा न कर सकेंगे। इसी तरह ताजिकिस्तान के दक्षिण-पूर्व पामीर (गर्नो-बदख्शां) इलाके में भी ताजिक भाषा से कुछ थोड़ी भिन्नता रखनेवाली भाषा बोली जाती है। किन्तु वहाँ भी सारे ताजिकिस्तान की प्रगति का प्रभाव पड़ रहा है, जिससे कुछ समय बाद वह भी भाषा आदि में ताजिकों जैसे ही हो जायेंगे।

वस्तुतः मनुष्य-जाति स्थावर प्राणी नहीं है, इसलिये उसका मिश्रण और प्रगति होकर एक नये रूप में परिणत होना अनिवार्य है। भाषाओं के इन थोड़े-थोड़े से भेदों के बाद भी ताजिकिस्तान के सारे ताजिक उसी हिन्दू-ईरानी जाति से सम्बन्ध रखते हैं, जिसे उत्तरी हिन्दुस्तान और ईरान में देखा जाता है। आर्थिक दृष्टि से एकाध अंशों को छोड़कर ताजिकिस्तान कभी समृद्ध देश नहीं था। ऊपर से यहाँ लोगों की लड़ाकू प्रवृत्ति थी। इसीलिए वह बाहर वालों के दिलों में प्रलोभन नहीं पैदा कर सका। हाँ, लड़ाइयों में शरणार्थियों, और आक्रमणकारियों के युद्ध अक्सर यहाँ हो जाया करते थे। जो सिर और आमू-दरिया के बीच की भूमि का स्वामी होता, उसे यह पहाड़ी लोग भी अपना स्वामी मान लेते, और हिमालय के पहाड़ी राजाओं की तरह दरबार में कुछ वार्षिक भेंट भेज दिया करते थे। इस तरह बाहर के किसी अमीर या सुल्तान के अधीन होने पर भी इन पहाड़ों में हर उपत्यका का अपना अपना राजा होता। इनमें से बहुत तो अपने को विजयी सिकंदर का वंशज मानते थे। दरवाज, बदख्शां आदि के शासक अभी बीसवीं सदी के आरंभ तक ऐसा दावा करते थे। इसमें शक नहीं, नीचे की भूमि में ताज और तख्त खोकर बहुत से राजा यहाँ पहुँचे होंगे। हो सकता है, शकों के आक्रमण के बाद कुछ

यूनानी राजकुमार वक्षु-उपत्यका और पंजाब एवं कश्मीर से भागकर यहाँ पहुँचे हों। इसी तरह तुर्कों के प्रहार से भागे शक राजवंशों भी इन पहाड़ों में शरण लिये हों। और ऐसे ही आगे भी होता रहा हो। किंतु राजवंशों के बराबर होते रहते हेर-फेर में यह कहना बहुत मुश्किल है, कि सिकंदर या यूना-नियों का वंश यहाँ कहीं पर बराबर अक्षुण्ण रहा।

अस्तु, नाम मात्र या पूरी तौर से नीचे के शासकों के अधीन रहते बीसवीं सदी के आरम्भ में आधुनिक ताजिकिस्तान का प्रायः सारा भाग बुखारा के अमीर के अधीन था। हाँ, यहाँ यह भी एक बात याद रखनी है, कि ताजिक लोग सिर्फ ताजिकिस्तान में ही नहीं बसते हैं, उनकी बस्तियाँ सिर-दरिया पर अवस्थित आधुनिक लेनिनाबाद (पुराना खोजंद) से काबुल शहर के कुछ मील तक लगातार चली आई हैं। इस सारे इलाके में ताजिक लोग बसते हैं और ताजिक भाषा बोली जाती है। अफगानिस्तान के ताजिकों की संख्या के बारे में ठीक ठीक कुछ कहना कठिन है, लेकिन वह ताजिकिस्तान के ताजिकों से अधिक हैं, इसमें कोई संदेह नहीं। अगर जातियों के आत्मनिर्णय के सिद्धांत को माना जाय, तो ताजिकिस्तान लेनिनाबाद से कोहदामन (काबुल के पास) तक समझा जाना चाहिए। आज ताजिकिस्तान के ताजिक उस स्वतंत्रता और समृद्धि को भोग रहे हैं, जिसका हम यहाँ वर्णन करने जा रहे हैं। और उधर अफगानिस्तान के शासन के नीचे रहनेवाले ताजिक मध्यकालीन अज्ञानान्धकार और निरंकुशता के शिकार हैं। यदि इन ताजिकों के दिलों में सीमा-पार के अपने भाइयों की समृद्धि के बारे में सुन-सुनकर एक टीस पैदा होती हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। वस्तुतः यहाँ भी वही समस्या मौजूद है, जो पश्चिमी बेलोरूसिया, पश्चिमी उक्रइन, करपाथिया, और बेसराबिया में थी और जिसका समाधान दूसरे महायुद्ध के बाद ही हो सका। अफगानिस्तान, ईरान और तुर्की तीनों अपनी पड़ोसी जातियों और उनकी भूमि को दबाये बैठे हैं। विश्व शांति के ख्याल से चाहे उसके लिए कोई भयंकर कदम न उठाया जाय, लेकिन इसमें

समस्या के अस्तित्व से इनकार नहीं किया जा सकता। सोवियत् की जातियाँ पूर्ण स्वतंत्रता का उपभोग कर रही हैं। वहाँ कोई एक जाति दूसरी जाति के अधीन नहीं है। आर्थिक बातों में हरेक को पूरी सहायता प्राप्त है, बल्कि जो जाति जितनी पिछड़ी हुई है, उसे आगे बढ़ाने के लिए, उतना ही अधिक धन और श्रम खर्च किया जाता है। सोवियत् के लोग जानते हैं, कि आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से पिछड़ी हुई जातियाँ समानता और भाईचारे के पूरे आनंद को नहीं प्राप्त कर सकतीं। यही कारण है, जो सोवियत् सरकार ताजिक राजधानी स्तालिनाबाद को मास्को और लेनिनग्राद की कक्षा में बिठाना चाहती है। सोवियत् के ताजिकों, उजबेकों, तुर्कमानों की आर्थिक सांस्कृतिक समृद्धि को सीमा से लगे हुए अफगानिस्तान के उनके सहोदरों से छिपाया नहीं जा सकता। बल्कि सोवियत् आजुरबाइजान का तो ईरानी आजरबाइजान पर सीधा प्रभाव पड़ा था और एक साल तक उसने अपने भाग्य को अपने हाथ में सम्हाल लिया था। लेकिन फिर अंग्रेज-अमेरिकन साम्राज्यवादियों की शह से ईरानी आजरबाइजान को फिर मूक बनाना पड़ा। तुर्की ने भी आर्मेनिया और गुर्जी के कुछ इलाकों को दबा रक्खा है, और आर्मेनिया के मांगने पर त्याग करने को तैयार नहीं। किंतु कितने दिनों तक न्याय को रोका जायेगा?

हाँ, तो बीसवीं सदी के आरंभ में ताजिकिस्तान पूर्वी बुखारा के नाम से अमीर बुखारा का एक सूबा था : और सबसे पिछड़ा और दरिद्र सूबा। यहाँ के पहाड़ी कुली का काम करने के लिए खोकंद, खोजंद, समरकंद, बुखारा आदि शहरों में आया करते थे। उनकी ईमानदारी सीधा सादापन लोगों के परिहास की चीज थी। नागरिक लोग उन्हें 'दाखुदो' या पहाड़ी बुद्धू कहकर पुकारते थे। उनकी अपेक्षा उनकी स्त्रियों की माँग अधिक थी, क्योंकि वह अधिक गोरी और सुन्दर होती थीं : और अमीर, हाकिम, सरदार और धनी लोग उन्हें अपने हरम (अंतःपुर) में दाखिल करने को लालायित रहते थे। १९१७ की क्रांति आई, जिसका असर मध्य-एसिया पर पड़ना जरूरी था। क्रांति की बाढ़ को

अमीर-बुखारा ने रोकना चाहा, लेकिन उसके एक थपेड़े से बहकर उसे १९२० में अफगानिस्तान भागना पड़ा। अमीर-बुखारा की सल्तनत को वहाँ के मध्यम वर्ग 'जदीद' (नवीन) ने करेंस्की की तरह सम्हालना चाहा, लेकिन यह वैसी क्रांति नहीं थी, कि आसमान से टपककर वृक्ष की चोटी पर लटकी रहे। हाँ, संघर्ष जरूर जबर्दस्त रहा, और इस संघर्ष में जदीदों की सहायता कमालपाशा के डर से तुर्की से भगे अनवरपाशा ने भी करनी चाही; लेकिन उसे अपनी जान गँवाने के सिवा और कोई फायदा नहीं हुआ। १९२५ तक डाकुओं ने मजहब के गाजी बनकर उसी तरह उपद्रव मचाया, जिस तरह आजकल कश्मीर में हो रहा है। कश्मीर के पहाड़ी इलाके में इन डाकू-गाजियों का आक्रमण कुछ साल तक चलता रहेगा। ताजिकिस्तान में डाकू गाजियों (बसमाचियों) को लोगों ने अच्छी तरह समझ लिया। अफगानिस्तान की सरहद से पचासों मील अन्दर तक गाजियों ने गाँव के गाँव जला दिये; औरत-बच्चों-बूढ़ों तक को मार डाला, लेकिन ताजिक जन-साधारण न इन गाजियों के आतंक से डरे और न इस्लाम के नाम से धड़ाधड़ निकलते मुल्लों के फतवों से। १९२५ में अमीर-बुखारा के नायब भूतपूर्व डाकू इब्राहीम बेग को सब कुछ खोकर, जान बचा अफगानिस्तान भागना पड़ा। अंग्रेजों की दी हुई बंदूकें और पैसे अकारथ गये, और चर्चिल ताजिकिस्तान के पहाड़ों से बोलशेविकों के पैर उखाड़ नहीं सके।

क्रांति से पहले ताजिकिस्तान बहुत ही पिछड़ा हुआ देश था। सबसे अच्छे खेत, चरागाहें, और सारी नहरें अमीर-बुखारा और उसके बेकों और शाहों की वैयक्तिक संपत्ति थी। खेत की उपज का ८० प्रतिशत लगान और नाना भाँति के करों में निकल जाता था। अधिकांश ताजिक पशु-पालन करते। उद्योग-धंधों का बिल्कुल अभाव था। १९१४ से जरा ही पहले उत्तरी ताजिकिस्तान में कोयला और तेल निकाला जाने लगा था, लेकिन उपज कुछ हजार टन से अधिक न बढ़ी। वहाँ अज्ञान, मिथ्याविश्वास और निरक्षरता का

अमीर का साम्राज्य था। ९५ प्रतिशत ताजिक लिख पढ़ सकते थे। स्त्रियों की अवस्था के बारे में तो कुछ पूछना ही नहीं। वह खरीद-फरोख्त की चीज थीं, और पेट भरे ताजिक के घर की होने पर उन्हें फ़रंजा (बुर्का) पहनने के लिए मजबूर होना पड़ता—वस्तुतः वह चहारदीवारी के भीतर कैद रहती। रूसी बोलशेविकों की सहायता से ताजिकों ने अमीर के जुये को उखाड़ फेंका और १९२४ में उन्होंने अपना स्वायत्त समाजवादी सोवियत्-प्रजातंत्र कायम किया, जो पाँच साल बाद १९२९ में संघ-प्रजातंत्र के रूप में परिणत हो गया। आज वह सोवियत-संघ के उन १६ प्रजातंत्रों में है, जिन्हें संघ के भीतर रहने न रहने का पूरा अधिकार है।

ताजिकिस्तान की १५ लाख में तीन-चौथाई जन-संख्या ताजिकों की है। उत्तर-पश्चिमी कोने में उज्बेक भी रहते हैं। कितने ही स्थानों पर किरगिज और कितने ही परिवार रूसियों के भी बसते हैं। पामीर के पास की अधित्यका में—जो कि हिन्दुस्तान से सबसे समीप पड़ती है—गर्नो-बदख्शाँ स्वायत्त जिला है, जिसकी राजधानी खरोग है। यहाँ अधिकतर ताजिक और किरगिज रहते हैं।

२. कृषि

ताजिकिस्तान में कृषि के लिए नहरों की अनिवार्य आवश्यकता है। यहाँ वर्षा इतनी पर्याप्त नहीं होती, कि उसी के बल पर सब जगह खेती हो सके। पहले जमाने में भी जो कुछ होता था, नहरों के बल पर ही होता था; लेकिन उस समय नहरें बहुत कम और छोटी छोटी थीं। सोवियत्-सरकार ने नहरों के बनाने के लिये अपने खजाने का दरवाजा खोल दिया, और पश्चिमी ताजिकिस्तान और पास के पहाड़ों में विशाल नहरें बनाई गईं। सोवियत्-शासन में बनी इन विशाल नहरों में से कुछ के नाम हैं—वख्श (संस्कृत में प्रसिद्ध वक्षु नदी के पहाड़ी भाग में अवस्थित है) महानहर, उत्तरीय फर्गाना-नहर और हिसार नहर। १९१८ में सिंचाई की जमीन सवा सात लाख एकड़ थी। आज सिंचाई की बदौलत उपत्यकाओं और पर्वत-सानुओं पर कपास और चावल के

खेत फैले हुए हैं, जिनके कुछ नव-तोड़ जमीन में आबाद किये गये हैं। १९३७ में इन खेतों का क्षेत्रफल पौने तीन लाख एकड़ था, जो कि सोवियत शासन के पहले से ६ गुना अधिक है। पहले कपास सिर्फ पश्चिमोत्तर भाग में बोई जाती थी, लेकिन अब मध्य और त्यानूशान् के दक्षिण में भी लम्बे रेशोंवाली मिस्री कपास बोई जाती है। १९३९ में मिस्री कपास एक लाख एकड़ जमीन में बोयी गयी। सोवियत् संघ में मिस्री कपास उपजाने का यह प्रधान केन्द्र है। १९२९ में कपास की औसत उपज प्रति-एकड़ डेढ़ टन थी, जो कि अब चार और साढ़े चार टन हो गई है। सदियों तक किसानों को छोटी छोटी नहरें खोदकर अपने खेतों की प्यास बुझानी पड़ती थी। इससे वह कम ही खेतों में कपास, चावल या मेवाबाग लगा सकते थे। और फिर इन छोटी नहरों का खुलकर इस्तेमाल नहीं कर सकते थे, क्योंकि नहरें अमीर और जागीरदारों की सम्पत्ति थीं। आज वह राष्ट्रीय सम्पत्ति है।

ताजिकिस्तान अपने मेवों के लिये मशहूर है और अब नहर-सिंचित बागों में बढ़िया खूबानी तथा मधुरतम अंगूर होते हैं। सेव, अनार, बादाम, पिस्ता, अखरोट अपने गुणों में ही नहीं, बल्कि मात्रा में भी बहुत अधिक पैदा होते हैं। यही नहीं, वक्षु-उपत्यका में ऊख भी बोई जाने लगी है। अब तक यह हिन्दुस्तान की चीज समझी जाती थी। असिंचित भूमि (लालमी) में जौ गेहूँ बोया जाता है, ऐसी भूमि १५ लाख एकड़ है, जो प्रथम विश्वयुद्ध की अपेक्षा तीस प्रतिशत अधिक है। अनाज और अंगूर अब ऐसी ऊँचाइयों पर भी उपजाया जाने लगा है, जहाँ यह फसलें होती नहीं थीं—६ हजार फीट से ऊपर अंगूर और १० हजार फीट से ऊपर भी जौ पैदा होने लगे जा सकते हैं। पहाड़ी चरागाहों में लाखों की तादाद में घोड़े, ढोर, भेड़ बकरियाँ चरती हैं। ताजिकिस्तान की हिसारवाली भेड़ें दुनिया की सबसे बड़ी भेड़ें हैं, जहाँ तक मुटाई और कदावर होने का सम्बन्ध है। यहाँ कराकुल भेड़ें भी बड़ी संख्या में पाली जाती हैं।

ताजिकिस्तान प्रजातन्त्र

उज्बेकिस्तान और ताजिकिस्तान का कपास की फसल में बहुत बड़ा हाथ है। उज्बेकिस्तान सारे सोवियत् की कपास का आधा पैदा करता है। ताजिकिस्तान क्षेत्रफल में छोटा होने पर भी कुल का दशांश पैदा करता है। लेकिन ताजिक खेतों की खूबी यह है, कि वह बहुत बड़े परिमाण में मिस्री कपास पैदा करते हैं, जिसके कपड़े अच्छे और अधिक टिकाऊ होते हैं। कपास एक ऐसी फसल है, जिस पर किसान को बहुत ध्यान रखना पड़ता है। हर वक्त देख-भाल करनी होती है। जोतने-सींचने में काफी मेहनत और खाद भी उसे खूब चाहिए। १९४४-४५ का जाड़ा बहुत लम्बा और कड़ा था। बसन्त भी देर से आया, जिससे फसल बोने का कितना ही समय निकल गया, लेकिन किसानों ने बड़ी तेजी से काम लिया। निश्चित अवधि से पहले ही बुवाई उन्होंने खतम कर दी। ऐसा करने का एक कारण यह भी था, कि मशीन ट्रैक्टर स्टेशन अपनी ड्यूटी में मुस्तैद रहे। वख्श-उपत्यका मिस्री कपास पैदा करने के लिए सबसे अनुकूल स्थान है। मध्य-एसिया की सभी जगहों से यहाँ गर्म मौसम अधिक दिनों तक रहता है। यह मौसम लम्बे रेशे के मिस्री कपास के लिए बहुत अनुकूल है। पहले यह विशाल भूखंड पानी के बिना विफल और प्यासा पड़ा था। यद्यपि वख्श नहर का निर्माण समाप्त हो चुका था; परंतु युद्ध आरंभ हो जाने के कारण भली-भाँति उसे उपयोग में न लाया जा सका था। १९४५ में किसानों ने उसे उपयोग में लाना शुरू किया और अब इस नहर से वे खूब काम ले रहे हैं। वहाँ आदमियों की कमी थी। युद्ध-समाप्ति के बाद ताजिकिस्तान के अन्य भागों से १४९२ और दूसरे प्रजातंत्रों से ४२०० किसान-परिवार आकर यहाँ बस गये। पानी, खेत और मशीन की सुविधाओं ने वख्श-उपत्यका को अब एक दूसरा ही रूप देना आरंभ किया है। यह विस्तृत वख्श-उपत्यका पहिले अपनी गर्मी और जलाभाव के कारण अभिशप्त अहल्या समझी जाती थी।

१९४६ में वसन्त का देर से आगमन आतंक पैदा कर रहा था, कि

शायद फसल योजना के अनुसार न होगी। लेकिन किसान तुले हुए थे और जमीन का कोई बहाना सुनने को तैयार न थे। अगस्त और सितम्बर में उन्होंने फिर कपास के खेतों की बीच बीच में छूटी हराइयों की जुताई की, खाद डाली और अतिरिक्त पानी दिया इतनी सेवा के बाद कपास क्यों न अधिक प्रफुल्लित होती? ऊपर से एक कलखोज के किसानों ने दूसरों से, एक टोली ने दूसरी टोली से होड़ बांधकर लोढ़ना शुरू किया। अधिकांश लोढ़कों ने इस तरह होड़ लगा दैनिक योजना से अधिक कपास लोढ़ा। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात थी, क्योंकि अधिकांश कपास सरदी पड़ने से पहले ही फूलना बंद करने लगती है और सरदी में हाथ से लोढ़ाई भी मुश्किल हो जाती है। परन्तु किसान तो तब लोढ़ने का काम मशीन से ले रहे थे।

सिंचाई खतम होने के बाद किसान बेकार नहीं बैठते। उन्हें अगले वसन्त के लिए खेत तैयार करना होता है। जाड़ों में वह स्थानीय खाद जमा करते हैं। ट्रैक्टरों और कृषि-मशीनों की मरम्मत करके उन्हें ठीक-ठाक करते हैं। वह कपास के महत्त्व को जानते हैं। ताजिक किसान कपास को "सफेद सोना" कहते हैं।

४. यातायात

ताजिकिस्तान की कश्मीर से तुलना की जा सकती है, किन्तु सिर्फ कश्मीर-उपत्यका ही नहीं, गिलगित और लदाख को भी यदि उसमें शामिल कर लिया जाये, तब कृषि और मेवों के लिए दोनों एक से हैं। वहाँ खनिज-सम्पत्ति क्रान्ति से पहले अज्ञात सी थी, किन्तु पंचवार्षिक योजनाओं के आरम्भ होने के बाद एक पर एक विशाल अभियान भेजे गये और वहाँ की सारी सम्पत्ति बड़े पैमाने पर सर्वे की गई—जमीन के ऊपर ही ऊपर नहीं बल्कि नीचे खोद खोद करके पता लगाया गया। आज वहाँ की सम्पत्ति आईने की तरह साफ साफ दिखाई पड़ती है। ताजिक लोग शकल-सूरत में

ही कश्मीरियों से नहीं मिलते, बल्कि गरीबी तथा अज्ञान में भी वे कश्मीरियों के बराबर थे। लेकिन आज यह भूली बात हो गई है। ताजिकों ने सोवियत्-शासन के बाद अपनी आर्थिक स्थिति को कितना उन्नत कर लिया है, इसका आभास आपको वहाँ के रेलों और मोटर की सड़कों से मिलेगा। क्रान्ति से पहले वहाँ रेल और मोटर की सड़कों का नाम तक न था। ताशकन्द-समरकन्द होते तथा बुखारा के पास (कगान) से गुजरते रेल उज्बेकिस्तान में अफगान सीमास्थ आमू (वक्षु) के तट पर तिर्मिज़ में खतम हो जाती थी। १७-१८ साल हो गये, कि दुर्गम पहाड़ों को फाँदती हुई रेल स्तालिनाबाद पहुँच गई। आज मास्को से सीधे स्तालिनाबाद आप एक ही ट्रेन में जा सकते हैं। तिर्मिज़ का तापमान गर्मियों में सारे सोवियत् में सबसे अधिक ऊँचे जाता है। यहाँ से रेल कुछ दूर तक समतल भूमि पर जाकर आमू दरिया की एक शाखा काफिर-निहाँ की उपत्यका में घुसती है और फिर पहाड़ों पर चढ़ने लगती है। हवा और पानी ने युगों से प्रहार करके इस दर्रे के पहाड़ों को खोद डाला है। इन पहाड़ों के ऊपर पिस्ता, बादाम, अखरोट के जंगल लगे हुए हैं, और ऊपर की चरागाहों में हिसारी भेड़ों और प्रसिद्ध लोकई घोड़ों के बड़े बड़े गल्ले चरा करते हैं। नीचे की ओर नहर-सिंचित कपास के खेत हैं। गाँवों के चौरस छतोंवाले घरों के पास लम्बे सफेदे लगे हुए हैं। इन पहाड़ों से होते रेल स्तालिनाबाद पहुँचती है। स्तालिनाबाद पहले दोशम्बे के नाम से प्रसिद्ध एक दीन-हीन कस्बा था, जहाँ दोशम्बा (सोमवार) को हाट लगा करती थी। लेकिन उसका आज के सवा लाख की आबादीवाले इस नगर से वही सम्बन्ध है, जो सुदामा की झोपड़ी का महल से। स्तालिनाबाद के बारे में हम फिर कहेंगे।

पहले पश्चिमी ताजिकिस्तान में आदमियों और टट्टुओं के जाने की पगडंडियाँ ही यातायात का एकमात्र साधन थीं। आज स्तालिनाबाद से मास्को नियमित रूप से विमान जाते-आते हैं। यही नहीं, ताजिकिस्तान

के एक इलाके का दूसरे इलाके से भी अपना भी विमान-सम्पर्क है, बल्कि ताजिकिस्तान में पहियों से पहले विमान ही पहुँचे थे। यहाँ विमान यातायात का घना जाल सा बिछा है।

स्तालिनाबाद से मोटर-सड़क पछोश की वख्श-उपत्यका को जाती है, जो कि थोड़े समय पहले बिल्कुल निर्जीव भूमि थी। आज नहरों ने उपत्यका की काया पलट दी है, यह हम बतला आये हैं। अब यहाँ हर जगह कलखोजी गाँव और उनके विशाल खेत फैले हुए हैं। कितने ही परिवार पामीर के दुर्गम दरों से आकर यहाँ बस गये हैं। नहरों का काम चलता ही जा रहा है और शक्तिशाली खोदक मशीनें नई नहरें खोद रही हैं।

कुर्गानतप्पा वख्श-उपत्यका की सुन्दर नगरी है। इसने चन्द सालों में ही गाँव का रूप छोड़कर नया रूप धारण किया है। उपत्यका की कपास ओटने के लिए मध्य-एसिया की सबसे बड़ी ओटन मिल यहाँ है। आटा पीसने की भी एक बड़ी मिल है, ऊख से चीनी बनाने का कारखाना बनने जा रहा है। कुर्गानतप्पा एक बड़े औद्योगिक केन्द्र के रूप में विकसित हो रहा है। इस उपत्यका में अंजीर, अनार, जैतून के बाग लगते जा रहे हैं। कुर्गानतप्पा से छोटी रेलवे-लाईन आमू-दरिया के किनारे पंज तक गई है।

स्तालिनाबाद से उत्तर की दुर्गम पहाड़ियों से जरफशां उपत्यका में पहुँचना बहुत मुश्किल काम था। आज वहाँ से एक मोटर-सड़क जरफशां उपत्यका को पार करती सिर-दरिया के तट पर फर्गाना-उपत्यका में पहुँचती है। इस सड़क को हिसार, जरफशां और तुर्किस्तान की पर्वत-शृंखलायें पार करना पड़ता है। यह सड़क निकालना उतना ही मुश्किल समझा जाता था, जैसे श्रीनगर से लेह (लदाख) के लिए मोटर रास्ता। सिर-दरिया के किनारे तक फैले ताजिकिस्तान को अपने लेनिनाबाद (खोजन्द) जिले से मिलाने का काम यही सड़क करती है। फर्गाना सिर-दरिया के तट पर एक बहुत ही उर्वर उपत्यका

है। इनमें ओश, जलालाबाद, अन्दिजान, मर्गीलान, फर्गाना, खोकन्द, लेनिनाबाद (खोजन्द) जैसे इतिहास-प्रसिद्ध नगर हैं। इस उपजाऊ उपत्यका के भिन्न भिन्न भागों में किर्गिज, उज़्बेक और ताजिक जातियाँ बहुमत में बसती हैं। उनके बहुमत के अनुसार ही समूची उपत्यका तीन प्रजातन्त्रों में बँटी हुई है। ऊपरी भाग में ओश और जलालाबाद के शहर किर्गिज प्रजातन्त्र में पड़ते हैं, निचले भाग का लेनिनाबाद जिला ताजिक प्रजातन्त्र का है। बीच का बड़ा हिस्सा उज़्बेक प्रजातन्त्र का है।

फर्गाना वही भूमि है, जहाँ बाबर पैदा हुआ और हिन्दुस्तान के विशाल साम्राज्य का अधिपति होकर भी वह आखिर तक उसके लिए तरसता रहा। यहाँ फल, कपास और रेशम बहुत अच्छी किस्म के पैदा होते हैं। ताजिकिस्तान के सबसे बड़े औद्योगिक केन्द्र यहीं पर हैं। यह सभी सोवियत् काल की देन है। लेनिनाबाद से पूरब कनीबदाम फलों के कारखानों का केन्द्र है। नेफ्ताबाद में नेफ्त (पेट्रोल) निकलता है और शोराब में कोयले की खानें हैं। करामजार अपनी खानों के लिये प्रसिद्ध है—यहाँ सीसा, राँगा, चाँदी, गन्धक और दूसरी बहुमूल्य धातुएँ निकलती हैं। अरब-काल (७-१० वीं सदी) में यह चाँदी और सीसे की खानों के लिये दुनिया में प्रसिद्ध था। सदियों बाद उसने फिर अपना पुराना स्थान प्राप्त किया। उत्तरी ताजिकिस्तान का केन्द्र लेनिनाबाद (खोजन्द) शहर है, जो ईसा पूर्व छठी और चौथी सदी में भी प्रसिद्ध नगर था, इसके बारे में हम आगे कहनेवाले हैं। अब नगर के वे मुहल्ले लुप्त हो चुके हैं, जिन्हें "रोटी से वंचित और सदा के भूखों" कहा जाता था। लेनिनाबाद अपने स्कूलों और कालेजों, आधुनिक रेशम-मिल और फल के कारखानों के लिए प्रसिद्ध है।

स्तालिनाबाद से आदमी मोटर-सड़क या विमान से पूर्वी ताजिकिस्तान जा सकता है। यहाँ ही पामीर की पर्वत-माला है, जहाँ हिन्दूकुश दक्षिण से, कराकुरम हिमालय दक्षिण पूर्व से, क्वेनलुन पूर्व से, और त्यानशान उत्तर से

आकर मिलते हैं। पर्वत-मालाओं की तरह अफगानिस्तान, चीन और भारत की सीमाएँ भी यहाँ आकर मिलती हैं। पामीर—दुनिया की छत—नाम वस्तुतः यथार्थ है, यह दुनिया के उच्चतम स्थानों में है। पश्चिमी पामीर की गहरी घाटियों में बहती नदियों का जाल सा बिछा हुआ है। ऊपर की ओर नंगे-पहाड़ों में जुते हुए छोटे-छोटे खेत हुआ करते थे। दूर-दूर पर कहीं कहीं अनगढ़ पत्थरों के ढेर जैसे मकान थे, जिनके पास कहीं कहीं तूत और खूबानी के वृक्ष दिखलाई पड़ते थे। यहाँ के निवासी ऐसी जगहों पर बसेरा लेनेवालों में सबसे पुराने कहे जाते हैं और सबसे गरीब भी। इन नंगे पथरीले पहाड़ों में मिट्टी बहुमूल्य वस्तु थी और अकसर निचली उपत्यका से टोकरियों में भरकर उसे ऊपर ले जाते थे।

पूर्वी पामीर में तिब्बत जैसा दृश्य है। उसी की तरह का यहाँ ऊँचा-चौरस मैदान फैला हुआ है। इसकी उपत्यकाएँ चट्टानों और पाषाण-खण्डों से ढकी हैं। यहाँ घास बहुत कम दिखाई पड़ती है। ऊँचाई के कारण हवा बहुत पतली है और ५० डिग्री सेन्टीग्रेड में ही पानी खौलने लगता है। यहाँ चावल दाल नहीं पकती, दिन गरम और रातें बरफ की-सी ठंडी होती हैं।

पूर्वी पामीर की उपत्यकाओं में किरगिज लोग रहते हैं। वह पहले साल भर अपने पशुओं को चराते फिरते थे। यहाँ ऊँचाई के कारण बादल नहीं पहुँच पाते, इसलिए बरफ भी बहुत कम पड़ती है। यद्यपि यहाँ से उत्तर अलई उपत्यका में पामीर के सानुओं पर काफी बरफ पड़ती है और कभी कभी तो वह तार के खंभों को ढाँक लेती है।

५. गर्नो-बदख्शाँ

यह ताजिक प्रजातंत्र का एक स्वायत्त जिला है। पामीर इसी में है। यह ताजिकिस्तान का सबसे दरिद्रता-पीड़ित इलाका समझा जाता रहा, और इसके दक्षिण का अफगानी-बदख्शाँ अब भी उसी हालत में है। प्राचीन-काल

से प्रसिद्ध लाल (पद्मराग) की खानें इसी इलाके में हैं। लेकिन उन खानों ने भी यहाँ के निवासियों की अवस्था बेहतर नहीं बनाई थी। पानी और वनस्पति के अभाव के कारण यहाँ खेती असम्भव थी। लेकिन अब जगह जगह कलखोज संगठित हो गये हैं, खेती की मशीनें और खनिज खाद आ पहुँची है, तथा कृषि पहाड़ों के ऊपर की ओर बढ़ती आ रही है। पूर्वी पामीर में सोवियत काल में खेती का काम शुरू हुआ। अब कितने ही कलखोजों के खेत समुद्र तल से ४,००० मीतर (१३ हजार फीट से ऊपर) पर पाये जाते हैं। वैसे १३-१४ हजार फीट पर तिब्बत में भी जौ और छोटी मटर की खेती होती है; लेकिन वहाँ और यहाँ की खेती में उतना ही अन्तर है, जितना कि वैज्ञानिक खेती और प्राचीन ढंग की खेती में।

वैज्ञानिक खोजों से मालूम हुआ है, कि पौधों में पामीर के दिन की गर्मी से जो चीनी पैदा होती है, वह सर्द रातों के कारण स्टार्च में परिवर्तित होने के लिए समय नहीं पाती और इस तरह फसल में बर्फानी ठंडक के प्रतिरोध करने की शक्ति को नहीं बढ़ाती। अब इस दुनिया की छत पर मूली, आलू, बन्दगोभी और जौ पैदा किये जाते हैं। यहाँ के तजर्बों से लाभ उठाकर अब अल्ताई आदि के उच्च पर्वत-पृष्ठों पर खेती शुरू की गई है। सोवियत् के इस तिब्बत (पामीर) के बारे में यह कहना अब आश्चर्य की बात नहीं है, कि वहाँ आधुनिक ढंग के स्कूल, अस्पताल और सिनेमा खुले हैं। यही नहीं अब तो एक छोर से दूसरे छोर तक पामीर में सड़क पर मोटरें दौड़ रही हैं। अफगानिस्तान की सीमा पर पंज नदी (वक्षु की बड़ी धार) के पार सोवियत् बदख्शाँ का नगर खोरोग है। यहाँ से मोटर की एक पक्की सड़क पूर्वी पामीर में चलते चीनी तुर्किस्तान की सीमा के पास होते सारी बड़ी बड़ी जोतों को लाँघती फर्गाना-उपत्यका में ओश नगर के रेलवे स्टेशन पर पहुँचती है। खोरोग अब एक नया नगर है। इसी के पास पामीर का पहला पन-बिजली स्टेशन है, जिससे नगर की सड़कें और घर प्रकाशित होते हैं। नगर समुद्र-तल से २,१०० मीतर (७-८ हजार फीट) ऊपर बसा हुआ है। यहाँ से स्तालिनाबाद

को हर रोज मुसाफिर-विमान आते-जाते रहते हैं। किला खुमार, गारमकला, मुर्गाब आदि कितनी ही बस्तियाँ तेजी से बढ़ रही हैं। जारकुल, करागुल, रङ्-कुल, कराकुम के विशाल झील अब मानसरोवर की तरह गन्धर्व-लोक की चीज नहीं हैं। पामीर में अब ज्ञान का प्रकाश फैला है। समाचार-पत्र, पुस्तकें और रेडियो वहाँ के लिए मामूली चीजें हो गई हैं। पामीर के गर्भ में दुनिया की सबसे बड़ी हिमानी (ग्लेशियर) फेद्चेको समुद्र-तल से ४,३०० मीतर ऊपर है। यहाँ जल-ऋतु-शास्त्र-सम्बन्धी एक स्थायी प्रयोगशाला बनाई गई है, जहाँ साइन्स-सम्बन्धी अनुसन्धान होता रहता है।

सैकड़ों वर्षों से किरगिज लोग पामीर में पशुचारण किया करते थे और अब भी उनका पशुचारण बन्द नहीं हुआ है। किन्तु आज वह प्रकृति के हाथ की कठपुतली नहीं है। वे पशु कलखोजों में संगठित हुए हैं। पशुओं की संख्या और जाति को बेहतर बनाने के लिए नवीनतम वैज्ञानिक प्रक्रियाएँ काम में लाई जा रही हैं। चरवाहों के तम्बू अब वे गन्दे और गरीब ... नहीं हैं। अब उनमें लक्ष्मी-सरस्वती का निवास है। उनके चलते-फिरते तम्बू वाले गाँवों में लड़के-लड़कियों के स्कूल हैं, पशुओं-मनुष्यों के चिकित्सालय हैं, खबर लेने-देने के लिए रेडियो हैं, विमान उनकी डाक पहुँचाते हैं और पशुओं तथा मनुष्यों के लिए चारों ओर अन्न के बिना तकलीफ पाने की कोई सम्भावना नहीं है; बल्कि ओश-खरोग की मोटरवाली सड़क एक ऐसे ही संकट के वक्त बनी थी, जब कि चीजों का अभाव हो गया था। हजारों आदमी मशीन, फावड़ा और डिनामाइट लेकर ओश से चल चले थे, तथा बड़ी तेजी से काम करके उन्होंने दुनिया की सबसे अधिक ऊँचाई पर जानेवाली इस मोटर-सड़क को तैयार किया था। पामीर-विजय सोवियत् की सबसे बड़ी विजयों में है, इसमें कोई सन्देह नहीं। हमारे यहाँ भी कश्मीर लदाख में इसी तरह के स्थान हैं। देखें हम कब उन पर विजय पाते हैं?

६. उद्योग-धन्धा

१९३९ में ताजिकिस्तान में १५७ गुनी अधिक औद्योगिक उपज हुई, इस कहने से मालूम होगा, कि वहाँ कुछ कल-कारखाने रहे होंगे। हाँ, खोजन्द (लेनिनाबाद) में रूसी पूँजीपतियों ने कुछ कारखाने जरूर खोले थे और कश्मीर की तरह शाल की दस्तकारी वहाँ भी कुछ चल रही थी। सोवियत काल में जो औद्योगिक उन्नति हुई है, उससे उसकी तुलना क्या? पिछले युद्ध-काल में तो वहाँ कल-कारखाने और तेजी से बढ़े। लेनिनाबाद और स्तालिनाबाद में नये नये कारखाने खुले हैं। आज ताजिकिस्तान उद्योग-प्रधान देश बन गया है। वहाँ रेशमी सूती कपड़े की बड़ी बड़ी मिलें हैं। चमड़े के जूतों के कारखाने हैं। बिनौला, तेल, मेवा, तरकारी और मांस की कितनी बड़ी बड़ी फैक्टरियाँ हैं। कोयला, तेल, सोना, चाँदी, अलौह धातु, दुर्लभ धातु, गृह-निर्माण सामग्री भारी बड़े परिमाण में तैयार होती हैं। यही वजह है कि सड़कों से विहीन ताजिकिस्तान में जगह-जगह मोटर-सड़कें देखी जाती हैं। नई पंच-वार्षिक योजना को देखने से मालूम होगा, कि १९४० की अपेक्षा १९५० में प्रजातन्त्र की औद्योगिक उपज ५६ प्रतिशत अधिक बढ़ जायेगी और धातु-[illegible] तथा आहार के बहुत से नये कारखाने खुल जायेंगे।

७. नवीन पंचवार्षिक योजना

नई पंचवार्षिक योजना में ताजिकिस्तान के लिए निम्न प्रोग्राम दिखलाई पड़ता है — ताजिक सोवियत् समाजवादी रिपब्लिक—ताजिक सरकार की औद्योगिक उपज के मुख्य अंशों की योजना १९५० तक निम्न तौर पर पूर्ण होगी :

कोयला (टन)	४,४०,०००
पेट्रोल (टन)	६०,०००
बिजली (हजार किलोवाट)	१,८,००००
सीमेंट (टन)	१५,०००

सूती कपड़ा (मीतर)	१,७८,००,०००
रेशमी कपड़ा (”)	५१,००,०००
मोजा (जोड़ा)	४१,४०,०००
जूता (”)	१२,७०,०००
खाद्य-तेल (टन)	१०,०००
मांस (”)	८,३०००

ताजिक ससर में १९४६-५० में १ अरब २० करोड़ रूबल की पूँजी लगाई जायेगी—जिसमें प्रजातन्त्र के अधीनस्थ कामों में ३१ करोड़ ८० लाख रूबल लगेंगे।

२८ हजार किलोवात के बिजली पावर-स्टेशन, जिसमें २४ हजार किलोवात के पन-बिजली-स्टेशन बनाकर चालू किये जायेंगे। स्तालिनाबाद सूती कपड़ा-मिल की क्षमता को १८,५०० तकुओं तक बढ़ाई जायगी। मशीन मरम्मत-कारखाने और दो दो मक्खन मलाई कारखानों को बनाकर चालू किया जायेगा। एक तानी का कारखाना पूरा किया जायगा। एक सीसा-राँगा खान में काम शुरू किया जायेगा।

प्रजातन्त्र के अधीनस्थ उद्योगों में १ लाख टन की क्षमतावाली एक कोयला-खान बनाकर चालू की जायेगी, और छोटी रेलवे लाइन जिदीन कोयला-क्षेत्र के लिए बनाई जायगी। १२ हजार तकुए और एक मिट्टी-काच-कारखाना चालू किया जायगा।

प्रजातन्त्र के अधीनस्थ कारखानों से १९५० में ४५ करोड़ रूबल की औद्योगिक उपज होगी, जिसमें स्थानीय अधिकार और औद्योगिक सहयोग-समितियों के कारखानों की उपज ८ करोड़ ३० लाख रूबल होगी। सूखे मेवों की उपज काफी बढ़ाई जायगी।

१९४६-५० में राँगा और तुङ्स्तेन, द्रागोक्साइड के औद्योगिक

स्रोतों को काम करने के लिए तैयार किया जायगा। कोयला, तुङ्स्तेन, सुरमा और पारा की नई निधियों के लिये बड़े पैमाने पर सर्वे और भू-अनुसन्धान किया जायगा।

ताजिक ससर में १९५० में ९ लाख ३५ हजार हेक्तर में फसल होगी, जिसमें कल-खोज के ८,९६,००० हेक्तर होंगे; अनाज की फसल ६,३३,००० हेक्तर, जिनमें कल-खोज के ६,१५,००० हेक्तर; औद्योगिक फसल के १,८१,००० हेक्तर जिसमें कल-खोज के १,७३,००० हेक्तर होंगे; तरबूजा, आलू और दूसरी तरकारियां २९,००० हेक्तर, जिसमें कल-खोजों के २०,००० हेक्तर; घास-चारा की फसल ९२,००० हेक्तर, जिसमें कल-खोज के ८५,००० हेक्तर होंगे; कपास की फसल १,०७,००० हेक्तर निश्चित है, और लम्बे रेशेवाली कपास के पैदा करने की पूरी कोशिश की जायगी।

वख्श-उपत्यका की नहर पूरी कर दी जायगी। हिसार-उपत्यका की नहर और कनीबदाम इलाके की पानी निकालने की नहरों का पुनर्निर्माण पूरा हो जायेगा। ५ सालों के भीतर १७,८०० हेक्तर सिंचाईवाली जमीन बढ़ाई जायेगी।

१९५० के अन्त में पशुओं की संख्या निम्न प्रकार होगी: घोड़े १,७७,०००, जिनमें कल-खोज के १,३०,०००; ढोर ७,१०,००० जिनमें कल-खोज के २,८०,०००; और भेड़-बकरियाँ ३६,३०,०००, जिनमें कल-खोज की ३०,००,०००।

ताजिक ससर के शहरों के राज्य-स्वामिक मकानों की योजना से १९४६—५० में २,९१,००० वर्गमीतर फर्श के वासस्थान तैयार होंगे, जिनमें ३२,०० वर्गमीतर स्थानीय सोवियतों द्वारा बनेंगे; लेनिनाबाद और खोरोग में जल-कल की तैयारी होगी और स्तालिनाबाद में ट्रौली-बस चालू होगी।

सांस्कृतिक विकास और स्वास्थ्य-रक्षा के क्षेत्र में मुख्य करणीय हैं:

१६४६-५० तक स्कूलों की संख्या ३,१२३; विद्यार्थियों की संख्या ३,०१,००० पहुँचेगी। अस्पतालों में ७,३०० चारपाइयाँ रहेंगी।

८. *शिक्षा*

क्रान्ति से पहले .०५% आदमी ताजिकिस्तान में लिख-पढ़ सकते थे। स्त्रियों में तो शिक्षा का नाम भी नहीं था और यही बात पूर्वीय ताजिकिस्तान के सभी नर-नारियों की थी। सोवियत्-सरकार का शिक्षा की ओर सबसे अधिक ध्यान गया। १६३६ में १५ लाख की आबादी के लिये ४ हजार प्रारम्भिक और १०० से ऊपर हाईस्कूल थे। स्तालिनाबाद में युनिवर्सिटी और लेनिनाबाद तथा स्तालिनाबाद में ७ कालेज हैं। इनके अतिरिक्त २० टेकनिकल स्कूल हैं। १६३६ में ढाई लाख से ऊपर लड़के स्कूल में पढ़ रहे थे, अर्थात् हर ६ आदमी में १ आदमी स्कूल में था। उसी साल की जन-गणना से मालूम हुआ, कि ७२ प्रतिशत नर-नारी शिक्षित हैं। ताजिकिस्तान में ७५ समाचार-पत्र निकलते हैं, जिनमें अधिकांश ताजिक भाषा में और कुछ यहाँ बसनेवाले किरगिजों और उज्बेकों की भाषा में भी निकलते हैं। स्तालिनाबाद, लेनिनाबाद पत्रों के केन्द्र हैं। वैसे प्रजातन्त्र से बाहर समरकन्द और बुखारा में रहनेवाले ताजिकों के भी अपनी भाषा में अखबार हैं। ७ साल की मातृभाषा में अनिवार्य शिक्षा ने इतने कम समय में शिक्षा में यह क्रान्ति उपस्थित की। ताजिक भाषा ने सद्रुद्दीन ऐनी जैसा उपन्यासकार पैदा किया, जिसकी पुस्तकें सोवियत् और बाहर की भाषाओं में भी अनूदित हुई हैं। यहाँ कितने ही अच्छे कवि और नाटककार भी पैदा हुए हैं। मौलिक-ग्रन्थों के अतिरिक्त विश्वसाहित्य की बहुत-सी महत्त्वपूर्ण कृतियां ताजिक भाषा में अनुवादित हो चुकी हैं। अब ताजिक फारसी में पुश्किन, लेर्मन्तोफ और ताल्स्ताय की पुस्तकें ही आप नहीं पढ़ सकते हैं, बल्कि यहां शेक्सपियर, फ्लाउबेर्ट और विक्तर ह्यूगो के ग्रन्थों के भी सुन्दर अनुवाद मिलेंगे। ताजिक भाषा में अब तक ४ करोड़ २० लाख ग्रंथ प्रतियाँ छापी जा चुकी हैं।

ताजिकिस्तान प्रजातंत्र

वैसे तो मध्य-एसिया के सारे प्रजातंत्र अपने सफल प्रयोग से हमें बहुत सी शिक्षा दे सकते हैं, लेकिन उनमें हमारा सबसे नजदीक का पड़ोसी और भाषा तथा जाति में हमारे अतिसमीप ताजिकिस्तान बहुत बातों में हमारा पथप्रदर्शन कर सकता है। कश्मीर की सारी समस्याओं का हल वहाँ पहले से मौजूद है। सोवियत भाषाओं में जिस भाषा को हम सबसे आसानी से समझ सकते हैं, और जिसके जानकार अब भी हमारे देश में लाखों मौजूद हैं, वह ताजिक भाषा है। वह फारसी की स्थानीय भाषा रहते हुए भी आज साहित्यिक भाषा के पद पर पहुँची है। उसके "ताजिकिस्तान सुर्ख" जैसे दैनिक और "शर्क सुर्ख" (लाल प्राची) जैसे मासिकपत्र हमें बहुत सी ज्ञातव्य बातें बतला सकते हैं, यदि वे भारत में सुलभ हों। वहाँ के स्कूलों की पाठ्य पुस्तकें और पाठ्यसामग्री से भी हम कितनी ही चीजें जान सकते हैं।

ताजिकिस्तान में सोवियत् साइन्स अकदमी से सम्बद्ध कई अनुसन्धान प्रतिष्ठान काम कर रहे हैं।

१९४९ की ५ मई को किला-खुम्ब के इलाके में एक बड़ा उल्का पाषाण गिरा था। पहाड़ी निर्जन इलाके में उस पाषाण को ढूँढ़ निकालना आसान काम नहीं है। इस उल्का को पंज उपत्यका और ख्नग नदी की कई जगहों से देखा गया था। उल्का इतना जोर से जल रहा था, कि रोशनी देखनेवालों को दिन-सा मालूम होता था। ४० किलोमीतर व्यास के घेरे में उसकी कड़क सुनाई दी थी। अभियान के मतानुसार उल्का-खण्ड किला-खुम्ब से १५, १८ किलोमीतर उत्तर-पश्चिम ख्याब गाँव के पहाड़ में गिरा है। पहली बार की असफलता के बाद भी फिर दूसरा अभियान उस पत्थर को खोजने के लिए गया। सोवियत् में उल्का पाषाणों का एक बहुत बड़ा म्युजियम मास्को में है। वहाँ हजारों उल्का पाषाण रखे हुए हैं और कुछ तो मनसे भी अधिक भारी हैं। उल्का पाषाणों पर मैंने एक सोवियत् फिल्म देखा था। वह काफी दिलचस्प और ज्ञानवर्द्धक था। सिबेरिया में एक बड़े उल्का के गिरने से कैसे

सैकड़ों मील जंगल में आग लग गई, इसका बहुत अच्छा प्रदर्शन किया गया था। उसमें यह भी दिखलाया गया था, कि कैसे एक उल्का पाषाण (हजरुल अस्वद = कृष्ण पाषाण) मुसल्मानों के काबा में देवता की तरह पूजा जाता है और हर एक मुसल्मान हाजी उसे भगवान् का दाहिना हाथ समझकर चूमना धार्मिक कृत्य समझता है।

९. सदरुद्दीन ऐनी—

ताजिकिस्तान का सबसे बड़ा कवि लाहूती है, लेकिन उसका जन्मस्थान ताजिकिस्तान नहीं, ईरान है। वैसे २५ सालों से ताजिकिस्तान को उसने अपना देश बना लिया है और ताजिक इसे अपने से भिन्न नहीं समझते हैं। लाहूती का सोवियत् में बहुत सम्मान है, और उसके कविता-संग्रहों के कई संग्रह और कई संस्करण निकल चुके हैं। लेकिन सबसे बड़ा ताजिक साहित्यकार पूछने पर आपको ऐनी का नाम ही उत्तर में मिलेगा। ऐनी के "दाखुन्दा", "गुलामान", "अदीना", "यतीम", "मुर्दा-सूदखोर" आदि उपन्यास बहुत जनप्रिय ही नहीं हैं, बल्कि उन्होंने ताजिकिस्तान की नयी पीढ़ी के निर्माण में बहुत काम किया है। ऐनी सिर्फ कलमवीर ही नहीं, बल्कि कर्मवीर भी रहा है, उसका परिवार शहीदों का परिवार है। उसके दो भाई स्वतंत्रता देवी की बलि चढ़े और वह स्वयं भी ७५ कोड़े खाकर मरणासन्न जेल में पड़ा था, जब कि बोलशेविकों ने पहुँचकर उसे बाहर निकाला। अब भी उसके बदन पर कोड़ों के वे दाग अमिट बने हैं और अमीर बुखारा की नृशंसता का परिचय दे रहे हैं।

ऐनी का जन्म बुखारा के गिजदुवान तहसील (गपन्) के साकतारी गाँव में एक गरीब किसान के घर में हुआ। ऐनी ने मेरे कहने पर अपने जीवन की घटनाओं की एक तालिका लिख भेजी, जिसे मैं यहाँ अनूदित करता हूँ :

"मैं १८७८ में बुखारा जिलेके गिजदुवान् तहसील के साकतारी गाँव

४६. महान उपन्यासकार सद्रुद्दीन ऐनी

में एक गरीब किसान के घर पैदा हुआ। १२ साल की आयु में यतीम हो गया। बड़ा भाई (हाजी सिराजुद्दीन ख्वोजा) बुखारा में पढ़ रहा था। उसने मुझे अपने साथ कर लिया। मैं वहाँ रोटी के लिए काम करते पढ़ता रहा। मदरसा आलिमजान में एक साल चौकीदार का भी काम किया। १९०५ से अध्यापकी करते मकतबों के लिए पाठ्यपुस्तकें लिखता रहा। १९१५-१६ में एक साल किजिलतपा के कपास से कारखाने के कटाई के आफिस में काम किया।

१९१६ में बुखारा के एक मदरसे में मुदर्रिस (प्रोफेसर) नियुक्त हुआ। १९१७ के राष्ट्रीय आन्दोलन या फरवरी क्रान्ति में अमीर के विरुद्ध भाग लिया। १६ अप्रैल को गिरफ्तार कर मुझे ७५ कोड़े मारे गये और आबखाना नामक जेल में डाल दिया गया। रूसी क्रान्तिकारी सेना ने मुझे जेल से निकाल कर कगान के अस्पताल में रख दिया, जहाँ ५२ दिन रहकर स्वस्थ हुआ। १७ जून (१९१७) को समरकन्द आया। तब से आज तक समरकन्द नगर मेरा निवासस्थान है।

मार्च १९१८ में कोलिसोफ के सैनिक-आक्रमण के समय मेरे छोटे भाई को—जो कि मुदर्रिस था—पकड़वाकर अमीर ने मरवा दिया। १९१८ से सोवियत् के हाईस्कूल में पढ़ाने लगा, साथ ही १९१९—२१ तक समरकन्द के दैनिक और मासिक-पत्रों में साहित्यिक सम्पादक का भी काम करता रहा। बुखारा की क्रान्ति में भाग लिया और अमीर के विरुद्ध जनता को भड़काया। १९२२ में मेरे बड़े भाई (सिराजुद्दीन) को साकतारी गाँव में बसमाचियों (मजहबी डाकुओं) ने मार डाला। १९२१ के अन्त से १९२३ तक सोवियत् जन प्रजातंत्र बुखारा के वकील (गवर्नर) के नायब के तौर पर समरकन्द में काम करता रहा।

१९२३ के अन्त से १९२५ तक समरकन्द में सरकारी व्यापार का डायरेक्टर रहा। फिर १९२६-३३ तक तिर्मिज में साहित्यिक और अनुसंधानिक

डाइरेक्टर का काम करता रहा। सितम्बर १९३३ में ताजिक सरकार ने मुझे पेन्शन देकर काम से छुट्टी दे दी, जिसमें कि मैं घर पर अधिक स्वतंत्रता पूर्वक अपना साहित्य और अनुसन्धान सम्बन्धी काम कर सकूँ।

१९३५ से मैं उज्बेकिस्तान के ऊँचे शिक्षालयों — अनेक सरकारी युनिवर्सिटी, समरकन्द ट्रेनिंग कालेज, ताशकन्द ट्रेनिंग कालेज, ताशकन्द ला कालेज, मध्य-एसिया युनिवर्सिटी (ताशकन्द) के एम. ए., डाक्टर उम्मीदवार और डाक्टर की परीक्षाओं का परीक्षक और सलाहकार होता हूँ। इस वक्त मध्य एसिया युनिवर्सिटी के डाक्टर विद्यार्थी ईसा पीर मोहम्मदोफ, उज्बेक युनिवर्सिटी के डाक्टर विद्यार्थी वाहिद अब्दुल्ला, डाक्टर उम्मीदवार के विद्यार्थी मिर्जाजादा तथा ताशकन्द ट्रेनिंग कालेज के एम. ए. विद्यार्थी मरदान शरीफजादा और सदारत अब्दुल्लाजानोफ मेरी देखरेख में अपने निबन्धों के बारे में अनुसन्धान कर रहे हैं।

१९२३ में ताजिक सोवियत् समाजवादी प्रजातंत्र की केन्द्रीय कार्यकारिणी का मेम्बर चुना गया। १९२९-३८ तक मैं उसका मेम्बर रहा। १९३१ में ताजिक सरकार ने मुझे "लाल झण्डा" का पदक प्रदान किया। १९३५ में ताजिक सरकार ने एक मोटर और एक ग्रामोफोन प्रदान किया। इसी समय उज्बेक सरकार ने सनद और मेडल भी दिया।

१९३३ में अखिल सोवियत् लेखक संघ का मेम्बर चुना गया। १९३४-४४ तक अखिल सोवियत् लेखक संघ के प्रधान मण्डल (प्रेसीडियम) और ताजिकिस्तान तथा उज्बेकिस्तान के लेखक संघों की कार्यकारिणियों का भी मेम्बर रहा। अप्रैल १९४१ में सोवियत् सरकार ने 'लेनिन-पदक' प्रदान किया। १९४३ में उज्बेक साइन्स अकदमी का माननीय सदस्य निर्वाचित हुआ। (युद्ध समाप्ति के बाद) "हिम्मत के काम के लिए" पदक मिला। १९४६ में स्तालिनाबाद की तरफ से सोवियत् पार्लियामेंट का मेम्बर चुना गया। २५ अक्तूबर १९४० को ताजिकिस्तान सोवियत् समाजवादी प्रजातंत्र का सम्मानित साइन्सी

नेता" की उपाधि मिली। अक्टूबर १९४६ में उज्बेक युनिवर्सिटी (समरकन्द) की साहित्य-फेकल्टी का डीन (अध्यक्ष) बनाया गया।
(समरकन्द) २३ अप्रैल, १९४७ 'ऐनी'

इस संक्षिप्त पत्र से ऐनी के जीवन के बारे में कितनी ही बातें मालूम हो जाती है, ऐनी ने लड़कपन में बहुत कष्ट का जीवन पाया था। उस समय स्कूलों के नाम पर मसजिदों में मकतब हुआ करते थे, जहाँ लड़के पढ़ते कम और मुल्ला के डंडे ज्यादा खाते थे। ऐनी ने अपने मकतब के बारे में एक छोटी पुस्तक लिखी है, जिसमें एक जगह बतलाया गया है। "६ साल की उम्र में माँ-बाप मुझे मसजिद के मदरसे में ले गये। मदरसा का मकान केवल ६.६ वर्गगज का था, जिसे लकड़ी के कटघरों से ९ भागों में बाँट दिया गया था। विद्यार्थी इन्हीं ९ कटघरों में ढोरों की तरह बैठते थे। मुल्ला का डंडा सदा सिर पर तैयार रहता था। विद्यार्थी बिना समझे बूझे कुरान की आयतों को जोर जोर से दुहराया करते थे। मैंने अपने जीवन में दो स्वतंत्रताओं का अनुभव किया है, जिनमें एक को ४२ साल की उम्र में, जब कि ७५ कोड़े खाकर जेल में पड़े मुझे छुड़ाया गया, और दूसरी उससे ३६ साल और पहले ६ साल की आयु में, जब कि मुझे मकतब न जाने की आज्ञा मिल गई। मैं नहीं कह सकता, दोनों में किसको मैंने अधिक पसन्द किया।"

१२ साल की उम्र में ऐनी भाई के साथ बुखारा चले आए। बुखारा सातवीं सदी से ही इस्लामी-दुनिया का एक बहुत बड़ा शिक्षा-केन्द्र बना चला आया था, जब कि बनारस को यह सौभाग्य चार सदी बाद मिला। इस्लामी-शिक्षा के लिए वह बनारस था। अमीर की राजधानी और सरदारों तथा बनियों के निवास-स्थान होने से वहाँ एक ओर विलास में पानी की तरह पैसा बहाया जाता था, तो दूसरी तरफ भारी संख्या में लोग असह्य दरिद्रता भोग रहे थे; एक ओर सैकड़ों वर्षों से स्थापित बड़े बड़े मदरसों में प्राचीन-विद्या के कितने ही

धुरंधर विद्वान् रहते थे, तो दूसरी ओर घोर अज्ञानान्धकार छाया हुआ था। कुछ नौजवानों में टर्की के नौजवान तुर्कों की हवा लगी थी, और वह अमीर की निरंकुशता को हटाने की बात सोचने लगे; लेकिन बुखारा सिर्फ एक निरंकुशता के नीचे दबकर कराह नहीं रहा था, बल्कि उसके ऊपर सबसे बड़ी निरंकुश जारशाही की छाया फैली भी हुई थी। टर्की की देखा देखी बुखारा में भी "जदीद" (नवीन) आन्दोलन भीतर ही भीतर शुरू हुआ। ऐनी और उनके भाई आन्दोलन के संस्थापकों में से थे, इसी के कारण दो भाइयों को बलि चढ़ना पड़ा। बसमाची ऐनी का तो कुछ नहीं बिगाड़ सकते थे, क्योंकि वह समरकन्द में सोवियत् इलाके में रहते थे। उनके बड़े भाई को जब साकनारी गाँव में बसमाचियों ने मारा, तो चाहते थे कि उनके बाल बच्चों का भी सफाया कर दें, लेकिन साकनारी के खोजा (सैयद) लोगों का धार्मिक दुनिया में बहुत सम्मान था। उनके खानदान के बुजुर्गों की समाधियाँ वहाँ पूजी जाती थीं। जब गाँव के खोजा लोगों को मालूम हुआ, तो वे बसमाचियों के पास गये और कहा: पहले हमें मार दो, फिर इन बच्चों और स्त्रियों का सफाया करना। बसमाचियों की इतनी हिम्मत न हुई, इसलिए खानदान बाल बाल बच गया।

ऐनी ग्रंथ ही लिखते नहीं रहे हैं, बल्कि पंचवार्षिक योजनाओं के समय जगह जगह घूमकर वहाँ होते निर्माण के सम्बन्ध में पत्रों में लेख लिखते रहे, जिनमें वख्श-उपत्यका की नहर और बिजली के कारखाने भी सम्मिलित हैं। ताजिक नौजवानों की दूसरी पीढ़ी के निर्माण में ऐनी का खास हाथ है। लेखक और कवि अपनी कृतियों के हस्तलेखों को उनके पास भेजते हैं और उन्हें परामर्श देते हैं। १९४७ के चुनाव में ऐनी ताजिक पार्लियामेंट के मेम्बर चुने गये।

ऐनी के उपन्यास 'दाखुन्दा' (जिसका मेरा किया हिन्दी अनुवाद छापा जा रहा है) के बारे में लिखते हुए दयाकोफ ने कहा है:

ताजिकिस्तान प्रजातंत्र

'सदरुद्दीन ऐनी का उपन्यास 'दाखुन्दा' अमीर के जमाने के पूर्वी बुखारा (ताजिकिस्तान) के जीवन पर पहला सबसे बड़ा ग्रन्थ है। हमने ऐनी को पहले पहल उपन्यासकार के तौर पर 'आदीना' में देखा, लेकिन 'दाखुन्दा' दूसरी चीज है। दाखुन्दा साहित्यकला की एक बहुमूल्य कृति ही नहीं है, बल्कि उसका महत्त्व इस बात में है, कि इसमें बुखारा और ताजिकिस्तान की सबसे महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं और वर्गयुद्ध का चित्र खींचा गया है। दाखुन्दा में वर्णित घटनाएँ सदा अपना राजनीतिक महत्त्व रखेंगी।'

इस उपन्यास का लेखक जदीद-आन्दोलन का एक नामी व्यक्ति और बुखारा के क्रान्तिकारी आन्दोलन में शुरू से ही काम करनेवाला रहा है। इसलिए बुखारा क्रान्ति की घटनाओं का विवरण उसके मुँह से सुनने उसकी कलम से पढ़ना एक खास महत्त्व रखता है।

ऐनी यद्यपि उन व्यक्तियों में से है, जिन्होंने बुखारा में जदीद-आन्दोलन की नींव डाली; लेकिन वह जदीदों और उनके आदर्शों का रंगीन चित्र नहीं खींचता, बल्कि जदीदों के असली चित्र को बिल्कुल तटस्थता के साथ घटनाओं के आधार पर पाठकों के सामने रखता है। ऐनी ने दाखुन्दा में कलापूर्ण किन्तु सीधी सादी भाषा में बतलाया है, कि जदीद मध्यम-वर्ग के सुधारक-समुदाय के प्रतिनिधि थे कष्टों से पीड़ित साधारण जनता से उनका कोई संबंध न था और न वे उनके हकों की हिमायत करते थे। दाखुन्दा में पूर्वी बुखारा (ताजिकिस्तान) में बसमाचियों का पैदा होना, अनवर पाशा का आकर उनमें मिल जाना, तथा जदीदों का अनवर तथा बसमाचियों से सम्बन्ध बड़े विस्तार के साथ बतलाया गया है। इसलिए दाखुन्दा को सिर्फ एक साहित्यिक कला की कृति नहीं समझना चाहिये, बल्कि मध्य-एसिया की एक बहुत महत्त्वपूर्ण क्रान्ति के इतिहास की ऐतिहासिक कृति के तौर पर देखना चाहिए।'

१६ नवम्बर १९३५ को स्तालिनाबाद और दूसरी जगहों में ऐनी के

लेखक जीवन की तीससाला जुबली मनाई गई। उसमें ताजिक सरकार के एक मन्त्री ने भाषण देते हुए कहा :

'सामन्तशाही प्राची में रूदकी, फिरदौसी, सादी, उमर खैयाम, हाफिज जैसे कितने ही महान् विचारक और साहित्यकार पैदा हुए। लेकिन, यदि वे फाँसी पर चढ़ने से बच पाये, तो भी हमेशा उन्हें कष्ट दिया जाता रहा या वह देश-निर्वासित होकर रहे। विश्व-कवि और दार्शनिक नासिर खुसरो की जीवन घटना है। एक दिन वह नैशापुर नगर में पहुँचे। दूर से पैदल चलकर आये थे, इसलिए जूते फट गये थे। उन्होंने उन्हें सीने के लिए मोची को दे दिया। इसी समय शहर में हो-हल्ला मचा। मोची अपने हथियारों के साथ उस तरफ भागा। घंटा भर बाद वह रक्तरंजित अपने कतर-औजारक के साथ लौट आया। 'वहाँ क्या बात हुई?'- नासिर खुसरो ने पूछा। मोची ने जवाब दिया—'एक अधर्मी, अनीश्वरवादी आदमी जिसका नाम भी लेने से पाप होता है का शिष्य हमारे नगर में आया है।' कवि ने आग्रहपूर्वक पूछा—'जैसा भी हो, उसका नाम बताओ।' मोची ने जवाब दिया 'उस पापी का नाम नासिर खुसरो है, अभी धर्म-युद्ध घोषित हुआ और उसके शिष्य की बोटियाँ बोटियाँ उड़ा दी गईं। मैं जरा देर से पहुँचा और सिर्फ अपने कतरावरक को उसके खून से तर कर पाया। इसमें भी पुण्य है, मगर उतना नहीं।' 'बहुत ठीक' कहते कवि ने उत्तर दिया, किन्तु इस घटना को सुनकर उसका दिल काँप रहा था। वह सोचने लगा, यदि मेरे शिष्य के साथ ऐसा कर सकते हैं, तो जान पाने पर मेरी क्या गत बनायेंगे। वह एकाएक अपनी जगह से उठ चिल्लाकर बोला 'नहीं, मैं इस नगर में नहीं ठहर सकता, जहाँ ऐसे पतित के शिष्य रहते हैं' और जूते को बिना लिए, नगर से नंगे पाँव चला गया। यह था सामन्तशाही प्राची में महान् कलाकारों के साथ बर्ताव।'

"आदीना" (ऐनी का प्रथम उपन्यास) ताजिकी साहित्य का आदि

पहला उपन्यास है, तो सदरुद्दीन का दूसरा उपन्यास 'दाखुंदा' निश्चय सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है। ऐनी का नया उपन्यास 'गुलामान' इतिहास के एक भाग का बहुत ही ज्ञानपूर्ण चित्रण है, और वह शुरू से लेकर प्रजातंत्र के कल-खोजों की स्थापना और नये जीवन के निर्माण तक पाठकों को ले जाता है।...ऐनी की क्या कुछ विशेषता है, ऐनी किस तरह का श्रेष्ठ लेखक है? सबसे पहले और बड़ा काम ऐनी का है लम्बे ऐतिहासिक काल में भीतर आ घुसे अरबी के शब्दों से ताजिक भाषा को शुद्ध करना। इसीलिए सर्वसाधारण के लिए समझने में सरल उनकी पुस्तकों से जनता ने भारी संख्या में लाभ उठाया।..

"ताजिक सोवियत् समाजवादी प्रजातंत्र की केंद्रीय कार्यसमिति के स्थायी सदस्य के तौर पर ऐनी ने हमारे प्रजातंत्र की संस्कृति के निर्माण और स्कूलों की समस्या को हल करने में भारी काम किया है।.. हमारे माननीय गुरु सदरुद्दीन ऐनी अधिक वर्षों तक हम में रहें और शत्रुओं को भयभीत कर हमारी समाजवादी जन्म-भूमि की भलाई के काम में दत्तचित्त रहें"

ऐनी की जीवनी को देखने से मालूम हो रहा है, कि सोवियत् शासन में लेखकों और कलाकारों के लिए कितना ऊँचा स्थान है।

१०. जातियों का मेल

सारा मध्य-एसिया मुसलमान हो गया, इसका मतलब यह नहीं हुआ कि धर्मांधों की क्रूरता वहाँ से मिट गई। आखिर मध्य-एसिया में भाषाओं और संस्कृति के कारण भिन्न-भिन्न कई जातियाँ थीं, और कितने ही इस्लामिक संप्रदाय भी थे। ताजिक उजबेक को अभिमानी और असंस्कृत कहता, उजबेक ताजिक को दब्बू या पहाड़ी लंठ कहता। यही हालत सभ्यता में और पिछड़े किरगिजों और तुर्कमानों की होती। लेकिन आज जातियों का वह वैमनस्य या विद्वेष अतीत की बात हो गई जितने देश में एक जाति का बहुमत है, उसे उस

प्रजातंत्र में डाल दिया गया। समरकंद ताजिकिस्तान की सीमा से बहुत दूर नहीं है और उसका संबंध ताजिकों (सोग्दों) के साथ इतिहास के आरंभ से रहा है। आज भी समरकंद नगर में ताजिक भाषा भाषियों का बहुमत है। लेकिन आस-पास के इलाके में उजबेक बहुसंख्या में रहते हैं। इसलिये ताजिकों ने समरकंद पर लोभ की दृष्टि नहीं डाली, और वह उजबेक-प्रजातंत्र का अंग बना। इसी तरह लेनिनाबाद (खोजंद) के इलाके के थोड़े से भाग में ताजिक बहुमत है, बाकी विस्तृत फर्गाना प्रदेश उजबेकों का है। लेकिन उजबेकों ने उस पर लोभ की दृष्टि नहीं डाली, और वह इलाका ताजिकिस्तान-प्रजातंत्र की उत्तरी शिखा है। जो जातियाँ एक दूसरे के प्रजातंत्र में रह गई हैं, उनके साथ कोई भेद भाव नहीं है, और उन्हें उनकी भाषा में शिक्षा दी जाती है। समरकंद उजबेकिस्तान में है, किन्तु वहाँ के ताजिक बच्चे अपनी भाषा में शिक्षा प्राप्त करते हैं। ऐसी ताजिक हैं, किन्तु उनके सम्मान के लिये ताजिक और उजबेक दोनों प्रजातंत्रों में होड़ लगी रहती है। यह भाई भाव वहाँ की साधारण जनता में भी देखा जाता है।

उस दिन उत्तरी ताजिकिस्तान के कनीबादाम नगर में एक जन महोत्सव था। कनीबादाम औद्योगिक नगर है और उसकी दौलत कितनी भरी है, यह इसी से मालूम होगा, कि वहाँ नगर में अधिक करोड़पति लखपति हैं। उत्सव में उज्बेक, तुर्कमान, किरगिज, कजाक और ताजिक सभी लोग शामिल थे। जनमहोत्सव या मेला हो, उसमें नर नारी कितनी पोशाक में आयेंगे, इसका हम अच्छी तरह अनुमान कर सकते हैं। पिछली फसल की सफलता और आगे की फसल की सम्भावना के लिए यह मेला लगा था। तीन हजार के करीब जनता नगर के बाहर इकट्ठी हुई थी। ताजिक और उज्बेक अपने रंग-बिरंगे जामों में, किरगिज अपनी सफेद पगड़ियों के साथ, कजाक समूरी किनारीवाली टोपियों के साथ, तुर्कमान अपने भारी-भरकम भेड़ की खाल की टोपियों के साथ आये थे। यह महोत्सव फर्गाना-उपत्यका के

एक बहुत ही सुन्दर स्थान में हो रहा था। बगल में पहाड़ और चारों ओर मेवों के बाग लहलहा रहे थे। पड़ोसी प्रजातंत्रों के कलखोजों को निमंत्रित करने के लिए खास तौर से आदमी भेजे गये थे। यहाँ नगर के बाहर दर्जनों तंबू लगे थे। मोटरकारें, लारियाँ घोड़ेगाड़ियाँ और तरह तरह की सवारियाँ खड़ी थीं। गृहपति लोगों के घर मेहमानों के लिये पर्याप्त नहीं थे। वृक्षों की छाया के नीचे लंबी मेजें लगी थीं, जिन पर तरह तरह की मिठाइयाँ और फर्गाना के अत्यन्त स्वादिष्ट फल मेहमानों के लिए सजाये हुए थे। यह वही प्रदेश है, जहाँ सभी जातियों के हजारों किसानों ने मिलकर लड़ाई के दिनों में फर्गाना महानहर खोदी थी।

नगाड़ों और भोंपुओं ने आवाज दी। चार दिन का महोत्सव आरंभ हुआ। मध्य एसिया में घुड़दौड़ के बिना कोई महोत्सव पूरा नहीं समझा जा सकता, इसलिए आरंभ घुड़दौड़ से हुआ। इस घुड़दौड़ में बड़ी चतुराई की आवश्यकता होती है। दौड़ते घोड़े से झुककर भूमि से विजय-चिह्न को उठाना पड़ता है। पहले तो उठाने में ही मुश्किल है। उठाकर जब सवार निर्णायकों की तरफ भागना चाहता है, तो दर्जनों सवार छीनने के लिए उस पर टूट पड़ते हैं। कभी कभी तो मालूम होता था, इन दौड़ते घोड़ों की बाढ़ कहीं दर्शकों के घेरे के ऊपर न आ पड़े। लेकिन आखिरी क्षण में सवार घूम जाते हैं और दर्शकों के मुँह पर खुरों से उठी थोड़ी धूल भर पड़ जाती। लोग अपनी अपनी भाषा में सवारों को शाबाशी दे रहे थे।

जनता की सहानुभूति एक बहुत ही कुशल सवार अहमद जान शरीफोफ् की ओर थी। वह कई सालों से इलाके के एक प्रमुख कलखोज का प्रधान और अखिल सोवियत् पार्लमेंट का सदस्य है।

घुड़दौड़ खतम हुई, लेकिन विजय-माला एक बिल्कुल अपरिचित तरुण के गले में पड़ी। अब भोज आरंभ हुआ। दुंबे के मांस का स्वादिष्ट पुलाव, कबाब, हलवा और कितनी मिठाइयाँ सामने थीं। कितने ही दोस्त बहुत देर से

मिले थे और खाने से अधिक उनका ध्यान बात करने पर था। ताशकन्द युनिवर्सिटी के विद्यार्थी—महोत्सव-निमंत्रकों के लड़के-लड़कियाँ एक जगह बैठी हुई थीं और उनके साथ अश्काबाद (तुर्कमान) और फ्रुंजे (किरगिज) टेकनिकल कालेज की छात्र-छात्राएँ भी डटी हुई थीं। वह परीक्षा के बारे में बात कर रहे थे, और सयाने लोग चारजूय-कुनग्रद रेलवे-लाइन की बात कर रहे थे—आमू-दरिया के बायें तट पर अवस्थित चारजूय स्टेशन से कराकल्पक स्वायत्त-प्रजातंत्र की राजधानी को मिलाया जानेवाला है। निश्चय ही यह एक बड़ी चीज है और कराकुम रेगिस्तान को एक दूसरे पच्छ को चीरा जानेवाला है। तुर्कमान और उज्बेक खास तौर से इसमें दिलचस्पी ले रहे थे, क्योंकि दो तीन महीने बाद ही उन्हें हजारों की तादाद में सहायता के लिए आना था। किरगिज और ताजिक एक दूसरी बात में लगे थे। किरगिज चू नदी से नहर निकालकर ७० हजार हेक्तर (१।। लाख एकड़) खेत बयाबान में ओंतने में लगे हुए हैं, और ताजिक अपनी वख्श उपत्यका की नहर निकालकर कुल उपत्यका को अमृत उपत्यका के रूप में परिणत कर चुके हैं। दोनों की दिलचस्पी एक तरह की थी।

बात एकाएक बंद हो गई, जब कि तंबूरे और दोतार की आवाज सुनाई दी। चारों ओर मेजों का घेरा था। इसी के बीच में स्तालिनाबाद से निमंत्रित कलाकार आकर उपस्थित हुए। उन्होंने अपना एक राष्ट्रीय नृत्य कपास नृत्य दिखलाया। उसके बाद कितने ही साधारण किसान नर्तक-नर्तकियाँ अखाड़े में उतरीं। बख्शियों (लोक गायकों) ने अपने लोकगीत और वीर गाथाएँ सुनाईं।

पहले दिन का तमाशा कनीबादाम के नगरोद्यान में कुश्ती के दंगल के साथ समाप्त हुआ। दर्जनों पहलवानों ने विजय सम्मान के लिए मुकाबला किया, लेकिन अंत में विजय ताजिक तरुण दौलत मुहम्मद जानोफ को मिली। उसका गाँव कनीबादाम से ८० किलोमीटर दूर पहाड़ में अवस्थित वारकोह है।

कमूना कलखोज का प्रधान तुर्दी बेर्दियेफ् अपने एक रूसी मेहमान को निमंत्रित करके ब्यारू के लिए अपने घर ले गया। प्रधान का घर सोवियत्-प्राच्यीन की कई जातियों के मेहमानों से भरा था। उनमें दो आजुरबाइजानी थे, और बाकू के पास अपने गाँव से ताशकंद इसलिए आए हुए थे, कि आजुरबाइजान और उजबेकिस्तान के कपास के कलखोजों में १६४७ के लिए समाजवादी होड़ के कागज पर हस्ताक्षर किया जाय। मेज पर करातपा की प्रसिद्ध अंगूरी मधुशाला की चमकती बोतलें रखी थीं और चषक के साथ लोगों की जबान भी चल रही थी। कभी मध्य-एसिया के पहलवानों के दाव-पेंच की बातें होतीं और कभी अपने वीरों की महायुद्ध में बहादुरी का जिक्र। सभी जातियों के ऐसे राष्ट्रीय वीर थे, जिन्होंने मास्को, लेनिनग्राद, स्तालिनग्राद और उत्तरी काकेशस के युद्धों में अपना पराक्रम दिखलाया था।

कोई बोल उठा—"इस युद्ध की तरह प्राची ने कभी अपने गौरव का परिचय नहीं दिया।" फिर लोगों ने पुराने जमाने की बातें शुरू कीं। कैसे जारकी सरकार पूर्वी जातियों को हथियार बाँधने की इजाजत नहीं देती थी। कैसे हम लोग आपस में लड़ा करते थे और जार शाही सरकार सदा आग में घी डाला करती थी। बर्दियेफ ने रूसी जन के नाम पर टोस्ट का प्रस्ताव करते हुए कहा—"सोवियत् सरकार ने हम सबको मिलाया और रूसी जनता ने मध्य एसिया के भाग्य को पलटा दिया।" सभी मेहमानों ने उच्च स्वर से समर्थन करते हुए वहाँ मौजूद एकमात्र रूसी मरिया मुकिना—कनीबादाम फल कारखाना की इंजीनियर—का अभिनन्दन किया। बेचारी मरिया संकोच के मारे दबी जा रही थी।

आज सारे मध्य-एसिया की भिन्न-भिन्न जातियों में भ्रातृ-भाव का समुद्र लहरें मार रहा है। यहाँ ताजिक और किरगिज ताशकन्द युनिवर्सिटी में पढ़ते हैं। तुर्कमानिस्तान के प्रसिद्ध गलीचा-बुनक नम्दा बनानेवाले कजाकों को अपना

गुन सिखलाते हैं, और उज्बेक कारखाने सारे मध्य एसिया के लिए खनिज खाद और कृषि-मशीन तैयार करते हैं।

११. कला और कविता

इस्लाम ने यद्यपि मूर्ति चित्र-कला, की तरह संगीत नृत्यकला को और भी नष्ट करने की कोशिश की, खास करके उसके जातीय रूप को; किंतु उसमें पूर्ण रीति से सफल क्या हो सकता था? लेकिन हाँ, वह उसके विकास में बाधा और उसे निकृष्ट रूप देने में अवश्य सफल हुआ। नृत्य-गीत छोकरों के कुरुचिपूर्ण बीभत्स नाच-मंडलियों में परिवर्तित हो गया, और केवल लोक-नृत्य और लोक गीत पहाड़ के कोनों में कहीं कहीं छिपे रह गये। सोवियत्-काल में इस कला को बहुत प्रोत्साहन मिला। होनहार तरुण ताजिकों ने रूसी गुरुओं से शिक्षा और प्रोत्साहन पाया। आज अस्तालिनाबाद, लेनिनाबाद जैसे शहरों में उनके अपने कितने ही थियेटर हैं, जहाँ ताजिक भाषा में राष्ट्रीय नाटक, कथकली और ओपेरा (पद्यनाटक) के अभिनय होते हैं। यह मंडलियाँ शहरों तक ही अपने कार्य-क्षेत्र को सीमित नहीं रखतीं, बल्कि समय समय पर गाँव कलखोजों में भी प्रदर्शन करती हैं। ताजिक अभिनेताओं और अभिनेत्रियों का बहुत सम्मान है। वे पार्लमेंट की मेंबर चुनी जाती हैं। सरकार उन्हें उच्च से उच्च सम्मान प्रदान करती है और कवि उनकी प्रशंसा के गीत गाते हैं। एक ऐसा ही प्रशंसा गीत कवि सुहेली जवाहिरजादा ने ताजिकिस्तान के रंगमंच की प्रसिद्धता का रेना गालिबोवा के बारे में गाया है :

तेरा अभिनंदन है सुन्दर गुलाब,
गान में मस्त तू हुई बुलबुल,
तेरा अभिनंदन है स्मितवदने,
जिससे कि खुशी से फूला फूल।
अभिनंदन तेरी कार्य-कला का,
सदा रहे हर्षित प्रसन्न मन।

प्रसन्नलोचने, तेरी हो जय,
रहो चमकता सारी प्रसन्नता से,
हां बधाई है मन-साहसमय
तेरी जोशीलाशत-मदिरा घट से।
अभिनंदन तेरी कार्य कला का,
सदा रहे हर्षित प्रसन्न मन।
सुख युग तेरे लिए भाग्य ने,
किया सच्ची सेवा से है गुलाब,
अभिनंदन तेरी कार्य कला का,
सदा रहे हर्षित प्रसन्न मन।

वख्शु उपत्यका मूल से अमृत उपत्यका कैसे बनी, इसके बारे में पहले कह आये हैं। कवि सुहेली ने वख्शु-उपत्यका के नाम से एक कविता की है, जिसकी कुछ पंक्तियां इस प्रकार हैं :

थी भूमि जिसमें न होती कहीं
सिवा कंटकों के कोई और घास।
हरेक चीज के नीचे रहता था खार (काँटा),
बहुत जो हुआ तो था बिच्छू औ मार (साँप)।
सभी से अधिक थे हजारों ही साल
निवासी वहाँ भेड़िये औ शृगाल।
दहकती व चलती हवा लूह की,
सदा थी रहाइश बस उल्लूक की।
फिरा करते थे जहाँ चीता व बाघ,
अभी भी कड़ी और पाषाण से।
नहीं खोदता कोई खूँटा उसे;
अगर न बना हो वह फौलाद से।

सोवियत् मध्य-एसिया

कहूँ क्या जो मरुभूमि वहाँ पर रही,
भटकते वहाँ जो तो तुम जानते।
वहाँ कोई सुख का सहारा न था,
न सुख स्वच्छ का था किनारा वहाँ।
वहाँ थी सिरिफ बालुका वीथिया,
न झरना न हरितावली का था चिह्न।
बवंडर था धूलीका चलता सदा,
चला करता था अत्याचारों का चक्कर।
मेरे वर्गों से खेल थे खेलते,
मगर सोवियत-युग जब आया यहाँ।
सभी जुल्म की रस्सियाँ टूट गईं,
हुए नष्ट अन्याय कंटक सभी।
हुए शोक मूर्छित सभी मुफ्तखोर,
जगत में कम्युनिज्म आभा हुई।
हुए खुश हमारे जनों के भी दिल,
न कल खोज बनने लगे हर तरफ।
हुआ पस्त-दिल भी वहाँ साहसी,
मजूरों के दिल में हुआ जोश भी।
औ इससे किया काम सब जोर से।
यह सोवियत् अकेली ही इस काल में,
सभी जातियों की नमूना बनी।
थी कैसी वह अब और कैसी हुई,
कि इन्द्रोपवन की भी ईर्ष्या हुई।
वही मरु-भूमी हुई भद्र-बाग,
है आबाद लाभ प्रद फलगुना।

खड़े लहलहाते हरे पौध सब ।
खरा दे रही है य' उज्ज्वल कपास,
न थी देखने की जिसे जगको आस ।
तरक्की हुई है इसी वास्ते,
कि स्तालिन हमारा रहा रहनुमा ॥

१२. ऊपरी जरफ्शाँ की कायापलट

जरफ्शां की ऊपरी उपत्यका में मच्चाह का इलाका है। यह और पहाड़ी प्रदेश इतना दुर्गम रहा है, कि गृहयुद्ध के समय फर्गाना के बसमाचियों ने इसे अपना केन्द्र बनाया था। जुलाई १६३८ में प्रसिद्ध ताजिक कवि और लेखक रहीम जलील उधर गया और उसने सोवियत शासन ने वहाँ क्या किया, इसकी आँखों देखी बातें लिखीं :

मोटरकार पहाड़ की समतल सड़क पर शहरिस्तान के ऊँचे पहाड़ों के बीच से होती ऊपर की ओर दौड़ रही थी। दूर हिमाच्छादित पर्वत शिखर दिखाई दे रहे थे। गर्मी के सूर्य की किरणें उन पर पड़ रही थीं और वे चांदी की तरह चमक रहे थे। सड़क की दोनों तरफ पहाड़ के सानुओं और दर्रों में बहुत से गांव थे, जिनमें अर्चा (देवदार) के दरख्त लगे हुए थे। कहीं कहीं अनगिनत भेड़ें चर रही थीं।

मोटरकार गांव के नजदीक पहुंची। यहां दाहिनी तरफ एक इमारत थी। यह नानबाई-खाना (भोजनालय) था। सड़क बनाते समय यहां कमकरों के लिये नरम नरम और गरम रोटियां तैयार की जाती थीं। अब यहां चरवाहे रहते हैं। हमारा कारवां यहां ठहर गया। मोटर के इंजन में पानी डाला गया। "आसमान से होकर आने की जरूरत है"—ड्राइवर ने हँसते हुए कहा। हां बहुत ऊंचा है, पैदल इस ऊंचाई पर चलते हर कदम पर सांस लेनी पड़ती और कम से कम पूरा दिन यहाँ पहुँचने में लगता।"

हमारी मोटर वहां दियासिलाई की डब्बी सी मालूम पड़ती थी। ऊपर-नीचे देखने पर मोटर सड़क एक सफेद रस्सी की तरह बल खाती दिखलाई पड़ रही थी।

हम फिर कार में बैठ गये। मोटर कदम-ब-कदम ऊपर चढ़ने लगी। प्रतिक्षण वह तेज और घनघना रही थी। उपत्यकाके संकरी होने से उसकी प्रतिध्वनि जोर की आ रही थी। ताजिक कहावत है "आदमी का हाथ गुलाब है" मैं इसमें 'स्वतंत्र' शब्द और जोड़ दूंगा और कहूँगा कि 'स्वतंत्र आदमी का हाथ गुलाब है" क्योंकि परिश्रम स्वतंत्र न होने पर आदमी के लिये वह कष्ट और भार हो जाता है। स्वतंत्र परिश्रम गुलाब की तरह परिश्रमी पुरुष के दिमाग को सुरभित करता है। परिश्रम ने बोलशेविकों के संकल्प के साथ होकर संगरखारा के कलेजे को चीर डाला, नीले-हरे पाषाणों को तोड़ा और ताजिक देश की राजधानी से उज्बेक देश की राजधानी तक मोटर का रास्ता निकाल दिया। अभी तीन ही साल हुये हैं, जब पत्रों में निकला था; स्तालिनाबाद-ताशकन्द सड़क खुल गई।

आज सन् १९३८ की १० जुलाई को लेनिनाबाद (खोजंद) में काले चीरियों के नीचे, सिर-दरिया तट पर गर्म हवा के कारण आदमी पसीने-पसीने हो रहा है। और इसी वक्त इन पहाड़ों में फाहा-फाहा बर्फ गिर रही है। हमारे शरीर पर जाड़ों की पोशाक थी। जाड़ों की ठंडी हवा हमारे मुँह-आँखों पर थपेड़े लगा रही थी।

हम पहाड़ के सबसे ऊँचे स्थान पर पहुँच गये। यहाँ चार-एक किलोमीतर समतल भूमि थी। हम सब अब उतार में थे। इस वक्त पेट्रोल खर्च करना अपराध था। मोटर की आग बुझा दी गई।

ऊँचाई से नीचे ताजिकिस्तान की पर्वतस्थली की शोभा अनुपम थी :

मैदान विस्तृत, गुलाब और लाला से भरा,
गुलाब-शाखापर गान करती है बुलबुल।

पर्वत-शिखर से गिरता स्वच्छ निर्झर,

कल कल करते झरता और बहता।

प्रकृति ने अपने निपुण हाथों से इस स्थली को खूब संवारा है। मोटर टेढ़े-मेढ़े रास्ते से चली जा रही है। पास में सड़क से तीन मीतर ऊपर एक नया सुन्दर संसार दिखाई दे रहा है; हरे पत्तों और शाखाओं को फैलाये अर्चा के वृक्ष, जान पड़ता था, पांती से लगाये हुए हैं। दरख्तों के बीच से छोटी नहर बह रही है। वह ऊपर की तरफ एक बड़ी नहर से निकलती है। यह नहर कलकल करती कहीं भूमि के ऊपर और कहीं नीचे बह रही है। मैदानी वन में कहीं बुलबुलें चहचहा रही थीं और कहीं कोयलें कूक कर रही हैं साथ ही दूसरे पक्षियों का कलरव मिलकर संगीतानुष्ठान को पूरा कर रहा है। दृश्य धीरे-धीरे और सुन्दर होता जा रहा है। मोटर मानो यही देखने को और अधिक तेज दौड़ने लगी।

बरफ और पानी की वर्षा; फिर कहीं सूरज की धूप जिसमें तरह-तरह की शकल और सूरत के पत्थर दिखाई दे रहे हैं। कोई आकार प्रकार में हाथी सा, कोई कुत्ते-सा, कोई ऊँट-सा, तो कोई भेड़ सा लगता। दूर पहाड़ों पर भेड़ें चरती मालूम हुईं। इनके बारे में पुराने फर्गार (प्रदेशवाले) कहा करते—इस रास्ते से एक संत (औलिया) गुजरे, यहाँ आकर उन्हें भूख लग गई। उसी समय एक बर्रा (भेड़ का बच्चा) दिखाई पड़ा। संत ने उसे पकड़ कर कबाब बनाना चाहा; किंतु बर्रा भाग निकला। संत ने शाप देकर, पत्थर बना दिया।

धर्मप्राण महापुरुष को प्रकृति की सुषमा का कोई पता नहीं था। लेनिनाबाद के मंगोल-गिरिवाले अजगर पर भी इसी प्रकार की किंवदन्ती है: एक अजगर भेड़ को निगलने के लिये तैयार था, उसी समय एक सन्त आ गये, और उन्होंने दोनों को शाप देकर पत्थर बना डाला।

ऊँचाई बहुत पीछे छूट गई। मोटर एक चश्मे के किनारे आकर रुक गई। यहाँ पत्थर के कितने ही छोटे-छोटे घर थे। मोटर खड़ी होते ही सात-आठ बच्चे हमारे पास दौड़ आये। एक सुमुखी सुकेशी बालिका ने आकर मुझसे पूछा—"नया अखबार नहीं ले आये ?"

—अखबार क्या करेगी ?

—क्या करूँगी ! पढ़ूँगी।

—तू पढ़ सकती है ?

—हुर्, मैं पाँचवें क्लास में पढ़ती हूँ।

—नाम क्या है ?—मेरे एक सहयात्री ने उससे पूछ दिया।

—बिज्जत मुरादोवा। दही नहीं खाओगे ?—लड़की ने जवाब देते उलटे सवाल कर दिया।

—ले आ, खायेंगे।

—पहले अखबार दो।

हमने अखबार दे दिया। लड़की दौड़ती-दौड़ती एक घर की ओर गई और लकड़ी की कठौती में दही लाकर उसने हमारा आतिथ्य किया। मैंने पूछा :

दही के लिए कितने पैसे दूँ ?

—पैसा क्या करूँगी ? ना, नहीं, लूँगी—बिज्जत ने कहा।

इस जगह का नाम रवासे-सचत है। यहाँ के निवासी अहमताबाद तहसील के खिसेयूकति गाँव से अपनी भेड़-बकरियाँ लिये चले आये हैं। हमने उनसे "खैर-व-खुश" कहकर विदा ली। सूरज पहाड़ों की आड़ में छिप गया था, ठीक उसी समय हम खिसेयूकति गाँव पहुँचे। ओत (घाटा) से हमारा साथ देती आती नहर तरंगित जरफशां (सोग्द) में आ मिली। खिसेयूकति गाँव जरफशां के दाहिने तट पर अवस्थित है। इस वक्त गाँव में जर्दालू और शफ्तालू के पीले-

पीले फल वृक्षों में लगे हुए थे। कार खेतों से में होती जरफशां पार हो जहम-ताबाद के नजदीक पहुँची।

स्तालिनाबाद की सड़क हमारे दाहिनी तरफ रह गई, और हम पुल से जरफशजां पार कर पुराने फल्गर और वर्तमान जहमताबाद में पहुँचे। कहावत मशहूर है, "फल्गर संग (पाषाण) है, जमीन उसकी तंग है" उस समय फल्गर एक उजाड़ दरिद्र गाँव था। यहाँ एक मीनारवाली मस्जिद और बायों तथा पशु स्वामियों के कुछ घरों को छोड़कर और कोई अच्छा घर न था। फल्गर के कमकर मश्चाह के (मस्त-चाह) मजूरों की तरह एक टुकड़ा रोटी के लिए पहाड़ी जोतें पार हो दूर दूर के शहरों में मजूरी करने जाते :

बुलबुल बाग में रोती हुई आई,
गुलाब की सूखी डाली पर जाकर बैठी।
बुलबुल अपने मुँह से मुझसे बोली
"यह वियोग का घाव कितनों के दिल पर है॥"

हाँ, ठीक वह एक कौर रोटी के लिए, जारशाही अफसरों, स्थानीय बेगों, बायों तथा धर्मात्माओं के जुल्म से मुक्ति पाने के लिए घर-द्वार छोड़ने के लिए मजबूर होते। अधिकांश लोगों की यही हालत थी।

बोलशेविक इन उत्पीड़ित पहाड़ी कमकरों का सौभाग्य लौटाकर लाये और इनके लिये सुखी समृद्ध कलखोज तैयार किये। बहुत जहमत (परिश्रम) करके आबाद होने के कारण स्थान का नाम जहमताबाद पड़ा और अपमान-जनक नाम "फल्गर, फल्गरी" नेस्तनाबूद हो गया। जहमताबाद आज जरफशां नदी के तट पर एक छोटा सा नगर है। आजकल यहाँ आफिसों, स्कूलों की सुन्दर इमारतें बनी हैं, कई नये मकान बन रहे हैं। यह रायन (तहसील) का केन्द्र है और यहाँ से अपना एक अखबार निकलता है।

पहले जमाने में लोग ज्यादा नसकर तंग पहाड़ी पगडंडियों से

सैकड़ों ऊँचाई-नीचाई को पार करते प्राणों को हथेली पर रख जरफ्शां के हिलते पुल को पार हो दो दिन-रात की यात्रा के बाद फल्गर से मश्चाह पहुँचते और मार्ग की कठिनाइयों की शिकायत करते :

हे टेढ़े मेढ़े पथ ! मार डाला तूँ ने,
बीमार किया, मेरे दिल को चीर दिया।

उस वक्त के रास्तों में यदि पैर रखने में जरा भी खता होती, तो जरफ्शां नदी के खड्ड में गिर सदा के लिए बह जाना पड़ता। सैकड़ों मुसाफिर, हजारों चौपाए इस तंग और टेढ़े-मेढ़े रास्ते की बलि हुए।

लेकिन कम्युनिस्ट पार्टी ने लोगों से कहा "जहमताबाद से मश्चाह तक मोटर-सड़क निकालना है।" लोगों ने इस बात को माना और कमर बाँध कर काम शुरू किया। आज यह सड़क तैयार है और हर घंटे इस पर मोटरें छूटती हैं। लोगों ने जोत को सम्बोधन करके कहा :

हे जोत ! सुन हम आबाद हैं,
तेरी वह राह बर्फ-बारिश में भी,
जरफ्शां की गहरी और तीव्र वह धारा,
मोटर की राह नई हमने बनाई।

नदी-तट को सुशोभित करनेवाले बहुत से गाँवों को छोड़ते हम आबबुर्दन पहुँचे। यहाँ से मश्चाह-तहसील के गाँव शुरू होते हैं।

पुराने जमाने में आबबुर्दन के गरीब मजूरी करने दूर-दूर जाते और अपने ऊपर होते अत्याचारों और जीवन की कठिनाइयों का गिला करते गाते :

जगत के कर्त्ता तेरी विचित्र महिमा,
तेरे बन्दे सोए और तू खुद जागा।
अमृत-भोजन दुनिया के सामने फेंक,
चुनने और खाने का तू तमाशा देखता॥

इस तरह माते और स्त्री-बच्चों को लिये दर-बदर गदाई करते पागल बन मारे-मारे फिरते :

> अपने सफेदे के लिये अपने हिरन को खोया,
> लोगों के द्वार पर अपने को फेंका।
> लोग कहते कि तू दीवाना हुआ है,
> दीवाना हूँ, क्योंकि अपने यार को खोया।

महीनों और सालों वे अपने वतन को नहीं लौट पाते। उनके स्त्री-बच्चे जीवन के आनन्द से वंचित रह जाते। प्रोषित पतिका ग्रामीण स्त्रियाँ जीन की तरफ निगाह करके रोती हुई कहतीं :

> हे पथिक ? किसी के साथ मैं न हँसी,
> न केश धोया न कुर्ती पहना।
> बहुत से कारवाँ आये और पूछा,
> कहा : "मैंने न देखा न जाना" ॥

महान् समाजवादी क्रान्ति ने आज जुल्म और अत्याचार का नाम मिटा दिया है। मजूरों-किसानों की लाल सेना ने कमकर जनता की सहायता से बस-माचियों और बादशाह के अन्तिम अमीर अहमद खोजा ईशान का बोरिया-बधना बँधवा दिया। जनता जरफशां नद के बाग मैदान, जल जमीन की स्वामी बनी, संस्कृति यहाँ फूलने फलने लगी, कल-खोज संगठित हुए, जीवन मधुर और सुन्दर बना।

अत्याचार-पीड़िता स्त्री स्वतंत्र हो स्कूल में आई और उसने अपने अधिकारों को ले लिया। जनता ने उसके अधिकारों की हिमायत की :

> निमंत्रित करता हूँ सखी ! साथ लाता हूँ,
> आ, स्वतंत्र संसार को देख।
> दुश्मन को मार हमने सत्यानाश किया,
> मुल्लों के खुराचे अपने हक को ले।

ताजिकिस्तान प्रजातंत्र

मरग्वाब-उपत्यका की हरी-भरी चरागाहों में समाजवादी पशु-पालन उन्नत हो रहा है। बकरी के बच्चे एक पत्थर से दूसरे पत्थर पर फुदकने लग रहे हैं। पशु पाल खुश होकर गा रहा है :

हमारा राज अब है बीस-साला
कल खोजों का है यह भेड़ औ' गल्ला।

मरग्वाब की कमकर जनता अब गदाई नहीं करती। अब उसका जीवन सुखी है। सौभाग्य-संस्कृति उसके हाथ में लौट आई है। यह जीवन महान स्तालिन ने दिया है, जिसके लिए वह गाते हैं :

स्तालिन ने हमें यह जीवन दिया है,
नवीन पथ हमारा उसने खोला है,
जय साथी! पथ-दर्शक! जय!
हमारे ललाट पर कृपाहस्त तुम्हारा।

६३. स्तालिनाबाद

सोवियत् का यह सबसे तरुण नगर है। इसकी स्थापना १९२५ में एक छोटे से ताजिक ग्राम दोशम्बे में हुई थी। १९२९ में इसका सम्बन्ध रेल द्वारा कर दिया गया। यह नगर हिसार की अत्यन्त उर्वर उपत्यका में है।

जैसा ही यह नगर नया है, उसी तरह यह तेजी से बढ़ भी रहा है। १९२६ में इसकी जनसंख्या ६ हजार से कम थी, लेकिन १९३९ में बढ़कर ८३,००० हो गई और अब तो सवा लाख तक पहुँची हुई है। पुराने दोशम्बे में जल-कल, बिजली और पक्की सड़क का कहाँ पता हो सकता था? वर्षा में सड़क की कीचड़ से पार होना मुश्किल था। यहाँ न कोई कल-कारखाना था और नहीं कोई स्कूल और सांस्कृतिक संस्थायें ही।

आज स्तालिनाबाद कपड़े की मिलों और आहार के कारखानों का केन्द्र है। यहाँ रेशमी-सूती कपड़े की मिलें हैं। एक पोशाक-फैक्टरी है,

आटा मिल, नमदा जूता कारखाना, मांस बन्द करने का कारखाना और कितने ही गृह-निर्माण सामग्री की फेक्टरियाँ हैं। नगर के नजदीक वर्ज़ाब नदी पर १९३७ में पहला पन-बिजली स्टेशन बना। यही यहाँ के नगर और कल-कारखानो को बिजली देता है। मातृ मुक्ति युद्ध के समय एक और बड़ा पन-बिजली स्टेशन वर्ज़ाब नदी पर नगर सीमा के भीतर बनाकर चालू किया गया।

स्तालिनाबाद बड़ी तेजी से ताजिक सांस्कृतिक जीवन का केन्द्र बन गया है। प्रजातंत्र के कोने कोने से तरुण तरुणियाँ यहाँ की युनिवर्सिटी और टेकनिकल कालेजों में शिक्षार्थ आते हैं। नगर में ३ कालेज और ६ टेक निकल स्कूल हैं। इन संस्थाओं का पहले स्वप्न भी देखना संभव नहीं था। शिक्षा, साइन्स और जातीय-कला के इस केन्द्र में हर ५ निवासी में से १ किसी न-किसी शिक्षणालय में पढ़ता है। ताजिक भाषा में यहाँ से बहुत से दैनिक-साप्ताहिक-मासिक पत्र, और लाखो की तादाद में पुस्तकें छपती हैं, जो दूर-दूर तक दुर्लंघ्य पहाड़ों में पहुँचती हैं। यहाँ के वैज्ञानिक प्रतिष्ठान और प्रयोगशालाएँ कृषि और उद्योग के विकास के लिए अनुसन्धान करती हैं, पामीर और त्यान्शान् की प्राकृतिक सम्पत्ति की खोज करती हैं। साहित्यकार और इतिहासकार ताजिक-संस्कृति और इतिहास के बारे में गवेषणा करते हैं। नगर की चित्रशाला में चित्रो का एक अच्छा संग्रह है। यहाँ कई नाट्यशालाएँ हैं।

ताजिक राजधानी दुशाम्बिका नदी के बायें तट पर एक बहुत ही रम णीय स्थान में अवस्थित है। नगर की एक ओर नदी है और दूसरी ओर हिसार की पर्वत-माला। नदी के किनारे से पहाड़ की जड़ तक सीढ़ियों की तरह नगर बसा हुआ है। नगर के हर कोने से हिमाच्छादित शिखर और विस्तृत हिसार-उपत्यका दिखलाई देती है।

राजधानी में पत्थर के नये महलों और कार्यालयों का निर्माण आरम्भ

गति से चल रहा है। सड़कें चौड़ी और सरल-रेखा में चली गई हैं। उनके दोनों किनारे छायादार वृक्षों की पंक्तियाँ हैं और पास में जल-कुल्याएँ बहती हैं। नगर और उपनगर में बहुत से नगरोद्यान, अंगूर और मेवों के बाग हैं। गर्मी की तपती धूप में यह नगरी हरियाली से ढँकी रहती है।

१४. लेनिनाबाद

ताजिकिस्तान का यह सबसे पुराना शहर है, जिसे पहले खोजन्द कहा जाता था। महान् लेखक सदरुद्दीन ऐनी ने अपनी एक यात्रा (१६३६) में लेनिनाबाद के काया-पलट का एक चित्र खींचा है। तब से ११ साल हो गये हैं और सोवियत् के ११ साल के परिवर्तन में युगों का काम होता है। तब से लेनिनाबाद की जन-संख्या भी बढ़कर लाख से अधिक हो गई, कल-कारखानों और शिक्षण-संस्थाओं की भी संख्या बढ़ी है।

प्राचीन खोजन्द और आज-कल का लेनिनाबाद ताजिकिस्तान के उत्तर के एक बहुत ही आबाद इलाके में सिर-दरिया के किनारे बसा है। नदी-द्वय (सिर-दरिया और आमू-दरिया) भूमि या मध्य-एसिया के अन्तर्वेद की प्राचीन काल में यहीं सीमा थी। प्राचीन काल में चीन से यूरोप जानेवाला वणिक-पथ यहीं से होकर जाता था। नगर के दक्षिण-पश्चिम सजल गिरि-शृङ्खला है, जहाँ से बहती हुई नदियाँ नगर और इलाके को सिंचित करती हैं। नगर की एक तरफ सिर-दरिया एक विशाल मत्स्य की तरह लहराता हुआ बह रहा है। नदी के दाहिने तट पर करामजार और कान्साय के पर्वत हैं, जिनकी अपार खनिज-सम्पत्ति प्राचीन काल से प्रसिद्ध है। यहीं पास में सोवियत् की बाहरी दुनिया की एकमात्र ज्ञात उरानियम् की खान है।

ऐसे सुन्दर प्राकृतिक दृश्यों के बीच बसा यह नगर अपनी सुन्दरता के लिए इतना प्रसिद्ध था, कि इतिहासकारों ने इसे "दुनिया की दुलहन" कहा। लेकिन प्राचीन काल की इसकी समृद्धि और सौन्दर्य ने इसे और यहाँ के लोगों

को सदा जुल्म और अत्याचारों का रंगमंच बना दिया। इसे बाहर के आक्रमणकारी बर्बाद करते और यहाँ के धनी सामन्त तो सदा ही गरीबों का खून पीकर हरे भरे रहते। ईरानी सम्राट कोरोश ने ईसा पूर्व छठी सदी में यहाँ कोरोशपुरी बसाई। फिर सिकन्दर ने ३२९ ईसा पूर्व में पहुँचकर इसे सिकन्दरिया का नाम दिया। १३वीं सदी के प्रथम पाद में चंगेजखान ने इसे बर्बाद किया। उस समय यह सुल्तान मुहम्मद ख्वारेज्मशाह के हाथ में था, जिसके हाकिम तैमूर मलिक ने बड़ी बहादुरी के साथ चिंगिज का मुकाबला किया। जब उसने नगर को सुरक्षित नहीं समझा, तो सिर दरिया के बीच एक टापू में शरण ली। वह दिन को ही नहीं लड़ता रहा, बल्कि रात को नावों पर चढ़ मंगोल सेनाओं पर आक्रमण करता। मंगोल जब उसे परास्त न कर सके, तो उन्होंने अपने ५ हजार सवारों को बढ़ाकर २० हजार किया और उसके साथ ५० हजार पैदल सेना भी कर दी। लेकिन यह बड़ी सेना द्वीप में नहीं पहुँच सकती थी। आखिर में पहाड़ से पत्थर ढो ढो नदी में गिराने का काम शुरू हुआ। रक्षा का कोई उपाय न देख नदी की दोनों तरफ से घिरा तैमूर मलिक अपने कुछ आदमियों के साथ नाव से नीचे की तरफ चल पड़ा। मंगोल सेनाओं ने दोनों किनारों से उसका पीछा किया। उसके सारे साथी मारे गये, लेकिन वह स्वयं बच निकला। ख्वारेज्म पहुँचने पर मालूम हुआ, कि सुल्तान मुहम्मद हार कर भाग चुका है। तैमूर मलिक कितने ही समय तक शाम और अरब में भटकता फिरा। कई साल बाद वतन लौटा। अब तक मंगोलों का दृढ़ शासन यहाँ स्थापित हो चुका था। मंगोलों को जब इस वीर का पता चला, तो पकड़ मँगाया और ऐसे भयानक शत्रु का जीना अपने लिए खतरा समझा। उन्होंने उसे मरवा डाला। चिंगिज वंश भी यहाँ राज्य करता रहा, फिर तैमूर लंग और उसके खानदान के हाथ खोजन्द गया। तैमूर वंश के बाद शैबानियों ने इसे लिया और अन्त में बुखारा के मंगीतवंशी अमीरों ने। एक के बाद एक राजवंश आते रहे और हर राजवंश के परिवर्तन के बाद खोजन्द का खून और आग से स्वागत होता

रहा । निवासियों ने कई बार अमीर-बुखारा की सेनाओं को मार भगाया । अन्त में जारशाही साम्राज्य का पूरब में विस्तार होते होते, उसकी सेना ने ताशकन्द जीतते हुए ६ जून, १८६६ को खोजन्द ले लिया । तब से फर्गाना और खोजन्द पर जार का झण्डा फहराने लगा । रूसी सौदागरों ने यहाँ डेरा डाला । काजी, मुल्ला और ईशान (पीर) पहले ही से गरीबों को तबाह किये हुए थे । उनका अत्याचार अब भी वैसा ही बना रहा । खोजन्द में कितने ही मदरसे, मसजिदें मजार (समाधियाँ) और कारखाने (कुरानरी पाठालय) थे, जहाँ ईशान, मुल्ला, शेख और तुरा बैठे मौज कर रहे थे ।

उस समय शहर के कूचे तंग और टेढ़े मेढ़े थे । जाड़ों में सड़कों पर कीचड़ उछलती और गर्मियों में धूल उड़ती । अधिकतर मकान भी उजड़े और कच्चे होते, लेकिन हर महल्ले में एक दो तड़क भड़कवाली हवेलियाँ भी होती थीं । रूसियों ने अपने लिए बाहर एक नया नगर बसाया था, जहाँ रूसी हाकिम और पादरी रहा करते थे ।

शहर के नजदीक कुछ ऊँची सी जमीन पर एक किला बना था । यहीं सिकन्दर, अरब, कराखानी, ख्वारेज्मशाही, चिंगीजी, तैमूरी, शैबानी, फिर बुखारी और कभी खोजन्दी शासकों के हाकिम रहते और लोगों पर कठोर शासन करते । जारशाही जमाने में भी इसी किले में रूसी फौज रहा करती थी । खोजन्द इसी तरह का "दुनिया का दुलहिन" था । फिर १९१७ की क्रान्ति आई, और उसने खोजन्द को वस्तुतः "दुनिया की दुलहिन" बनाया ।

ऐनी ने खोजन्द को महाक्रान्ति के पहले भी कई बार देखा था और उसके बारे में पुराने इतिहास-ग्रन्थों को भी पढ़ा था । लेकिन जब सितम्बर १९३६ में वह लेनिनाबाद (खोजन्द) पहुँचे, तो उसकी हालत बिल्कुल दूसरी थी । स्टेशन से नगर तक पक्की सड़क बनी हुई थी । उसके किनारे जहाँ पहले सूखा बयाबान था, अब कपास के कलखोज आबाद थे । सड़क की दोनों तरफ

शहर से दूर तक सूती रेशमी कपड़े की मिलें, फलों के कारखाने, स्कूल, शिशु-शालाएँ और आलीशान की इमारतें खड़ी थीं। वहाँ कई दस साल के (हाई) स्कूल थे, जिनमें एक रूसी भाषा का और दूसरे ताजिक भाषा के थे। ताजिक स्कूलों में भी लड़कियों-लड़कों के अलग-अलग स्कूल थे। इनके अतिरिक्त कितने ही प्रारम्भिक स्कूल दिखाई पड़े। तरह-तरह की चीजों से सजी दूकानों से सड़कें सुशोभित थीं। नगरोद्यान, लाल-मैदान, होटल, लाल चायखाना आदि कितने ही मौजूद थे। अब लेनिनाबाद दर-असल आबाद है। ऐनी शाही (रेशम) बुनने के बड़े कारखानें में गये। शाही कपड़े सदियों से मध्य-एसिया में बुने जाते थे, लेकिन वह हाथों से थोड़े परिमाण में तैयार होते थे। आज वह सारा काम नवीनतम मशीनों से होता है। वहां सैकड़ों नर-नारी तरुण तरुणी ताजिक कारीगर काम करते हैं। ये वही ताजिक हैं, जो पुराने जमाने में हाथ के करघा छोड़ और कुछ नहीं जानते थे। आज वह इन मशीनों को बड़ी चतुराई से चला रहे हैं। इस कारखानें में ८-८ घंटे की तीन बारी में कमकर काम करते हैं, लेकिन कारखानें के विद्यार्थी लड़के लड़कियाँ सिर्फ ४ घंटा काम करते हैं। ४ घंटा उन्हें क्लास में पढ़ना पड़ता है।

ऐनी फेक्टरी-स्कूल में उस वक्त गये, जब कि विद्यार्थी क्लासों में पढ़ रहे थे। इनमें से कुछ अनाथ लड़के दूसरे इलाकों से आकर यहाँ भर्ती हुए थे। कारखाना खिलाता-पहनाता ही नहीं, बल्कि उन्हें सिखा-पढ़ा भी रहा था, जिसमें कि वह आगे चलकर चतुर पटकार बन सकें। ये अनाथ बच्चे यहाँ अनाथ नहीं थे, उन्हें सोवियत-सन्तान होने का सौभाग्य प्राप्त था।

ऐनी फिर कारखानों की शिशु-शाला में गये। यहाँ कमकर स्त्रियों के दुधमुँहे तथा छोटी उम्र के बच्चे अपनी आयु के अनुसार अलग-अलग कमरों में मौजूद थे। उनका चेहरा खिला, शरीर स्वस्थ, पोशाक स्वच्छ थी। वे मिलकर खेल खेल रहे थे, गाना गा रहे थे। उनके खाने-सोने का बहुत अच्छा इन्तजाम था। झिझक और संकोच उनमें छू न गई थी, और किसी सवाल

का जवाब इतनी आसानी से देते थे, कि देखनेवाले आश्चर्यान्वित हो जाते थे। एक जगह कुछ छोटे छोटे बच्चे अध्यापिका के अधीन नाटक का तमाशा कर रहे थे। दूसरी जगह उन्हीं की नकल करते दूसरे बच्चे अपना नाटक जमाये हुए थे।

अध्यापिकाओं-संरक्षिकाओं का बर्ताव और सिखाने का ढंग बहुत ही मधुर है। बच्चों का उनसे कितना प्रेम हो जाता है, इसका मुझे एक विचित्र-दृश्य देखने को मिला। जिस वक्त मैं (ऐनी) शिशु-शाला में था, उसी समय कारखाने की प्रथम आठ-घंटी समाप्त हुई। कमकर माताएँ काम से छुट्टी पा बच्चों को लेकर घर पर जाने के लिये शिशु-शाला में आईं। ३-४ साल वाले बच्चों में अधिकांश अपनी माताओं के साथ जाना नहीं चाहते थे। वह "मैं यहाँ रहूँगा, घर नहीं जाऊँगा" कहकर रो रहे थे। शिशु-शाला के आमोदमय जीवन में वह अपनी माताओं को भी भूल गये।

शिशु-शाला सचमुच एक बहुत ही सुन्दर समाजवादी-परिवार है। वहाँ की संरक्षिकाएँ माँ की तरह बच्चों के साथ खेलती हैं। यहाँ के बच्चे एक परिवार के सहोदर बहिन-भाइयों की तरह रहते हैं। इसीलिये वे इसे अपना घर संरक्षिकाओं को अपनी माँ समझते हैं और वहाँ से अलग होना नहीं चाहते।

ये उन्हीं लड़कों में से थे, जो पुराने जमाने में अगर होते तो गरीबी, कदन्न भोजन, भूख और निराश्रयता के कारण बचपन ही में मर जाते।

लेनिनाबाद के जिस ताजिक हाईस्कूल को ऐनी देखने गये, उसका मकान नया-नया बना था। ऐनी को ही उसका उद्घाटन करना पड़ा। इसकी इमारत इतनी सुन्दर थी, जैसी कि मास्को ही में देखी जा सकती है। यह सच है कि ताशकन्द, समरकन्द और मध्य-एसिया के दूसरे शहरों में भी हाईस्कूलों और कालेजों की और भी बड़ी-बड़ी इमारतें बनी हैं; लेकिन किसी हाईस्कूल की ऐसी शाही इमारत मध्य-एसिया में दूसरी नहीं है।

ऐनी ने लड़के-लड़कियों को क्लास में पढ़ते देखा । दोनों के स्कूल अलग अलग इमारतों में हैं । लड़कियों के अध्ययन के तरीके को देखकर ऐनी बहुत प्रभावित हुए । वह क्लासों में गये । १०-१२ साल की लड़कियाँ खूब समझदारी और ध्यान से पढ़ रही थीं, सभी स्वस्थ और उन्मुक्त दीख पड़ती थीं, सभी में पढ़ने की लगन थी । अध्यापक ने ऐनी के सामने उनसे पढ़े पाठों के बारे में कितने ही सवाल पूछे । शिष्याओं के उत्तर से मालूम होता था कि वे उसे अच्छी तरह समझती हैं । यह भी मालूम हुआ, कि वहाँ पहले की तरह ट्रेनिंग पाये अध्यापक-अध्यापिकाओं का अभाव नहीं है ।

ऐनी को वहाँ लेनिनाबाद के जवान कमसोमोलों की सभा में जाना पड़ा । कई कमसोमोलों (तरुण) ने एक के बाद एक आकर व्याख्यान दिया । ऐनी ने देखा, कि उनकी भाषा के स्थानीय उच्चारण और शब्द बदल गये हैं । वे बेरोकटोक साहित्यिक-भाषा में बोलते हैं । पहले लेनिनाबाद के ताजिक कुछ ऐसे शब्दों और उच्चारणों का इस्तेमाल करते थे, जिसे सुनकर लोगों को हँसी आ जाती थी । लेकिन शिक्षा ने अब उन्हें आगे बढ़ा दिया है ।

ऐनी एक संगीत विद्यालय में भी गये । वहाँ गुणी गायक और वादक शिक्षा देते हैं । देखकर आश्चर्य होता था कि कैसे वही पुराने दुतार, तम्बूर, चंग, गिज्जक, वंशी, डफ आज इतनी अच्छी तरह यूरोपीय बाजों के साथ मिलकर सुन्दर स्वर-तान निकाल रहे हैं । ऐनी ने और भी कितनी ही बार मिश्रित वाद्यमण्डली को सुना-देखा था, लेकिन वहाँ संगीत का जातीय रूप लुप्त सा हो जाता था, किन्तु यहाँ वह जातीय-संगीत के रूप को सम्भाले हुए, बहुत अच्छे ढंग से बजाये जा रहे थे ।

लेनिनाबाद का एक रमणीय दृश्य है नगरोद्यान । यह सुन्दर बाग सिर (सैहूँ) दरिया के किनारे अवस्थित है । नीचे की ओर सैहूं की

सुन्दर धारा बहती है और बाग में सुन्दर वृक्ष, तरह-तरह के फूल और हरी घासें लगी हुई हैं। पुराने जमाने में यहीं जहाँ कि यह बाग लहलहा रहा है —बैठकर हाकिम लोग गरीबों के प्राण धन को हरने के लिये हस्ताक्षर किया करते थे। १९१६ के विद्रोह में यहीं स्वतंत्रता के भक्तों को गोली मारी गई। आज यह स्थान चमन—समाज-वादी पुष्पोद्यान—है। आज यहाँ पहले युग के गुलाम, कमकर अपने बच्चों-बीबियों को ले सैर करने को आते हैं, और जगह जगह पड़ी कुर्सियों पर विश्राम करते हैं।

सचमुच ही आज लेनिनाबाद "दुनिया की दुलहिन" बना है। आज यहाँ सभी जगह सुख और प्रसन्नता देखी जाती है।

१५. देश प्रेम की कवितायें

ताजिक कवि रहीम जलील और म. अ. [illegible] नज लेनिनाबाद पर एक छोटी सी कविता लिखी है, जिसकी कुछ पंक्तियाँ हैं :

आ लेखनी, वाणी आरम्भ कर,
इस पथ पर चलना आरम्भ कर।
खोजन्द की पुरानी घटनाओं को चित्रित कर,
खोजन्द के उस युग की कालिमा को।
वह युग, जो सबके सिरों पर बीता,
सिर से पैर तक अजब अभागा युग था।
उस पापी युग में दुर्भाग्य के सिवा,
कमकर पुरुषों ने कुछ नहीं देखा।
उन युगों में अत्याचार के सिवा,
खोजन्द के कमकरों के ऊपर कुछ न आया।
अमीर जालिम और अत्याचारी थे,
वज़ीर अन्यायी और निर्लज्ज थे।...

किसान की जमीन में काँटे और घास,
जोतने पर भी उससे पेट न भरता।
खेत धनियों के हाथ में थे,
वह जुल्म और अत्याचार किया करते।
सिकन्दर ने बहुत दिन राज्य किया,
ज़ुल्म और अन्याय का द्वार खोल दिया।
उसके बाद सोग्दी शासक हुए,
कमकरों की गर्दन में हाथ डाल दिया।
सात सौ बत्तीस के सन में,
उससे भी दुर्भाग्य सिर पर आया।
अरब के गाज़ी आ पहुँचे,
ग़रीबों की जान को कण्ठ तक पहुँचा दिया।
खूनी, अन्यायी इन ग़ाज़ियों ने,
ज़ुल्म की तलवार को चमकाया।
एक तरफ खड्ग और एक तरफ तीर था,
एक तरफ दीन और ईमान का प्रचार था।
गाज़ी हो उन्होंने मृत्यु-बीज बोया,
ग़रीबों पर धरम का विष छिड़का।
अपने साथ रोज़ा नमाज़ ले आये,
तराबीह, तसबी, हज, ज़कात लाये।
यह सब मुफ्तखोरों का हथियार था,
जिसे चतुर धर्मियों ने इस्तेमाल किया।
सभी की आँखें जेब पर थीं,
का घर जलाते।...

ताजिकिस्तान प्रजातन्त्र

चिंगिज खाँ के खूनी पंजे से,
मेहनतकशों के शरीर चीरे गये।
उसके बाद तैमूरलंग के सिपाही,
जंग की आवाज आसमान तक ले गये।
खुदायार खोकन्द औ आकूता बेग,
जुल्म करते, नेकी को मारते।
यह देश बिलकुल पामाल हुआ,
सभी बरबाद और अवनतोन्मुख हुए।

× × ×

इस जुल्म और अन्याय के बाद,
इस उदासी और साँसत के बाद।
महान् अक्तूबर ने कमकरों को,
स्वतंत्रता दी, हस्तावलंब दो।
अँधेरी रात को प्रकाशमान उषा ने भगाया,
उद्यान में वासन्ती हवा चली।
इस दयार के सूखे वृक्ष,
पुष्प-वाटिका के मुर्झाये पौधे।
पत्तों वाले औ हर्षित हुए,
हरे भरे हो आपस में मिले।
अजब मनोरम यह चमन हुआ,
उससे प्राणन्तन को सुख मिला।
फिर से मुर्झाए फूल खिले,
बुलबुल चमन में जोड़ी-जोड़ी हुई।
मुँह खोली, नया संगीत निकला,
अधमरे शरीरों में नई जान आई।

अँधेरी रात हमारी खतम हुई,
सौभाग्य का प्रभात आनन्द देने लगा।
सिर से काले बादल दूर हुए,
आकाश साफ और प्रकाशपूर्ण हुआ।
जुल्म और अत्याचार की जड़ उखड़ गई,
सरकशों के सिर जमीन पर झुक गये।

उसी तेज आग से घास औ काँटे,
जलकर मुट्ठी भर राख रह गये।
कल के इस भूमि के ध्वंस,
लेनिन की किरण से आलोकित हुए।

पूर्व का सूरज यहाँ चमका,
डाकुओं की जड़ उसमें जल गई।
अजब युद्ध था जिसने दुनिया में,
जुल्म की जड़ को उखाड़ फेंका।

उत्पीड़ित जनता को स्वतन्त्रता दी,
उनके लिए सौभाग्य का रस्ता खोला।
किसानों को पानी औ जमीन दी,
जमींदारों से उन्हें मुक्त किया...

स्त्रियाँ जो पहले जमाने में,
अपमान की तलवार के नीचे कराहती थीं।
मर्दों की अभागी दासियाँ थीं,
मानव-जीवन से वंचित थीं।
जाल में फँसी चिड़ियों जैसी,
सदा निगड़ित और पामाल थीं।

अज्ञानान्धकार में डूबी थी,
किसी का अच्छा शब्द नहीं सुन पाती थी।
युगों तक पुरुषों के आधीन रही,
उनके सिर पर रंज और गम रहा।

धर्मवादी बेईमान कुरान की,
आयत से दीन की शिक्षा देते।
कि, "नारीकी अकल छोटी, बड़ी चोटी"
उसका सिर पतियों की भेंट है।

किन्तु क्रान्ति ने उन्हें मुक्ति-मार्ग बतलाया,
शहर और देहात की मजदूर औरत,
अब कल-खोजों और,
कारखानों के काम में हैं।
उन्होंने बहुत सुख-समृद्धि पाई,
कालखोज में खुशी पाई॥

४० अमीनजादा की देशभक्ति की दो कविताओं का यहां अनुवाद देते हैं, जिनमें पहली "सौभाग्य प्रात" इस प्रकार है :

सौभाग्य प्रात इस देश में दिखाई दे रहा,
हमारे सिर पर भाग्य सूर्य है प्रकाशमान।
अकबाल के चश्मोंने इस भूमि में पानी दिया,
खिलफूल आबाद, हरा-भरा बाग हो गया।
परिश्रम का हाथ स्वतंत्र हुआ,
इस बाग में सैकड़ों गुलजार हँसने लगे।
दुनिया में हर एक सौभाग्य-सन्तान,
ज्ञान और विद्या के मेवों से सफल हुई।

तख्त उलटा, ताज गिरा सुनहला जामा फट गया,
जुल्म का घर जड़ से नष्ट हो गया।
शाहों अमीरों के महलों के ध्वंस पर,
यह तजिकिस्तान उपवन पैदा हुआ।

"राष्ट्र-गीत"

मेरा वतन असीम देश,
मुक्ति और आशा का आधार।
दुनिया में मानव न देखे स्थान,
इस तरह का प्रसन्न-जीवन।

हर तरफ आबाद हम औ' खुश,
हर जगह काम के लिए जोश औ' खरोश।
यहाँ बेकारी नहीं देखी जाती,
श्रम यहाँ सम्मान है।

हर तरफ नमनाभाव बह रहा,
मूल्यवान लाभ आ रहा है।
चाँदी जैसे कपास के फूल,
सोने जैसे गेहूँ की बालियाँ।

मेरा वतन असीम देश,
मुक्ति और आशा का आधार।
दुनिया में मानव न देखे स्थान,
इस तरह का प्रसन्न जीवन।

मास्को के दूर के कोने तक,
दक्षिण से उत्तर की बरफों तक।
मानव यहाँ स्वयं देश का स्वामी,
अवसाद-हीन मुल्क औ' वतन।

सोवियत मध्य एशिया
पश्चिमी कज़ाख़स्तान
उत्तरी कज़ाख़स्तान
पूर्वी कज़ाख़स्तान